जुलाई-दिसंबर वर्ष 30-31, अंक : 120-121 2024

July-December ISSN : 0976-0024

आज़ादी का अमृतकाल

भारतीय लोकतंत्र के पचहत्तर वर्ष : विशेषांक

महिला Mahila

विधि भारती
Vidhi Bharati

विधि चेतना की द्विभाषिक (हिंदी-अंग्रेजी) शोध पत्रिका

Research (Hindi-English) Quarterly Law Journal

(केंद्रीय हिंदी निदेशालय, शिक्षा मंत्रालय के आंशिक अनुदान से प्रकाशित)

ISSN 0976-0024

9 770976 002001

PEER REVIEWED REFEREED JOURNAL

प्रधान संपादक

सन्तोष खन्ना

संपादक

डॉ. उषा देव

जगदीश चंद चौहान

पत्रिका में व्यक्त विचारों से सम्पादक/परिषद् की सहमति आवश्यक नहीं है।

Indexed at Indian Documentation Service, Gurugram, India

Citation No. MVB-30-31/2024

विधि भारती परिषद्

बी.एच./48 (पूर्वी) शालीमार बाग, दिल्ली-110088 (भारत)

मोबाइल : 09899651872, 09899651272

E-mail : vidhibharatiparishad@hotmail.com, santoshkhanna25@gmail.com

Website : www.vidhibharatiparishad.in

PEER REVIEWED REFEREED JOURNAL

'महिला विधि भारती' पत्रिका (पूर्व यू.जी.सी. की सूची में भी शामिल, क्र. 156, पत्रिका संख्या 48462)
विधि चेतना की द्विभाषिक (हिंदी-अंग्रेज़ी) विधि-शोध त्रैमासिक पत्रिका

E-mail : vidhibharatiparishad@hotmail.com

Website : www.vidhibharatiparishad.in

वर्ष 30-31, अंक : 120-121, (जुलाई-दिसंबर, 2024) **आज़ादी का अमृतकाल**
भारतीय लोकतंत्र के पचहत्तर वर्ष : विशेषांक

प्रधान संपादक : सन्तोष खन्ना **संपादक :** डॉ. उषा देव, जगदीश चंद चौहान

बोर्ड ऑफ रेफरीज़ एवं परामर्श मंडल

1. डॉ. के.पी.एस. महलवार : चेयर प्रो., प्रोफेशनल एथिक्स, नेशनल लॉ यूनिवर्सिटी, न.दि.
2. डॉ. चंदन बाला : पूर्व डीन एवं विभागाध्यक्ष, विधि विभाग, जयनारायण व्यास वि.वि., जोधपुर
3. डॉ. राकेश कुमार सिंह : पूर्व डीन एवं विभागाध्यक्ष, फैकल्टी ऑफ लॉ, लखनऊ विश्वविद्यालय
4. डॉ. किरण गुप्ता : पूर्व विभागाध्यक्ष, फैकल्टी ऑफ लॉ, दिल्ली विश्वविद्यालय
5. डॉ. सुरेंद्र यादव : निदेशक, स्केल विधि महाविद्यालय, अलवर, राजस्थान

परिषद् की कार्यकारिणी, संरक्षक : डॉ. राजीव खन्ना

1. डॉ. सुभाष कश्यप (अध्यक्ष)
2. न्यायमूर्ति श्री लोकेश्वर प्रसाद (उपाध्यक्ष)
3. न्यायमूर्ति मंजू गोयल (उपाध्यक्ष)
4. श्रीमती सन्तोष खन्ना (महासचिव)
5. रेनू (कोषाध्यक्ष)
6. श्री अनिल गोयल (सचिव, प्रचार)
7. डॉ. प्रेमलता (सदस्य)
8. डॉ. आशु खन्ना (सदस्य)
9. डॉ. पूरनचंद टंडन (सदस्य)
10. डॉ. संजीव कुमार (सदस्य)
11. डॉ. सूरत सिंह (सदस्य)
12. डॉ. के.एस. भाटी (सदस्य)
13. डॉ. शकुंतला कालरा (सदस्य)
14. डॉ. उमाकांत खुबालकर (सदस्य)
15. अनुरागेंद्र निगम (सदस्य)
16. डॉ. उषा देव (सदस्य)

शुल्क दर

इस विशेषांक का मूल्य 250/-- रुपए

वार्षिक शुल्क 800/-- रुपए

संस्थागत वार्षिक शुल्क 800/-- रुपए

आजीवन शुल्क 6,000/-- रुपए

संस्थागत आजीवन शुल्क 20,000/-- रुपए

डाक शुल्क अलग

सत्यमेव जयते

अध्यक्ष लोक सभा

SPEAKER LOK SABHA
INDIA

संदेश

मुझे यह जानकर अत्यंत प्रसन्नता हुई है कि विधि भारती परिषद, दिल्ली की त्रैमासिक पत्रिका 'महिला विधि भारती' का विशेषांक 'भारतीय लोकतंत्र के पचहत्तर वर्ष" प्रकाशित किया जा रहा है।

भारतीय लोकतंत्र विश्व का सबसे बड़ा लोकतंत्र है, जो अपनी विविधता में एकता और संविधान द्वारा प्रदत्त अधिकारों के संरक्षण का आदर्श उदाहरण प्रस्तुत करता है। पिछले 75 वर्षों में भारतीय लोकतंत्र ने अनेक चुनौतियों का सामना किया है, लेकिन समय के साथ-साथ इसी जड़ें और अधिक सशक्त और गहरी हुई हैं। विभिन्न राजनीतिक, सामाजिक और सांस्कृतिक विविधताओं के बावजूद, लोकतंत्र ने भारत के लोगों को एकजुट रखने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। यह लोकतंत्र की ताकत ही है कि आज हम एक समृद्ध, सशक्त और आत्मनिर्भर राष्ट्र के रूप में उभर रहे हैं।

मुझे विश्वास है कि यह प्रकाशन न केवल भारतीय लोकतंत्र के पचहत्तर वर्षों की गौरवशाली यात्रा एवं उपलब्धियों के बारे में जानकारी प्रदान करेगा बल्कि वर्तमान पीढ़ियों को लोकतांत्रिक मूल्यों और सिद्धांतों से अवगत कराते हुए उन्हें उनके कर्तव्यों और जिम्मेदारियों का स्मरण भी कराएगा।

मैं विधि भारती परिषद को उनके प्रयासों के लिए बधाई देता हूं और कामना करता हूं कि यह विशेषांक लोकतंत्र की महिमा को सजीव रखते हुए लोगों को प्रेरित करेगा।

विशेषांक के सफल एवं उद्देश्यपूर्ण प्रकाशन के लिए मेरी शुभकामनाएं।

ओम बिरला

(ओम बिरला)

प्रो. सुनील बाबुराव कुलकर्णी
PROF. SUNIL BABURAO KULKARNI
निदेशक
DIRECTOR

सत्यमेव जयते

भारत सरकार
GOVERNMENT OF INDIA
केंद्रीय हिंदी निदेशालय
CENTRAL HINDI DIRECTORATE
शिक्षा मंत्रालय
MINISTRY OF EDUCATION
(उच्चतर शिक्षा विभाग)
(DEPARTMENT OF HIGHER EDUCATION)

D.O. No.1-1/2024-25/Director

दिनांक – 14/11/2024

शुभकामना संदेश

शिक्षा कभी भी एकांगी नहीं होती। जीवन के प्रवाह में हम जो कुछ भी सीखते हैं ,इसका संबंध बहुविध होता है। यही कारण है कि नई शिक्षा नीति में अंतर अनुशासनात्मक तरीके से सीखने पर विशेष जोर दिया गया है। इस क्रम में उन रुचियों,कौशलों,क्षमताओं का भी विकास होता है जो सुप्त अवस्था में किसी कोने में पड़ी होती हैं। उचित प्रोत्साहन पाकर ये प्रतिभाएँ निखरकर सामने आती हैं। विधि एक ऐसा ही विषय है जिसका सीधा संबंध हमारे मानवाधिकारों की रक्षा से है। इस विषय पर केंद्रित विधि भारती परिषद से प्रकाशित होने वाली 'महिला विधि भारती' पत्रिका का भी उद्देश्य यही है। यह पत्रिका देश की जनता विशेषकर महिलाओं एवं कमजोर वर्गों को उनके कर्तव्यों,अधिकारों तथा कानूनों के बारे में सचेत करने के क्रम में बहुत महत्वपूर्ण कार्य कर रही है।आज जब केंद्र की लोककल्याणकारी योजनाओं का लाभ जन-जन तक पहुँच रहा है तो यह भी आवश्यक है कि लाभार्थियों के साथ किसी तरह का कोई अन्याय न हो। ऐसे में यह आवश्यक है कि उन्हें कानूनी सहायता भी उपलब्ध करवाई जाए। इस दृष्टि से इस पत्रिका की महत्ता और बढ़ जाती है। सही मायने में यह पत्रिका संवैधानिक मूल्यों की संवाहक और रक्षक है। आज इस तरह के पत्रिकाओं का प्रकाशन बहुत जरूरी है। मुझे इस पत्रिका के प्रकाशन को लेकर बहुत संतोष है। पत्रिका के प्रकाशकों को मेरी शुभकामनाएँ।

सु. बा. कुळकर्णी
14.11.24

(प्रो.सुनील बाबुराव कुळकर्णी)
निदेशक

पश्चिमी खंड-7, रामकृष्ण पुरम्, नई दिल्ली-110066 | WEST BLOCK-VII, RAMA KRISHNA PURAM, NEW DELHI-110066
011-20862475, 20862356 www.chd.education.gov.in dirchd-mhrd@gov.in sunilkulkarni38@gmail.com

अंक 120-121 में

1. सद्भावना संदेश -- 207
2. भारतीय लोकतंत्र के 75 वर्ष : एक विवेचन / **संपादकीय** -- 209
3. भारतीय लोकतंत्र के पचहत्तर वर्ष : चुनौतियाँ और उपलब्धियाँ / **डॉ. अर्चना प्रकाश** -- 219
4. भारत का प्रगतिशील समाज और विवाह-विच्छेद (तलाक) का रूढ़िवाद क़ानून : एक विधिक विश्लेषण / **प्रो. (डॉ.) राकेश कुमार सिंह** -- 222
5. भारतीय लोकतंत्र के 75 वर्ष की उपलब्धियाँ : एक मूल्यांकन / **डॉ. ममता चतुर्वेदी** -- 229
6. भारतीय लोकतंत्र के पचहत्तर वर्ष और कमजोर वर्ग के लिए आरक्षण / **सन्तोष खन्ना** -- 244
7. आजादी के 75 वर्ष और महिलाओं की राजनीतिक भागीदारी नारी शक्ति वंदन अधिनियम एक विस्तृत अध्ययन / **डॉ. (श्रीमती) विनय जैन** -- 251
8. वक्फ एक्ट / **डॉ. विदुषी भारद्वाज** -- 261
9. वाक्-स्वातंत्र्य और अभिव्यक्ति-स्वातंत्र्य का अधिकार : क्या और क्यों? / **देवदत्त शर्मा** -- 265
10. भारत में कामकाजी महिलाओं के संवैधानिक और कानूनी अधिकारों का एक संक्षिप्त अध्ययन / **डॉ. दुष्यंत कुमार एवं मंगला प्रसाद पटेल** -- 276
11. भारत में मानव अधिकार / **पुष्पा सिन्हा** -- 284
12. संविधान के अनुच्छेद 356 की उपयोगिता : एक विहंगावलोकन / **जगदीश चंद चौहान** -- 286
13. भारत के उच्चतम न्यायालय का इतिहास / **नेहा राठी** -- 291
14. भारतीय लोकतंत्र में महिला सशक्तिकरण / **डॉ. अंजलि दीक्षित** -- 295
15. कार्यस्थल पर मासिक धर्म स्वास्थ्य : मासिक धर्म अवकाश का विशेष अध्ययन / **डॉ. भूमिका शर्मा एवं प्रो. (डॉ.) कोमल विग** -- 302

16. भीड़ तंत्र और प्रतिपूरक न्यायशास्त्र का औचित्य / **डॉ. निशा केवलिया** -- 309

17. भारत में कंपनी विधि का अमृत काल / **डॉ. विपिन कुमार सिंह** -- 321

18. Justice Delayed is Justice Denied / **P.N. Kumar** -- 329

19. Women's Safety and Participation at Work Place / **Niti Nipuna Saxena** -- 336

20. Short Comings of the Fourth Estate Evaluating the Blemishes with Reference to India / **Monil Dhabhai** -- 346

संपादकीय

भारतीय लोकतंत्र के पचतहर वर्ष : एक संक्षिप्त विवेचन

'महिला विधि भारती' द्विभाषिक (हिंदी-अंग्रेजी) त्रैमासिक विधि शोध पत्रिका के सभी हितैषीजन के हाथों 'भारतीय लोकतंत्र के पचत्तहर वर्ष' विषय पर यह विशेषांक (अंक 120-121) सौंपते हुए हमें बहुत प्रसन्नता हो रही है कि यह पत्रिका अपने प्रकाशन के 120 वर्ष पूरे कर अपने अंक 121 के साथ इकतीस वर्ष में प्रवेश कर गई हैं क्योंकि इसकी समयावधि जुलाई से दिसंबर, 2024 है। मैंने इस संपादकीय में भारतीय लोकतंत्र के पचतहर वर्ष का लेखा जोखा देने का प्रयास किया है। हमारा पाठक वर्ग विहंगम दृष्टि से ही सही, इन पचतहर वर्ष के बारे में कुछ सीमा तक जान सकेगा। तो चलिए, इस यात्रा पर मेरे साथ चलिए।

15 अगस्त, 1947 को ब्रिटिश शासन ने चाहे अनिच्छुक रूप से ही सही, भारत को अंततः सत्ता का हस्तांतरण कर दिया। भारत के प्रथम प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू भारत की स्वतंत्रता की पूर्व संध्या पर नई दिल्ली में संसद भवन के केंद्रीय कक्ष में जब नियति से भेंट वाला भाषण देते हुए कह रहे थे कि जब आधी रात को सारी दुनिया सो रही होगी, भारत जीवन और स्वतंत्रता के लिए जाग जाएगा। आज हम नए युग में कदम रख रहे हैं। आज हम जिस उपलब्धि का उत्सव मना रहे हैं...! 15 अगस्त, 1947 को प्रधानमंत्री लाल किले की प्राचीर से सब से पहली बार तिरंगा फहराकर आजादी का उत्सव मना रहे थे तो क्या पूरा देश इस जश्न में शरीक हो सका था? जब देश की राजधानी में जश्न का माहौल था तब बृहद भारत के अधिकांश हिस्सों में सांप्रदायिक दंगों के कारण रक्तपात हो रहा था। स्वतंत्रता के उस अवसर पर करोड़ों लोग देश की विभाजन की त्रासदी के कारण इतने भयावह मंजर देख रहे थे जिसके चलते आज़ादी के जश्न का किसी को भान तक नहीं हुआ। लाखों हिंदुओं को अपने बसे बसाए घर बाहर छोड़ कर अपने ही देश में शरणार्थी बनना पड़ा था।

विभाजन की त्रासदी के उस ऐतिहासिक नग्न सत्य में अनेक लोग मारे गए या जख्मी हो गए या उस हफडा तफड़ी में घरवालों से बिछुड़ गए और माँ बहन बेटियों की इज्जत लूटी गई अथवा उनका अपहरण कर लिया गया। इतने बड़े पैमाने पर जनसंख्या के उस अप्रत्याशित आदान-प्रदान के दौरान लाशों से पट्टी रेलगाड़ियाँ नव स्वतंत्र भारत में पहुँचने से हड़कंप मचा हुआ था। असंख्य लोग काफिलों में पैदल ही नई सरहद पार कर रहे थे। मेरा परिवार भी काफिले के साथ पैदल ही भारत पहुँचा था।

हमारे परिवार की काफिले के साथ आने की भी एक दारूण गाथा है। उस समय मैं तो अपने बचपन में थी। हम उस समय जिला मोंटगुमरी, तहसील दीपालपुर के एक गाँव भगवानपुर में रहते थे जहाँ मेरे पिताश्री जमींदार थे। जब पाकिस्तान बन गया तो भगवानपुर के सभी हिंदू परिवार सुरक्षा की दृष्टि से हमारे एक रिश्तेदार की एक विशाल हवेली में जा कर रहने लगे। उस हवेली पर लगभग रोज ही मुसलमानों के जत्थों के जत्थे तलवारें लहराते हुए हमले करने आ जाते थे किंतु हवेली की दीवारें इतनी ऊँची थी कि वह अंदर फांद कर नहीं आ पाते थे।

फिर पता नहीं उस गाँव के वर्चस्वी मुसलमानों ने हवेली के रुतबेदार लोगों से कैसे संपर्क साधा और कहा कि अब यह गाँव पाकिस्तान बन चुका है आप लोग अपनी सुरक्षा के हित में इस्लाम अपना लो ताकि बाहर से हमलावर मुस्लिमों से आपकी रक्षा की जा सके। फिर सुनने में आया कि उन्होंने हमारे रूतबेदार पुरुषों को कलमें पढ़ा दिए। अब उनके लड़कों के रिश्ते हिंदू लड़कियों के लिए आने लगे कि अब आपस में शादी विवाह हो जाना चाहिए। हवेली के मालिक तथा अन्य लोग इस चुनौती को स्वीकार करने के लिए मन से एकदम तैयार नहीं थे। एक दिन उनकी एक और माँग आई कि वहाँ के मुसलमान अन्य इलाकों के हिंदुओं पर हमला करने के लिए जा रहे हैं क्योंकि हवेली के लोग अब मुसलमान बन गए हैं वह भी उनके साथ हमले के लिए चलें। पता नहीं कितने लोगों को उनके साथ भेजा गया किंतु जब वह लौटे तो हवेली का एक खूबसूरत नौजवान जो उनके साथ गया था वह बुरी तरह जख़्मी होकर लौटा। उस पर पता नहीं किसने हमला किया था। उसकी गर्दन के पास तलवार लगी थी और वह खूनोखून होकर वापस लौटा तो समूची हवेली में हाहाकार मच गया। उस दिन बरसात भी कहर की हो रही थी मानो हवेली वालों के साथ बादल भी खूब जमकर रो रहे थे। कहने को तो हवेली के रसूखदारों ने कलमें पढ़ लिए थे पर वह मन से इन सब से बचने के लिए खूब चिंतित थे। उन्होंने हवेली की सभी महिलाओं को हिदायत दे दी कि जब मुसलमानों का हमला हो और जो वह दीवार फांद कर अंदर आ जाए तो पुरुष उनसे लड़कर कट मरेंगे परंतु महिलाएँ सभी हवेली के अंदर बनी हुई खूई में छलांग लगाकर अपने प्राण दे देंगी।

खैर, ईश्वर की कृपा से उसकी नौबत नहीं आई क्योंकि एक दिन आर.एस.एस. के नौजवान अपने साथ मिलिट्री लेकर हवेली में रह रहे हिंदुओं को वहाँ से निकालने के लिए आ पहुँचे। उनके आते ही जो जहाँ बैठा था उनके साथ हिंदुस्तान जाने के लिए खाली हाथ निकल पड़ा और एक विशाल काफिले में शामिल हो गया। इस तरह हमारा परिवार भी गिरता पड़ता हिंदुस्तान पहुँचा गया। फिरोजपुर में हमारी मासीजी ने एक छोटा-सा मकान हमें किराए पर ले दिया। उस समय हम सबकी किस्मत ख़राब थी कि 15-20 रोज बाद में ही फिरोजपुर में भयानक बाढ़ आ गई। आजकल हम देखते हैं विश्व के किसी-न-किसी हिस्से में भारी बरसात या बाढ़ का पानी सबके मकानों में घुस जाता है और प्रलय जैसै हालात नज़र आते हैं।

ऐसे मंजर को देखकर हमें फिरोजपुर का वह भयावह मंजर याद आता है जब बाढ़ का पानी पूरे मकान में भर गया कि छत को छूने लगा। रात घिर चुकी थी, हमारे वचाव में कोई नहीं आया। हमें मज़बूर हो कर छत पर बैठना पड़ा था।

उन दिनों हमारी माँ बीमार थी। गलियों और सड़कों पर तीन तीन चार चार फुट से अधिक पानी भरा था। हमारे मामा जी ने हमारी माँ को अपने कंधों पर उठा कर एक ऊँचे स्थान पर बने स्कूल की एक बिल्डिंग में पहुँचाया। सभी बच्चों को छत से उतार कर सुरक्षित स्थान पर पहुँचाया गया होगा। उस बाढ़-ग्रस्त स्थान से हम लोगों को अंबाला कैंपस में ले जाया गया। वहाँ भी कुछ दिनों में हैजा फैल गया इसलिए केंपो में रह रहे सब लोगों को जबलपुर की तरफ कहीं लगाए गए कैंपस में शिफ्ट किया गया। वहीं पर मुझे पहली बार किसी स्कूल में दाखिल किया गया।

कुछ समय बाद हमारा परिवार वहाँ से अब लौट कर लुधियाना आ गया क्योंकि वहाँ हमारे कुछ नजदीकी रिश्तेदार रहते थे। बाद में तो शरणार्थियों ने खुद को संभाला और हर कोई अपने पैरों पर खड़े होने की कोशिश करने लगा।

सरकार के सामने शरणार्थियों को बसाने की विकट समस्या भी थी उधर स्वतंत्रता के जश्न के समय राष्ट्रपिता महात्मा गांधी राजधानी दिल्ली से दूर भारत के पूर्व में सांप्रदायिक दंगों की आग शांत करने में लगे थे। स्वतंत्रता प्राप्ति के 5 महीने बाद ही 1948 की 30 जनवरी को शांति के मसीहा महात्मा गांधी की प्रार्थना सभा में जाते समय गोली मारकर हत्या कर दी गई जिससे पूरा राष्ट्र शोक में डूब गया।

सरकार के समक्ष देश में स्थिति को सामान्य करने की चुनौती तो थी इसी बीच 26 जनवरी, 1950 को भारत का संविधान लागू हुआ और भारत एक गणतंत्र राष्ट्र बन गया। संविधान लागू होने के बाद भारत का सबसे पहले जन प्रतिनिधि अधिनियम, 1950 पारित हुआ। वर्ष 1951-52 में संविधान के प्रावधानों के अनुसार देश में आम चुनाव कराए गए।

वर्ष 1954-56 में शारदा एक्ट के नाम से प्रसिद्ध पारिवारिक कानून पारित किए गए। यह कानून थे हिंदू विवाह अधिनियम, 1955, हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम, 1956 हिंदू दत्तक ग्रहण और भरण पोषण अधिनियम, 1956 और विशेष विवाह अधिनियम, 1954। यद्यपि शारदा अधिनियम का घोर विरोध हुआ किंतु पिछले 7 दशकों में देश के हिंदू नागरिकों की यही अब आचार संहिता बन गए हैं।

इसी दशक में खड़कपुर में भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान जैसे उच्च शिक्षा संस्थान स्थापित किए गए। साथ ही भारत सरकार ने इंपीरियल बैंक आफ इंडिया का भारतीय स्टेट बैंक नाम से राष्ट्रीयकरण कर दिया। इसी दशक में वर्ष 1955 में तिब्बत के विस्थापित हुए दलाई लामा तथा अन्य शरणार्थियों को भारत में शरण दे दी गई। 1960 में ऑपरेशन विजय के अंतर्गत गोवा, दमन दीव को पुर्तगाल से स्वतंत्र कराया गया। इसी दशक की सबसे महत्वपूर्ण और उल्लेखनीय उपलब्धि रही कि सरदार पटेल ने 500 से अधिक ऐसे देसी राजवाड़े को भारत में

विलय करने में सफलता पाई। एक अन्य यह बहुत बड़ी उपलब्धि यह रही कि हैदराबाद के विरोध के बावजूद उस पर सैनिक कार्रवाई कर इसका विलय भारत में कर लिया गया। इसका श्रेय भी तत्कालीन गृह मंत्री सरदार पटेल को ही जाता है।

इन सब उपलब्धियाँ के होते हुए भी भारत को सबसे बड़ा धक्का तब लगा जब चीन ने चीन और भारत के बीच हुए 1954 में पंचशील समझौते के बावजूद 20 अक्टूबर, 1962 को भारत पर आक्रमण कर दिया। बेशक चीन ने 21 नवंबर, 1962 को स्वयं ही युद्धविराम की घोषणा कर दी किंतु इस युद्ध में चीन ने भारत के अक्साई चिन का लंबा चौड़ा इलाका अपने कब्जे में ले लिया। चीन के इस विश्वासघात के कारण सेना के कई जवानों की शहादत तो हुई, नेहरू जो मिश्रित अर्थव्यवस्था के आधार पर देश में अर्थव्यवस्था को संभालने का प्रयास कर रहे थे को मानसिक रूप से बहुत बड़ा धक्का लगा और वह इस शॉक से कभी उभर नहीं पाए और 27 मई, 1964 को उनका दुखद निधन हो गया।

उनके स्थान पर पहले गुलजारीलाल नंदा ने तेरह दिन तक प्रधानमंत्री के पद पर कार्य किया और उसके बाद लाल बहादुर शास्त्री को भारत का प्रधानमंत्री बनाया गया। लाल बहादुर शास्त्री के समक्ष भी देश के बारे में कई प्रकार की चुनौतियाँ थी। भारत पर चीन के आक्रमण से हुए विनाश के कारण देश उभरने का प्रयास कर ही रहा था कि 1965 में पाकिस्तान ने भारत पर हमला कर दिया। उस समय सूखा पड़ने के कारण भारत खाद्य समस्या से जूझ रहा था। चीन युद्ध के परिणाम स्वरुप आर्थिक संकट वैसे ही चल रहा था। पाकिस्तान ने भारत पर हमला किया तो समस्या और अधिक विकट होनी ही थी। उससे पहले कश्मीर में तो पाकिस्तान ने आक्रमण कर उसके कुछ इलाके हथिया लिए। तब से वैसे ही इस मोर्चे पर हमेशा युद्ध की स्थिति बनी रहती है हालाँकि युद्ध में भारतीय सेना ने अपने पराक्रम से पाकिस्तान को पीछे धकेल दिया और उसके कुछ इलाके भी विजय कर लिए। ताशकंद समझौते के दौरान हमने अपने प्रिय प्रधानमंत्री श्री लाल बहादुर शास्त्री को खो दिया। उनकी मृत्यु के रहस्य से अभी तक पर्दा नहीं उठ सका है।

लाल बहादुर शास्त्री जी की मृत्यु के बाद श्रीमती इंदिरा गांधी को प्रधानमंत्री की बागडोर सौंप दी गई किंतु कांग्रेस के भीतर के अंतर विरोधों के कारण कांग्रेस में विभाजन हो गया। श्रीमती इंदिरा गांधी के आरंभिक वर्षों में 1969 में बैंकों का राष्ट्रीयकरण कर दिया गया। कांग्रेस के अंदरुनी संकट के कारण वर्ष 1971 में मध्यावधि चुनाव कराये गए जिसे इंदिरा गांधी के नेतृत्व वाली कांग्रेस को बहुमत मिला और इंदिरा गांधी ने पुनः प्रधानमंत्री पद की शपथ ली। उन्होंने सर्वप्रथम 1971 में 26वे संविधान संशोधन के अंतर्गत राजपरिवारों को मिलने वाले प्रिवी पर्सों का उन्मूलन कर दिया।

वर्ष 1971 में इंदिरा गांधी ने प्रधानमंत्री के अपने कार्यकाल को अभी मुश्किल से आरंभ किया ही था कि उनके सामने पड़ोस के पूर्वी पाकिस्तान ने एक नई वैश्विक चुनौती खड़ी कर दी। पाकिस्तान के पूर्वी पाकिस्तान की आवामी लीग पार्टी ने आम चुनाव में पूरे पाकिस्तान

में बहुमत हासिल कर लिया तो पश्चिमी पाकिस्तान ने आवामी लीग के अध्यक्ष मुजीबुर्रहमान को देश का प्रधानमंत्री बनाना स्वीकार नहीं किया जिसके कारण पाकिस्तान में बंगबंधु ने पूर्वी पाकिस्तान को अलग देश बनाने की घोषणा कर दी। इसके कारण, पश्चिमी पाकिस्तान ने पूर्वी पाकिस्तान की जनता का कत्लेआम करना आरंभ कर दिया जिसके कारण पूर्वी बंगाल के लोग विस्स्थापित होकर भारत में शरणार्थी होने को मजबूर हो गए।

प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी ने विश्व के सभी देशों को इस पूरी गंभीर स्थिति से अवगत कराने के लिए कई देशों का दौरा किया किंतु नतीजा कुछ नहीं मिला। भारत में एक करोड़ से अधिक शरणार्थियों ने शरण ले ली थी। उधर अमेरिका इस नई स्थिति में पाकिस्तान को हथियारों और धन से उसकी सहायता कर रहा था।बंगबंधु मुजीबुर्रहमान ने पूर्वी पाकिस्तान को बांग्लादेश के रूप में एक स्वतंत्र देश घोषित कर दिया क्योंकि भारत ने उसे इस संबंध में हर तरह से सहायता देना आरंभ कर दिया था।

अमेरिका ने भारत को डराने के लिए भारत के विरुद्ध अपना सातवाँ युद्ध पोत हिंद महासागर में भेज दिया, मजबूरन इंदिरा गांधी ने भी अपनी कूटनीति के तहत रूस से 20-वर्ष की मैत्री संधि कर ली। नव स्वतंत्र बांग्लादेश से पाकिस्तानी सेना बंगलादेश और भारत के विरुद्ध लड़ रही थी उसने दिसंबर, 1971 को भारत के पश्चिमी सीमाओं पर भी आक्रमण कर दिया। इंदिरा गांधी के नेतृत्व में हमारी सेना ने अभूतपूर्व पराक्रम का ऐसा अद्‌भुत प्रदर्शन किया कि बांग्लादेश में पाकिस्तान के 93000 सैनिकों ने भारतीय सेना के समक्ष आत्मसमर्पण कर दिया और 16 दिसंबर, 1971 को पश्चिमी सीमा पर पाकिस्तानी सेना ने आत्मसमर्पण कर दिया। इन सब के परिणाम स्वरूप अंतरराष्ट्रीय विश्व क्षितिज पर एक नये देश बांग्लादेश का उदय हो गया। भारतीय सेना ने पाकिस्तान के लगभग 57995 किलोमीटर भूमि अधिग्रहित कर रही थी किंतु बाद में शिमला समझौते के साथ यह सारी अधिकृत भूमि पाकिस्तान को लौटा दी गई।

बांग्लादेश की स्थापना का श्रेय इंदिरा गांधी को दिया जाता है क्योंकि उन्होंने भारतीय उपमहाद्वीप का भूगोल ही बदल कर रख दिया था तब से उन्हें आर्यन लेडी की संज्ञा दी जाने लगी। किंतु बंगला देश बनाने के कारण पाकिस्तान के साथ हुए युद्ध के कारण भारत को अनेक समस्याओं का सामना करना पड़ा। अगले वर्ष वस्तुओं की कीमतें आसमान छूने लगी।

बांग्लादेश युद्ध के बाद अधिकांश बांग्ला शरणार्थियों को तो तो बांग्लादेश लौटा दिया गया किंतु युद्ध के कारण देश की अर्थव्यवस्था पर बुरा प्रभाव पढ़ना ही था। दुर्भाग्यवश, उसी वर्ष असफल वर्षा ऋतु के कारण देश में खाद्यान्न की कमी और औद्योगिक उत्पादन में गिरावट के कारण जनता का जीवन दुर्भर होने लगा। उधर बिहार राज्य में सरकार के विरुद्ध छात्र आंदोलन शुरू हो गया जिसका संचालन गांधीवादी समाजवादी नेता जयप्रकाश नारायण कर रहे थे। देश में वस्तुओं की कीमतें भी आसमान छू रही थी जिसके कारण जेपी के नेतृत्व में जनता दल बना और इंदिरा गांधी के विरुद्ध आंदोलन शुरू हो गया। देश का दुर्भाग्य ही कहिए कि

इलाहाबाद हाईकोर्ट में इंदिरा गांधी के विरुद्ध चुनाव संबंधी एक मामले में फैसले के कारण उनकी लोकसभा की सदस्यता जाती रही। इस अभूतपूर्व संकट का सामना करने के लिए इंदिरा गांधी ने देश में आपातकाल लगा दिया और विपक्ष के अनेक नेताओं को जेल में डाल दिया। बेशक आपात स्थिति के कई समर्थक थे परंतु अधिकतर जनता अपात स्थिति को काले अध्याय की संज्ञा दे रही थी। कुल मिलाकर 18 महीने की आपातस्थिति के बाद आम चुनाव कराए गए तो इंदिरा गांधी की कांग्रेस पार्टी हार गई और जनता पार्टी जीत गई। मोरारजी देसाई बने प्रधानमंत्री किंतु वह मात्र ढाई वर्ष प्रधानमंत्री रहे और उनकी सरकार गिर गई जिससे देश में पुनः मध्यावधि चुनाव करने पड़े। इसमें कांग्रेस को पुनः बहुमत मिला और इंदिरा गांधी फिर से प्रधानमंत्री बन गईं।

बांग्लादेश बन जाने के कारण नाराज़ पाकिस्तान ने भारत के पंजाब राज्य में अलगाववादी ताकतों को इतना प्रोत्साहन और समर्थन दिया कि पंजाब में आतंकवाद की अभूतपूर्व समस्या से जूझना पड़ा। इसी के कारण पंजाब के स्वर्ण मंदिर में ऑपरेशन ब्लू स्टार करना पड़ा। वास्तव में भिंडरांवाले ने अन्य आतंकवादियों के साथ स्वर्ण मंदिर में कब्जा जमाया हुआ था और इंदिरा गांधी को रुस से ही सूचना मिली थी कि भिंडरावाला पंजाब को एक आज़ाद राज्य बनाने की घोषणा करने वाला है, मज़बूरन देश की सुरक्षा और अखंडता को सुरक्षित करने के लिए इंदिरा गांधी को स्वर्ण मंदिर में ऑपरेशन ब्लू स्टार कर उसे खाली कराना पड़ा। कुल मिलाकर पंजाब से आतंकवाद की समस्या पर तो धीरे-धीरे काबू पाया जा रहा था, किंतु ऑपरेशन ब्लू स्टार के कारण नाराज़ कुछ सिख तत्वों ने एक षड्यंत्र के तहत इंदिरा गांधी की उनके ही दो सुरक्षा कर्मियों के माध्यम से हत्या करवा दी। इंदिरा गांधी की दुखद हत्या के बाद राजीव गांधी प्रधानमंत्री बने और अगले आम चुनाव में सहानुभूति की लहर के कारण कांग्रेस पार्टी को अभूतपूर्व बहुमत मिला और राजीव गांधी अगले पांच वर्ष तक के लिए प्रधानमंत्री बन गए परंतु कांग्रेस ने उनके विरुद्ध भीतर घात करते हुए एक ईमानदार व्यक्ति की उनकी छवि को बिगाड़ कर रख दिया जिसके परिणामस्वरूप अगले आम चुनाव में कांग्रेस को लोकसभा में बहुमत नहीं मिला।

वीपी सिंह ने सत्ता के लिए मंडल आयोग की रिपोर्ट का पिटारा खोल दिया जिसमें देश में बड़े स्तर पर हिंसा फैली। गैर-अन्य पिछड़े वर्ग के छात्रों में बहुत असंतोष फैल गया यहाँ तक कि कुछ छात्रों ने विरोध में आत्मदाह का प्रयास किया और गोस्वामी नाम के छात्र की आत्मादाह के कारण मृत्यु हो गई। खैर, बाद में वीपी सिंह कुछ समय के लिए प्रधानमंत्री बने परंतु उन्हें जल्दी ही हटना पड़ा। कांग्रेस पार्टी ने चंद्रशेखर को बाहर से समर्थन दे उसे प्रधानमंत्री बना दिया परंतु तब तक देश की अर्थव्यवस्था का इतना बंटाधार हो चुका था कि चंद्रशेखर सरकार को देश का सोना तक विदेश में गिरवी रखना पड़ा था।

अंततः 1991 में पुनः मध्यावधि चुनाव करवाने पड़े।। इन्हीं आम चुनावों के दौरान पूर्व प्रधानमंत्री राजीव गांधी जी जब कांग्रेस के लिए प्रचार कर रहे थे, वह 21 मई, 1991 को

तमिलनाडु में पेरांबदूर में चुनावी रैली में आत्मघाती बम हमले के शिकार हो गए और उन्होंने देश के लिए शहादत दे दी। धनु नाम की एक लिट्टे समर्थक महिला ने राजीव को फूलों का हार पहनाया और अपनी कमर में बंधे विस्फोटकों में ब्लास्ट कर दिया जिसमें राजीव गांधी के शरीर के चिथड़े चिथड़े हो गए। देश में एक बार फिर शोक की लहर दौड़ गई।

अगले आम चुनाव में भी गठबंधन की सरकार बनी और प्रधानमंत्री बने कांग्रेस पार्टी के पीवी नरसिंह राव। उनके कार्यकाल में बाबरी मस्जिद को ढहाने की घटना हुई जिसके परिणामस्वरूप पूरे देश में बड़े पैमाने पर सांप्रदायिक दंगों का प्रकोप रहा। उनके जमाने में झारखंड मुक्ति मोर्चा सांसदों का रिश्वत कांड हुआ और साथ ही पंजाब और हरियाणा उच्च न्यायालय के न्यायमूर्ति रामास्वामी के विरुद्ध संसद में महाभियोग चलाया गया और उनके विरुद्ध भ्रष्टाचार के आरोप सही पाए जाने पर भी कांग्रेस पार्टी ने उन्हें बचा लिया। इन सब बातों के होते हुए भी भी नरसिंह राव के प्रधानमंत्री के कार्यकाल में अच्छी बात यह हुई कि उन्होंने देश की चरमराई अर्थव्यवस्था को ढर्रे पर लाने के लिए देश में कई आर्थिक सुधारों का सहारा लिया, इसकै लिए उन्होंने डॉ. मनमोहन सिंह को वित्त मंत्री बनाया जिसके कारण देश की अर्थव्यवस्था में कुछ सीमा तक सुधार दिखाई देने लगा। कुछ सुधार इस प्रकार रहे --

- सुधार अवधि के दौरान, सेवा क्षेत्र में विस्तार हुआ, जबकि कृषि क्षेत्र में गिरावट आई और औद्योगिक क्षेत्र में उतार-चढ़ाव रहा।
- भारतीय अर्थव्यवस्था के खुलने से प्रत्यक्ष विदेशी निवेश (एफडीआई) और विदेशी मुद्रा भंडार में उल्लेखनीय वृद्धि हुई। विदेशी निवेश की इस श्रेणी में विदेशी संस्थागत निवेश और प्रत्यक्ष निवेश शामिल हैं।
- सुधार अवधि के दौरान, भारत इंजीनियरिंग सामान, ऑटो पार्ट्स, आईटी सॉफ्टवेयर आदि में सुधारों के दौरान मूल्य वृद्धि को भी नियंत्रण में रखा गया।

अगले आम चुनाव में कांग्रेस हार गई और 1996 में भारतीय जनता पार्टी के अटल बिहारी वाजपेई प्रधानमंत्री बने परंतु उन्हें लोकसभा में अविश्वास प्रस्ताव के कारण एक वोट से हारना पड़ा। वह केवल तेरह दिन तक ही प्रधानमंत्री रह पाए। उनके बाद देव गौड़ा और फिर इंद्र कुमार गुजराल थोड़े थोड़े थोड़े समय के लिए प्रधानमंत्री बने। इसके बाद पुनः अटल बिहारी वाजपेई तेरह महीने के लिए प्रधानमंत्री बने और उन्होंने वर्ष 1998 में पोखरन-II का न्यूक्लियर बम का परीक्षण किया। इसके आलावा, उन्होंने भारत के प्रधानमंत्री बनते ही पाकिस्तान से संबंध सुधारने की पहल की और इस उद्देश्य से उन्होंने पाकिस्तान में लाहोर की यात्रा कर वहाँ के प्रधानमंत्री नवाज़ शरीफ़ से मुलाकात की।

कहा जाता है और यह सच भी है कि पाकिस्तान के सेनापति परवेज़ मुशर्रफ़ नै प्रधानमंत्री नवाज़ शरीफ़ की जानकारी के बिना कारगिल की पहाड़ियों पर अपनी सेना तैनात कर दी। भारत को भी जब इसका पता चला तो भारतीय सेना ने अपने पराक्रम का परिचय देते हुए पाकिस्तानी सेना को पीछे धकेल दिया और भारत ने कारगिल युद्ध में भी विजय

हासिल कर ली।

वर्ष 1999 के आम चुनाव में भारतीय जनता पार्टी ने लोकसभा में 303 सीट जीतकर विजय हासिल कर ली और पुनः अटल बिहारी वाजपेई तीसरी बार प्रधानमंत्री बने। प्रधानमंत्री बनते ही अटल बिहारी वाजपेई ने पुनः पाकिस्तान से संबंध सुधारने का प्रयास शुरू किया। इसके लिए तत्कलीन पाक राष्ट्रपति परवेज़ मुशर्रफ़ भारत से बातचीत के लिए भारत आए और तीन दिनों तक बातचीत के बावजूद दोनों देशों में कोई समझौता नहीं हो सका। अटल बिहारी वाजपेई के इस कार्यकाल में भारत के एक यात्री विमान का पाकिस्तानी आतंकवादी अपहरण कर उसे अफगानिस्तान ले गए। इस अपहरण के कारण भारत को अपने यात्रियों के बदले में पाकिस्तान के तीन आतंकवादी लौटाने पड़े। भारत के तत्कालीन रक्षा मंत्री श्री जसवंत सिंह अपने साथ इन तीनों आतंकवादियों को लेकर गए और भारत से अपहृत यात्रियों को छुड़ा लाए।

अटल बिहारी वाजपेई के कार्यकाल में अनेक आर्थिक सुधारों के कारण देश की अर्थव्यवस्था में बहुत सुधार आया और देश की जीडीपी बराबर 7 प्रतिशत बनी रही। इसके साथ, प्रधानमंत्री अटल बिहारी वाजपेई ने देश में सड़कों का जाल बिछाना आरंभ किया ताकि देश में हर जगह पहुँच सुलभ हो सके और देश का आर्थिक विकास सुनिश्चित हो सके। उस समय भारतीय जनता पार्टी को लग रहा था कि देश के विकास के कारण इंडिया शाइनिंग हो रहा है अर्थात् इन उपलब्धियों से लाभ उठाने के लिए लोकसभा के कार्यकाल से छः महीने पहले ही उसे भंग कर आम चुनाव कराए गए किंतु वर्ष 2004 के इन आम चुनावों में भारतीय जनता पार्टी हार गई और कांग्रेस पार्टी अध्यक्ष सोनिया गांधी के नेतृत्व में कांग्रेस जीत गई।

सोनिया गांधी ने डॉ. मनमोहन सिंह को प्रधानमंत्री बना दिया। डॉ. मनमोहन सिंह ने अपने कार्यकाल में आर्थिक सुधारों के साथ-साथ सूचना का अधिकार अधिनियम, 2005, उत्तराधिकार अधिनियम में संशोधन करके बेटियों को सहददायिकी अधिकार देना आदि कई महत्वपूर्ण विधायी कदम उठाए। वर्ष 2009 में भी पुनः कांग्रेस जीती और डॉक्टर मनमोहन सिंह पुनः प्रधानमंत्री बना दिए गए। अब तक यह स्पष्ट होने लगा था कि सोनिया गांधी ने डॉक्टर मनमोहन सिंह को प्रधानमंत्री तो अवश्य बना दिया था किंतु उन्होंने सत्ता का रिमोट अपने पास ही रखा जिसके कारण लगने लगा कि डॉक्टर मनमोहन मोहन सिंह प्रधानमंत्री बनाए जाने के कारण सोनिया गांधी के प्रति अपनी कृतज्ञता का भाव व्यकत करने लगे थे जिससे उनकी साख प्रभावित होने लगी। उधर कांग्रेस में भ्रष्टाचार का बोलबाला होने लगा था जिस पर मनमोहन सिंह अंकुश नहीं लगा सके जिसके कारण कांग्रेस वर्ष 2013 के अगले आम चुनाव में हार गई और गुजरात के दो दशक से अधिक समय तक मुख्यमंत्री रहे श्री नरेंद्र मोदी के नेतृत्व में भारतीय जनता पार्टी बहुमत लेकर चुनाव जीत गई। अब वर्ष 2013 में प्रधानमंत्री बने श्री नरेंद्र मोदी ने देश में विकास करने का एक जबरदस्त एजेंडा शुरू किया। उनका नारा ‘सबका साथ सबका विकास’ के अंतर्गत आर्थिक सुधारों के संबंध में वह बढ चढ़कर कार्य

करने लगे। उन्होंने देश के ग़रीबों में भी एक अद्‌भुत क्रांति का संचार किया। उन्होंने देश में पहुँच को मज़बूत करने के लिए सड़कों का जाल बिछाना आरंभ किया। जन धन योजना के अंतर्गत देश के करोड़ों ग़रीब लोगों को राष्ट्रीयकृत बैंकों से जोड़ा। 'बेटी बचाओ बेटी पढ़ाओ' का नारा दिया। देश में अनेक एयरपोर्ट और एम्स का निर्माण आरंभ किया गया। हालाँकि प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने पाक के साथ संबंध सुधारने का बीड़ा उठाया किंतु पाकिस्तान की हमेशा चाल रही है पीठ में छुरा घोंपने की। जब पाकिस्तान ने कश्मीर में एक सैनिक कैंप पर बहुत बड़ा आतंकवादी हमला किया तो भारतीय सेना के माध्यम से पाक अधिकृत कश्मीर में आतंकवादी ठिकानों पर एक एयर स्ट्राइक की गई। फिर भी जब पाकिस्तान बाज नहीं आया और उसने पुलवामा आतंकवादी हमला किया तो मोदी ने पुलवामा हमले का बदला लेने के लिए पाकिस्तान पर एक और जबरदस्त एयर स्ट्राइक की और अब यह कहा जाने लगा कि मोदी घर में घुसकर मारता है।

वर्ष 2019 के चुनाव पुनः भारतीय जनता पार्टी जीत गई और प्रधानमंत्री बने पुनः श्री नरेन्द्र मोदी जी। प्रधानमंत्री मोदी जी का यह कार्यकाल इस संदर्भ में ऐतिहासिक रहा कि पिछले सतर साल से चली आ रही कश्मीर समस्या का इस अर्थ में सुधार आया क्योंकि कश्मीर को मिले विशेष दर्जे को समाप्त करने के लिए संविधान की धारा 370 और धारा 35क हटा दी गई जिससे जम्मू-कश्मीर में आम हो चुकी पत्थरबाजी और अन्य आतंकवादी घटनाओं पर अंकुश लग गया और जम्मू-कश्मीर में विकास की गति तेज हो गई और पर्यटन में एकाएक उछाल आया। दूसरा, राम जन्मभूमि की समस्या का भी समाधान हो गया और अयोध्या में एक भव्य राममंदिर तैयार हो गया और वर्षो से एक टैंट में विराजमान रामलला अपने भव्य मंदिर में विराजमान हो गए और उस भव्य मंदिर में उनकी एक भव्यतम समारोह में प्राणप्रतिष्ठा हो गई।

उधर प्रधानमंत्री मोदी जी समझ गए कि पाकिस्तान से संबंध बनाना संभव नहीं तो उन्होंने पाकिस्तान के प्रति अपना राजनयिक सख्त रवैया अपनाया और अपने अन्य नीतियों के कारण पाकिस्तान के हाथ भीख का कटोरा थमा दिया। अब पाकिस्तान भारत के सामने अच्छे संबंधों के लिए गिड़गिड़ा रहा है किन्तु भारत टस-से-मस नहीं हो रहा है। उसने तो पाक को कह दिया कि जब तक वह अपनी धरती से भारत के खिलाफ आतंकवादी गतिविधियाँ बंद नहीं करेगा तब तक उससे बातचीत का प्रश्न ही नहीं उठता। वह आतंकवादी गतिविधियों से बाज कहाँ आ रहा है। जब से जम्मू-कश्मीर में चुनाव के बाद नई सरकार बनी है तब से वहाँ फिर से आतंकी हमलों में वृद्धि होने लगी है। ऐसे में पाकिस्तान विश्वास करने के योग्य बिल्कुल नहीं है। इसी अपने कार्यकाल की अवधि में प्रधानमंत्री मोदी ने देश में करोड़ों शौचालयों का निर्माण कर ग्रामीणों महिलाओं को सुरक्षा का अहसास तो दिलाया ही है और देश में बिना किसी भेदभाव के ग़रीबों को पक्के घर आंविटत किए हैं। प्रधानमंत्री मोदी जी एक तरफ तो आर्थिक सुधारों को पूरी निष्ठा से चला रहे हैं और दूसरी ओर ग़रीबों को

सामाजिक न्याय देने और उन्हें गरिमापूर्ण जीवन जीने का अधिकार देने के लिए एकनिष्ठ हो अनेक प्रकार के क़दम उठा रहे हैं।

वर्ष 2024 में नरेंद्र मोदी आम चुनाव के बाद पुनः प्रधानमंत्री बनाए गए हालाँकि भारतीय जनता पार्टी की लोकसभा में केवल 240 सीटें रह गई हैं परंतु एनडीए की सहायता से भारतीय जनता पार्टी सरकार चला रही है। अभी भारतीय एजेंडे में समान सिविल नागरिक संहिता लागू करना बाकी है। हालाँकि उसने मुस्लिम महिलाओं को तीन तलाक से मुक्ति दिला कर बड़ी राहत दी है। उधर वक्फ संशोधन विधेयक लोकसभा और राज्यसभा में पारित होने के लिए प्रस्तावित है और इस समय यह विधेयक संसदीय समिति के विचारार्थ पड़ा है।यह संसद के आगामी शीत सत्र में पारित होने के लिए प्रस्तावित है किंतु मुस्लिमों में उनके निहित स्वार्थ के चलते यह मुद्दा बहुत विवादास्पद बना हुआ है।

उधर भारतीय जनता पार्टी हरियाणा में तीसरी बार चुनाव जीत कर एक नई शकित के साथ उभर रही है परंतु इसी माह महाराष्ट्र और झारखंड में चुनावी नतीजों से देश की दिशा बदल जायेगी। 23 नवंबर, 2024 के चुनावी नतीजों से भारतीय जनता पार्टी की स्थिति पर अवश्य प्रभाव पड़ेगा। इन राज्यों में अगर भारतीय जनता पार्टी जीत जायेगी तो उसके लिए आगे समान नागरिक संहिता बनाने और एक राष्ट्र एक चुनाव की नीतियों पर फैसला सुगम हो पाएगा।

उपरोक्त विवेचन में निष्पक्ष होकर घटनाक्रम को देखने का प्रयास किया गया है। एक चीन युद्ध और पाकिस्तान के तीन चार युद्धों के बावजूद भारत को अब विश्व शक्ति बनने से अब कोई रोक नहीं सकता है। वैसे देश को अस्थिर करने के लिए हवाओं में राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय षड्यंत्र की बू अवश्य आ रही है। इसे रोकना आगे यह जनता के हाथ में है कि वह देश को क्या दिशा देती है। भारत विश्व क्षितिज पर बढ़ती हुई एक महा शक्ति है और आशा करते हैं यह कुछ ही वर्षों में आर्थिक दृष्टि से विश्व के देशों में तीसरे नंबर पर आ जाएगी।

❑

डॉ. अर्चना प्रकाश

भारतीय लोकतंत्र के पचहत्तर वर्ष : चुनौतियाँ और उपलब्धियाँ

भारतीय स्वतंत्रता संग्राम की शौर्यपूर्ण कहानी और उसके बाद 75 वर्षों की यात्रा ने देश की गरिमा और समृद्धि को नया मुकाम दिया है। 15 अगस्त, 1947 को प्राप्त स्वतंत्रता से एक नए युग की शुरुआत हुई और देश ने आत्मनिर्भरता की दिशा में जो कदम बढ़ाया उसमें भारत के सामने कई चुनौतियाँ थी। मुख्य तौर पर भारत के सामने उस समय तीन तरह की चुनौतियाँ थीं :--

पहली संपूर्ण भारत को एकता के ऐसे सूत्र में गढ़ने की थी जिसमें अनेक विविधताओं, अनेक धर्मों, संस्कृतियों के साथ पूरी एकता व अखंडता के साथ पूरा राष्ट्र मजबूती से खड़ा रहे।

दूसरी अहम चुनौती देश में लोकतंत्र को कायम रखने की थी जिसके लिए संविधान निर्मात्री समिति का गठन हुआ और भारतीय संविधान बनकर लागू हुआ, जो विश्व के सभी संविधानों में श्रेष्ठ है। हम सब भारतीय संविधान से अवगत हैं, जिसमें संसदीय शासन पर आधारित प्रतिनिधित्व मूलक लोकतंत्र की स्थापना की गई है। इसी कारण भारत एक लोकतांत्रिक देश है।

तीसरी चुनौती थी ऐसे विकास की जिससे संपूर्ण राष्ट्र के हर व्यक्ति का भला हो क्योंकि संविधान में प्रदत्त मौलिक अधिकारों में समानता का अधिकार सर्वप्रथम है। संविधान के नीति निर्देशक तत्वों में लोक-कल्याण, आर्थिक विकास एवं गरीबी के खात्मे के लिए राज्यों को कारगर नीतियाँ निर्धारण भी आवश्यक माना जाता है। अब तक लगभग 25 करोड़ लोगों को घोर गरीबी से बाहर निकला गया है।

लोकतंत्र के 75 वर्ष के सफर में देश ने कई चुनौतियों का सामना किया है और विभिन्न क्षेत्रों में उत्तरोत्तर प्रगति भी की है। आर्थिक विकास, विज्ञान, प्रौद्योगिकी में उन्नति, औद्योगिकीकरण, कृषि क्षेत्र में सुधार, शिक्षा और आधुनिकी के क्षेत्र में महत्त्वपूर्ण प्रगति हुई है। देश को अभी भी कई समस्याओं का सामना करना पड़ रहा है, जैसे -- गरीबी, बेरोजगारी, आपातकालीन परिस्थितियों का समुचित प्रबंधन, पर्यावरण संरक्षण इत्यादि। किंतु इन समस्याओं के बीच में भी देश विभिन्न क्षेत्रों में उन्नति हेतु निरंतर प्रयत्नशील है। वर्तमान में भारत वैश्विक मंच पर भी महत्त्वपूर्ण एवं अहम भूमिका निभा रहा है।

एक समय स्वास्थ्य सेवाओं के अभाव में गुजर रहे देश के लिए कोरोना जैसी महामारी में औषधियों और वैक्सीन का वैश्विक आपूर्तिकर्ता होना एक बड़ी उपलब्धि है। फिर भी पिछले 15 वर्षों में भारत के द्वारा अर्जित कुछ उपलब्धियाँ के उल्लेख यहाँ पर आवश्यक है --

1. सन् 1950-51 में केवल 5 करोड़ टन खाद्यान्न का उत्पादन होता था, जो 1962 में बढ़कर 7 करोड़ टन हुआ लेकिन यह भी उस समय की 40 करोड़ जनसंख्या के लिए पर्याप्त नहीं था। भूमि सुधार कृषि में वैज्ञानिक तकनीक को बढ़ावा देकर हरित क्रांति समेत सिंचाई सुविधाओं के विस्तार से उत्पादन बढ़ा जिससे भारत आज अपनी पूरी जनसंख्या को खाद्यान्न देकर सारे विश्व को निर्यात भी करता है। आज भारत खाद्य उत्पादन में विश्व में दूसरे स्थान पर है।
2. डॉक्टर विक्रम साराभाई के नेतृत्व में 1969 में इसरो का गठन हुआ जिसमें आर्यभट्ट भास्कर व भास्कर द्वितीय उपग्रह भारत द्वारा अंतरिक्ष में छोड़े गए। लेकिन 2008 में इसरो द्वारा चंद्रयान प्रथम भेजा गया जो 14 नवंबर को चंद्रमा की कक्षा में स्थापित किया गया और वहाँ तिरंगा लहरा कर इतिहास रच दिया। इसके बाद 2017 में 15 फरवरी को एक पीएसएलवी ने एक साथ 104 उपग्रह को कक्ष में स्थापित कर विश्व रिकॉर्ड बनाया। 2023 में चंद्रयान द्वितीय को चंद्रमा की सतह पर सफलतापूर्व उतारा गया और भारत अंतरिक्ष क्षेत्र में नित्य नई उपलब्धियाँ हासिल कर रहा है। प्रसिद्ध कवित्री महादेवी वर्मा जी लिखती हैं --

   ''भेद दो ये क्षितिज मैं भी देख लूँ उस पार क्या है?
   जा रहे जिस पथ से युग कल्प उसका छोर क्या है।''
3. भारत की तीसरी सबसे बड़ी उपलब्धि आधुनिक हथियारों व उपकरणों से लैस भारतीय सैन्य बल है। आज़ादी के बाद भारतीय सेवा के पास पर्याप्त हथियार व आधुनिक उपकरण नहीं थे। जिसके कारण 1962 में भारत चीन युद्ध में भारत को हार का सामना करना पड़ा। लेकिन वर्तमान में भारतीय सेना के पास राफेल, सुखोई, मिराज, जगुआर, तेजस, मिग 29 व 21 जैसे लड़ाकू विमान है। आकाश पृथ्वी जैसी मिसाइलें और टी90 जैसे भीष्म टैंक भी हैं, आई एन एस अरिहंत, करंज जैसी पनडुब्बीयन हैं जिससे भारत विश्व की महान शक्ति के रूप में उभरा है।
4. आजादी के बाद ओलंपिक खेलों में देश की झोली में एक या दो पदक आते थे। लेकिन वर्ष 2012 में लंदन ओलंपिक में भारत को पहली बार 6 पदक मिले। सन् 2020 से भारत की झोली में पदकों की संख्या बढ़ने लगी, पहले सात फिर 10 पदकों में स्वर्ण रजत व कांस्य तीनों ही मिले। अब तक 24 ओलंपिक में प्रतिभाग कर के देश को 35 पदक मिल चुके हैं जिनमें 10 गोल्ड नौ रजत व 16 ब्रांज हैं।
5. आज पूरे विश्व में भारतीय क्रिकेट टीम का भी दबदबा है। 1983 में भारत ने कपिल देव की कप्तानी में पहला विश्व कप जीता और उसके बाद से 2007 में, फिर टी- 20 विश्व

कप और अनेक आईसीसी विश्व कप की ट्रॉफी पर भी भारत कब्जा जमा चुका है।

6. आजादी के बाद भारत में स्टार्टअप नहीं थे जिसके कारण बेरोजगारी बहुत थी। लेकिन 2019 से भारत में स्टार्टअप की संख्या बढ़ने लगी लेकिन 2022 के आर्थिक सर्वेक्षण के अनुसार इस समय देश में 61400 पंजीकृत स्टार्टअप हैं। जिससे 6.6 लाख प्रत्यक्ष और 35 लाख अप्रत्यक्ष रोजगारों का सृजन हुआ है। सन् 2020 में इन स्टार्टअप में भारतीय अर्थव्यवस्था में 10 अरब अमेरिकी डॉलर का कारोबार भी किया जो अब बढ़कर 24 अरब अमेरिकी डालर हो गया है।
7. आधी आबादी यानी महिलाओं की स्थिति आज़ादी के बाद बहुत कमजोर थी, जो अब घर की चार दीवारों से निकल कर देश के बहुमुखी विकास में अपना बहुमूल्य योगदान दे रही हैं। 50 वर्ष की उम्र में न्यका (Nykaa) भी स्थापना करने वाली फाल्गुनी नायर, टोक्यो ओलंपिक में रजत पदक जीतने वाली मीराबाई चानू, महिला फाइटर पायलट भावना कंठ, वित्त मंत्री निर्मला सीतारमण, माउंट एवरेस्ट फतह करने वाली बछेंद्री पाल, कल्पना चावला आदि अनेक ऐसे नाम है जिन्होंने देश में मिसाल कायम की है।

इसके अलावा आज़ादी के 75 सालों में शिक्षा, स्वास्थ्य, बैंकिंग, परिवहन, इंटरनेट कनेक्टिविटी और मीडिया सहित सभी क्षेत्रों में शीर्ष उपलब्धियाँ रहीं हैं लेकिन हमें अपनी इन उपलब्धियाँ पर गर्व करने के साथ ही ये भी याद रखना चाहिए कि जिन उपलब्धियाँ की हम खुशियाँ मना रहे हैं वो नए अवसरों के खुलने के द्वारा ही है। क्योंकि इससे भी बहुत बड़ी जीत व उपलब्धियाँ भविष्य के गर्त में दवी हैं, जिन्हें हम हासिल करके ही दम लेंगे।

❑

संदर्भ

1. दृष्टि आई एस ब्लॉग,
2. आज तक.इन
3. बीबीसी.काम

प्रो. (डॉ.) राकेश कुमार सिंह

भारत का प्रगतिशील समाज और विवाह-विच्छेद (तलाक) का रूढ़िवाद कानून : एक विधिक विश्लेषण

देश के विकास के साथ ही समाज का भी विकास हो रहा है और नई पीढ़ियों के सोचने का ढंग भी बहुत तेजी से बदल रहा है। इस बदलते परिदृश्य में विवाह के संबंध में भी तेजी से बदलाव आया है। रूढ़िवादी सोच की जगह एक प्रगतिशील संकल्पना युवाओं के बीच पैदा हो रही है। ऐसे में जरूरी है कि मौजूदा पीढ़ी की जरूरतों के अनुसार क़ानून में भी बदलाव किए जाने की आवश्यकता है। आज की पीढ़ी शादी और तलाक को जिस नजरिए से देखती है वह उस नजरियों से बिल्कुल अलग है जो हमारे पूर्वजों या पुरखों का था। उल्लेखनीय है कि हिंदू धर्मशास्त्रों में विवाह को न तोड़ने वाला एक अटूट बंधन के रूप में मान्यता प्राप्त थी। लेकिन समय के बदलते कालचक्र में इसमें काफी व्यापक बदलाव आया है।

हिंदू विवाह अधिनियम, 1955 आज़ादी के बाद के तुरंत बनाए गए क़ानून थे। उस समय भारत में 1951 में देश में साक्षरता दर महज 18.3 प्रतिशत थी जो 2021 में बढ़कर 77.7 प्रतिशत हो गई है। उस समय की ज्यादातर महिलाएँ घुंघट के नीचे, घरों की चाहरदीवारी के पीछे रहती थी। उनके जीवन में स्वालम्बी, स्वतंत्रता, महिला सशक्तिकरण, कैरियर ओरियेंटेशन जैसी कोई संकल्पना नहीं थी। लेकिन आज की महिलाएँ आर्थिक ही नही, मानसिक और सामाजिक तौर पर भी पूरी तरह से आत्मनिर्भर है। हर एक क्षेत्र में महिलाओं ने अपनी अमिट छाप छोड़ी है। इसलिए अब विवाह और तलाक के क़ानूनों में मौजूदा पीढी की जरूरतों के अनुसार बदलाव किए जाने की आवश्यकता है।

हिंदू विवाह अधिनियम, 1955 में यदि बारीकी से तलाक के आधारों को देखे तो इसमें जारता, क्रूरता, अभित्यजन, मानसिक विक्षिप्तता, धर्म परिवर्तन, कोढ़, लैगिक संक्रामण रोग, संसार से परित्याग और सात साल से लापता होना आधार बनाया गया है।[1] उपरोक्त तीन आधार को छोड़कर आज के दौर में अन्य आधार अपनी प्रासंगिकता पूरी तरह से खो चुके है। जैसे कोढ़ अब समाप्त हो चुका है। कोई भी लैगिक सक्रामण रोग मेडिकल साइंस की तरक्की के साथ असाध्य नहीं रहा है। धर्म परिवर्तन भी काफी छुटपुट ढंग से ही हो रहा है। संसार से परित्याग अर्थात् वानप्रस्थ जीवन अब अपनी सार्थकता खो चुका है। आज के

मोबाइल, सोशल मीडिया के विकास के साथ किसी व्यक्ति का लापता होना शायद संभव ही नहीं है।

उसी प्रकार 13 (1)(2) में पत्नी को चार अतिरिक्त आधार दिए गए हैं जिसके आधार पर सिर्फ पत्नी को यह अधिकार है कि अपने पति से तलाक ले सकती है।[2] वे चारों आधार भी अब मृतप्रायः हो चुके है। जैसे पहला आधार था कि यदि महिला की शादी इस अधिनियम के लागू होने से पहले हो चुकी है तो उसे इस आधार पर तलाक मिल सकता है कि उसके पति के पास उसके अतिरिक्त भी कोई पत्नी है। चूँकि इस अधिनियम को लागू हुए लगभग 80 वर्ष हो चुके है तो शायद ही कोई पत्नी अब इस आधार पर तलाक लेना चाहेगी। दूसरा आधार है कि यदि पति शादी के बाद बलात्कार, गुदा मैथुन या पशुगमन का दोषी पाया जाता है तो महिला को तलाक लेने का आधार होगा। गुदा मैथुन और पशुगमन दोनों ही घोर अनैतिक व पति के लिए कलंकित करने वाला कृत्य है। आज के समय इसकी परिकल्पना नहीं की जा सकती है यदि करता भी है तो वह विक्षिप्त मानसिकता वाला पति होगा। अन्य आधार जिसके अंतर्गत यदि स्त्री का विवाह उसके 15 वर्ष की आयु प्राप्त करने के पहले किया गया था तो उसे 15 वर्ष की आयु प्राप्त करने के पश्चात् और 18 वर्ष की आयु प्राप्त करने के पूर्व तलाक का अधिकार दिया गया था। इस के इस युग में जब बाल विवाह प्रतिषेध अधिनियम, 2006 लागू है और इसके बाल विवाह के लिए कराने वालों को कठोर दंड का प्रावधान है। ऐसी स्थिति में छुटपुट मामलों को छोडकर बाल विवाह का आधार कम हो गया है।

उपरोक्त के आधार पर कहा जा सकता है कि महिलाओं को नाममात्र का विशिष्ट तलाक का आधार दिया गया है जिसकी सार्थकता आज के समय में लगभग नहीं के बराबर है। अतः इसे हिंदू विवाह अधिनियम, 1955 से हटाने की आवश्यकता है।

इसी प्रकार से यदि हम मुस्लिम विधि को देखे तो मुस्लिम विवाह विघटन अधिनियम, 1939 भी विवाह-विघटन की डिक्री के लिए आधार बताये गए है जिसके अंतर्गत मुस्लिम स्त्री विवाह के विघटन के लिए निम्नलिखित आधारों में किसी एक या एक से अधिक आधार पर डिक्री प्राप्त करने की हकदार होगी अर्थात् :

1. चार वर्ष से पति का ठौर-ठिकाना ज्ञात नहीं है,
2. पति ने दो वर्ष तक उसके भरण-पोषण की व्यवस्था करने में उपेक्षा की है या उसमें असफल रहा है,
3. पति को सात वर्ष या उससे अधिक अवधि के लिए कारावास का दंड दिया गया है,
4. पति तीन वर्ष तक अपने वैवाहिक कर्त्तव्यों का पालन करने में समुचित कारण बिना असफल रहा है।
5. पति विवाह के समय नपुंसक था और बराबर नपुंसक रहा है।
6. पति दो वर्ष उन्मत्त रहा है या कुष्ठ या उग्र रतिज रोग से पीड़ित है।

7. 15 वर्ष की आयु प्राप्त होने से पहले ही उसके पिता या अन्य संरक्षक ने उसका विवाह किया था और उसने 18 वर्ष की आयु प्राप्त करने के पूर्व ही विवाह का निराकरण कर दिया है, परंतु यह तब जब विवाहोत्तर संभोग न हुआ हो।
8. पति उसके साथ क्रूरता से व्यवहार करता है अर्थात् --
    (क) अभ्यासतः उसे मारता है या क्रूर आचरण से उसका जीवन दुखी करता है,
    (ख) कुख्यात स्त्रियों की संगति में रहता है या गर्हित जीवन बिताता है, या
    (ग) उसे अनैतिक जीवन बिताने पर मजबूर करने का प्रयत्न करता है, या
    (ड) धर्म को मानने या धर्मकर्म के अनुपालन में उसके लिए बाधक होता है, या
    (च) यदि उसकी एक से अधिक पत्नियॉ है तो कुरान के आदेशों के अनुसार उसके साथ समान व्यवहार नहीं करता है।[3]

उपरोक्त आधार भी हिंदू विवाह अधिनियम, 1955 के आधार के समान ही है यह अलग बात है कि मुस्लिम विवाह विघटन अधिनियम सन् 1939 में पारित किया गया था जबकि हिंदू विवाह अधिनियम, 1955 मे पारित हुआ। लेकिन दोनों अधिनियमों में विवाह-विच्छेद का आधार लगभग एक समान ही है जिसकी विवेचना हम ऊपर कर चुके है।

आधुनिक दौर में तलाक के नई कारणों ने जन्म लेना प्रारम्भ कर दिया है। हालाँकि अभी इसे कोई विधिक आधार के रूप में मान्यता नहीं मिली है। आजकल के नवयुवक व नवयुवती अक्सर यह कहते हुए पाये जाते हैं कि हमारे वाइब्स आपस में नहीं मिलते या पक्षकारों में आपस में एक-दूसरे के प्रति उदासीनता का भाव रहता है।

उल्लेखनीय है कि दुनिया के अन्य देशों में शादी के टूट जाने पर या शादी के बंधन मृतप्रायः हो जाने पर भी यह तलाक का सबसे मजबूत आधार बनता है। लेकिन भारत में इसे मान्यता नहीं मिली है। हिंदू विवाह अधिनियम, 1955 के अंतर्गत इसे क्रूरता के एक आधार के रूप में मान्यता मिली है, वह भी काफी चीजों को साबित करने के पश्चात। लेकिन आज के समाज में जरूरत इस बात की है कि इसे अन्य देशों की तरह भारत में तलाक के एक स्वत्रंत आधार के रूप में मान्यता मिलनी चाहिए।

वैवाहिक बलात्कार (Marital Rape) को भी विवाह विच्छेद का आधार बनाए जाने की नितान्त आवश्यकता है। हालाँकि दिल्ली उच्च न्यायालय कई गैर-सरकारी संगठनों की उस याचिका पर सुनवाई कर रहा है जिसमें उन्होंने वैवाहिक दुष्कर्म को अपराध करार देने का अनुरोध किया है। उच्च न्यायालय के अनुसार, 'यह कहना ठीक नहीं है कि अगर किसी महिला के साथ उसका पति जबरदस्ती शारीरिक संबंध बनाता है तो वह महिला भारतीय दंड संहिता की धारा 375 का सहारा नहीं ले सकती है। खंडपीठ का कहना है कि भारतीय दंड संहिता की धारा 375 के अंतर्गत पति पर अभियोजन चलाने से छूट ने एक दीवार खड़ी कर दी है। अदालत को यह भी देखना होगा कि दीवार संविधान के अनुच्छेद 14 और 21 का उल्लंघन तो नहीं कर रहा है। उच्च न्यायालय की यह टिप्पणी अनेक प्रश्न भी खड़ी

करती है। अगर वैवाहिक दुष्कर्म को अपराध की श्रेणी में शामिल कर लिया जाता है तो भविष्य में इसके क्या परिणाम होंगे, इस पर गंभीरता से विचार करने की आवश्यकता है।

वैवाहिक दुष्कर्म को अपराध बनाने के पीछे जो तर्क दिए जा रहे हैं उनमें यह एक है कि वैवाहिक दुष्कर्म को अपराध नहीं बनाए जाने से विवाहिक महिला हिसा चक्र में फंसी रहती है। उन्हें अपमानित होते हुए घरों में रहने के लिए विवश होना पड़ता है। दूसरा तर्क यह है कि जब विश्व के कई विकसित देशों में यह एक अपराध की श्रेणी में आता है तो फिर भारत जैसे लोकतंत्रात्मक गणराज्य में क्यों नहीं है! यह अलग बात है कि भारत की आपराधिक विधि इस विषय में क्या कदम उठाती है लेकिन जहाँ तक पारिवारिक विधि का प्रश्न है तो अब समय आ गया है कि इसे तलाक का एक सशक्त आधार बनाए जाने की आवश्कता है।

हिंदू विवाह अधिनियम, 1955 की धारा 13 (बी) में शामिल परस्पर सहमति के आधार पर तलाक के अंतर्गत पक्षकारों को कूलिंग पीरियड और दो मोशन में कोर्ट में उपस्थित होना होता है तभी तलाक की डिक्री पारित की जाती है। उक्त प्रकार के नियम पुराने व्यवस्थाओं के अनुरूप सही हो सकते थे लेकिन आज जब कोर्ट में वैसे ही पारिवारिक विवादों से संबंधित मामलों की बाढ़ आ चुकी है। ऐसी स्थिति में दो मोशन और छः महीने की कुलिग पीरियड को जारी रखने का कोई औचित्य नहीं प्रतीत होता है। उच्चतम न्यायालय ने भी अपने अनेक निर्णय में दो मोशन और कुलिग पीरियड को दरकिनार करते हुए अनुच्छेद 142 के अंतर्गत शादी के टूट चुके रिश्तों को समाप्त घोषित किया है।

काउंसलर (मध्यस्थता) में बदलाव की आवश्यकता

पारिवारिक न्यायालयों में आजकल एक चलन हो गया है कि तलाक के मुकदमों को आते ही जज दोनों पक्षकारों को काउंसलर (मध्यस्थता) को रेफेर कर देते हैं। लेकिन दोनों पक्षों के वकील गंभीर धाराओं में आरोप लगाते हुए केस फाइल करते हैं। नतीजन, दोनों पक्षकारों में एक प्रकार से दुश्मनी का भाव पैदा होता है और ऐसे मामलों में मध्यस्थता की गुजंइश लगभग नगन्य होती है लेकिन केस खिचता रहता है। और तलाक के अंतिम दहलीज पर आते-आते दोनों पक्षकारों के बीच घृणा, कड़वाहट, द्वेष, वैमनस्य एक-दूसरे के प्रति जानी दुश्मन से बन जाते हैं। उल्लेखनीय है कि यह वही कपल है जो एक समय साथ जीने-मरने की कस्मे खाए हुए होते हैं।

इस बात से इनकार नहीं किया जा सकता है कि भारत जैसे धार्मिक देश में विवाह को प्रारम्भ से ही एक पवित्र बंधन माना गया है जो न सिर्फ इस जीवन के लिए बल्कि सात जन्मों के लिए होता है। ऐसे में तलाक के क़ानून काफी कठोर बनाए गए थे जिससे विवाह आसानी से न टूट सके। लेकिन आधुनिक समाज में तलाक अब एक मायने में धब्बे के समान नहीं है जैसे पुराने समय में हुआ करता था।

आज हम जिस समाज में रह रहे है वहाँ किसी भी संबंधों का होना और न होना मिनटों की बात है। जीवन के कब और किस मोड़ पर किस तरह संबंध समाप्त हो जाए, कोई कुछ कह नहीं सकता है। विवाह रूपी बंधन भी इससे अछूता नहीं रहा है। भारत में एक समय हिंदू विवाह को कभी न टूटने वाला संबंध माना जाता रहा है। इतना ही नहीं इसे सात जन्मों का संबंध कहा जाता है। लेकिन बदलते परिवेश में इसकी सार्थकता कहाँ तक सही है, यह एक अलग मुद्दा है। लेकिन इस बात से इन्कार नहीं किया जा सकता है कि बदलते सामाजिक परिवेश में इस विवाह रूपी संस्था पर भी अनेको प्रहार हो रहे है। अब पति परमेश्वर नहीं रह गया है साथ ही पत्नी भी उस रूप में अब अर्द्धांगिनी भी नहीं रह गई है।

स्टेल्थिंग (Stealthing) का कार्य

स्टेल्थिंग सेक्स के दौरान गुप्त रूप से कंडोम को हटाने की क्रिया है जब दूसरा व्यक्ति केवल कंडोम के साथ यौन संबंध बनाने के लिए सहमत होता है और फिर भी सोचता है कि कंडोम जगह पर है। स्टेल्थिंग करना एक भ्रामक, बिना सहमति का कार्य है जो इग्लैंड़, जर्मनी, स्विट्ज़रलैंड, न्यूजीलैंड और कनाड़ा सहित कई देशों में अवैध है। इसे रेप की श्रेणी में या सैक्सअल एसाल्ट के रूप में माना जाता है।

सन् 2013 में निर्भया केस के वाद क्रिमिनल लॉ में काफी बदलाव किए गए, यहाँ तक भी कुछ दिनों पूर्व पुराने क्रिमिनल लॉ की जगह भारत में तीन क्रिमिनल लॉ में सुधार हेतु बिल संसद में पेश किया गया है। इन सभी में रेप लॉ में काफी बदलाव किए गए है। इस संबंध में न्यायाधीश वर्मा कमेटी के भी काफी सुझाव थे। उक्त कमेटी के एक सदस्य प्रोफेसर र्मिनल सतीश ने कहा कि, 'stealthing would, technically, amount to rape in India if the consent was conditional on the man wearing a condom'.

अवांछित गर्भ : भारत में शादी के पश्चात् कई महिलाओं अपने कैरियर, जाब प्रास्पेक्ट या अन्य कारणों की वजह से तुरंत गर्भधारण से बचना चाहती है। ऐसी स्थिति में वह अपने पति से सुरक्षित सेक्स की आशा करती है। यदि उसका पति इस कार्य में उसका सहयोग नहीं करता तो इससे अन्य देशों की भॉति सैक्सअल एसाल्ट की श्रेणी में लाने की आवश्यकता है और विवाह-विच्छेद के एक आधार के रूप में मान्यता देने की आवश्कता है।

बढ़ती उम्र में भी कमजोर पड़ रही शादी का बंधन

यद्यपि हिंदू धर्मशास्त्रों के अनुसार विवाह सात जन्मों का संबंध है और यह कभी न टूटने वाला अटूट बंधन है। लेकिन आज के समाज में उम्र के अन्तिम दौर पर रिश्तें कमजोर पड़ रहे है। पारिवारिक न्यायालयों में ऐसे केस सामने आ रहे है जिनमें 60 से 70 साल की उम्र के बीच की महिलाएँ अपने हक के लिए लड़ाई लड़ रही है। ज्यादातर वादों में

पति का आरोप है कि उसकी पत्नी बहुत ज्यादा झगड़ालू स्वभाव की है। हर वक्त लड़ती रहती है इसलिए उसे तलाक चाहिए। ऐसी स्थिति में ज्यादातर कपल के बच्चों की उम्र 40-50 के बीच रहती है। हालाँकि इस तरह के केस को ज्यादातर पारिवारिक न्यायालय खारिज ही कर देता है।

विवाहपूर्व करार (Prenuptial Agreement)

विवाहपूर्व करार वास्तव में पाश्चात्य देशों की संकल्पना की देन है। लेकिन अब यह विश्व के सभी देशों में फैल रहा है। विवाह पूर्व करार से आशय ऐसे करार से है जो विवाह के पक्षकारों द्वारा विवाह पूर्व सम्पादित किए जाते हैं। इस करार में पक्षकारों के अधिकारों एवं कर्त्तव्यों का उल्लेख होता है खासतौर से उनके आर्थिक मामलों (financial matters) से संबंधित जैसे दोनों पक्षकारों की संपत्तियों का ब्यौरा, विवाह-विच्छेद की प्रक्रिया और बच्चे के दत्तक ग्रहण एवं बच्चे तथा पत्नी के भरण-पोषण से संबंधित दोनों पक्षकारों की सहमति से शर्तें इत्यादि का उल्लेख होता है। विवाहपूर्व करार का सबसे बड़ा लाभ यह होता है कि विवाह-विच्छेद की स्थिति में यह पति-पत्नी के संपत्ति संबंधी मामलों के विवादों को निपटाने में सहायक सिद्ध होता है।

यदि हम कुछ दशकों पूर्व की परम्परा को देखे तो विवाह के लिए वर व वधू पक्ष के रिश्तेदार एवं माता-पिता विवाह पूर्व विवाह से संबंधित कई चीजों का करार करते हैं। कई चीजों पर सहमति एवं असहमति बनती है और अंत में उन करारों के पूर्ण होने पर विवाह संपन्न होता है। लेकिन उपरोक्त सभी करार मौखिक रूप से किए जाते हैं जो कुछ ही लोगों के बीच सीमित होता है। उन करारो का बाध्यकारी प्रभाव दोनों परिवारों के बीच देखने को मिलता है। गाँवों एवं दूर-दराजों के इलाकों में आज भी विवाह पूर्व करार को सरपंच या अन्य माध्यम से भी प्रवर्तनीय कराया जाता है। ये सभी चीजे इस बात की तरफ इंगित करते हैं कि भारतीय समाज में विवाह पूर्व करार प्राचीन समय से ही अपनी जड़े फैला चुकी है। लेकिन उसे अभी तक विधि द्वारा प्रवर्तनीय नहीं बनाया गया है। न्यायालय विवाह के पक्षकारों के बीच हस्तक्षेप करे या अपने निर्णय को पक्षकारों पर थोपे इससे बेहतर है कि पक्षकार स्वयं आपने आपको अपने करार से बाध्य कर ले। इससे न्यायालयों का बहुमूल्य समय भी बचेगा साथ ही विवाह के पक्षकारों को सौहार्दपूर्ण वातावरण में वैवाहिक उपचार भी मिल सकेगा।

निष्कर्ष

उपरोक्त के आधार पर कहा जा सकता है कि बदलते सामाजिक, आर्थिक और नैतिक परिवेश में आवश्कता इस बात की है कि जैसे आपराधिक विधियों का भारतीयकरण हुआ है ठीक वैसी ही पारिवारिक विधियों में विवाह-विच्छेद के आधुनिक आधार को जोड़ने की

आवश्यकता है। मृतप्रायः विवाह को तोड़ने, वैवाहिक बलात्कार और कपल के बीच स्टेल्थिंग (Stealthing) के कार्य को विवाह विच्छेद का आधार बनाए जाने की आवश्यकता है। शादी के एक निश्चित या लंबी अवधि पूरी होने पर जैसे यदि 40 या 50 साल शादी के हो चुके है तो फिर उस शादी को नहीं तोडॉ. जाना चाहिए।

यदि विवाह के पक्षकारों के बीच सब कुछ ठीक नहीं चल रहा है तो फिर जटिल क़ानूनी तलाक के आधार के कारण उस बेमेल शादी को खिचना या ढ़ोने का कोई मतलब नहीं होना चाहिए। तलाक होने को आधुनिक समाज में कलंक की निगाहों से देखने का समय अब खत्म हो चुका है। शादी को बनाए रखने में संयुक्त परिवार की अहम भूमिका होती है। अतः आवश्यकता इस बात की है कि संयुक्त परिवार की पुरानी अवधारणा को आज के समय में नए स्वरूप देने की आवश्यकता है। घर के बड़े-बूढ़े व बुजुर्गों का परिवार में रहना आवश्यक है। नई पीढ़ी को इस बात को समझने की आवश्कता है।

❑

संदर्भ

1. हिंदू विवाह अधिनियम, 1955 की धारा 13 (1)
2. हिंदु विवाह अधिनियम, 1955 की धारा 13 (2)
3. मुस्लिम विवाह विघटन अधिनियम, 1939 की धारा 2

डॉ. ममता चतुर्वेदी

भारतीय लोकतंत्र के 75 वर्ष की उपलब्धियाँ : एक मूल्यांकन

भारत जिसको अब सरकारी तौर पर भारतीय गणतंत्र कहा जाता है, हमेशा से एक धनी सांस्कृतिक और एतिहासिक धरोहरों वाला देश रहा है। भौगोलिक रूप से यह दक्षिण एशिया में स्थिति है। इसको एक उपमहाद्वीप भी कहा जाता है क्योंकि यह तीन दिशाओं से समुद्र से घिरा हुआ है। ये सामुद्रिक क्षेत्र है -- बंगाल की खाड़ी, अरब सागर और हिंद महासागर। यह देश क्षेत्रफल की दृष्टि से दुनिया का सातवाँ सबसे बड़ा देश और आबादी की दृष्टि से दुनिया का पहला सबसे बड़ा देश है। इसकी भू-सीमाएँ नेपाल, पाकिस्तान, चीन, बांग्लादेश, बर्मा और श्रीलंका से जुडी है। इसकी इसी महत्त्वपूर्ण भौगोलिक स्थिति और अपार सम्पदा वाला देश होने के कारण अंग्रेजों ने इसे अपना गुलामी वाला क्षेत्र के रूप में एक उपनिवेश बनाया।

जब ब्रिटिश सरकार से भारत को स्वतंत्रता प्राप्त हुई तब भारत की अर्थव्यवस्था बहुत जीर्णशीर्ण हालत में थी। देश की प्रति व्यक्ति आय बहुत कम थी। लोगों के पास पर्याप्त खाना, पहनने के लिए कपड़े व रहने के लिए घर नहीं थे। पीने के पानी का इंतजाम भी मुश्किल से होता था। देश प्रत्येक जरूरी सामान के लिए विदेशी आयात पर बुरी तरह से निर्भर था। यहाँ तक की कपड़े सिलने वाली सुई का निर्माण भी भारत में नहीं होता था, औद्योगिक क्षेत्र की हालत बहुत खराब थी। भारत की लगभग 82 प्रतिशत जनता निरक्षर थी। जीवन निर्वाह के लिए भारत की 75 प्रतिशत आबादी कृषि पर निर्भर थी देश की कुल आमदनी का 50 प्रतिशत हिस्सा कृषि क्षेत्र से आता था। लगातार बढ़ती जनसंख्या देश की अर्थव्यवस्था पर बोझ बन रही थी।

भारत में सन् 1857 का विद्रोह ब्रिटिश साम्राज्यवाद के विरुद्ध स्वतंत्रता के लिए भारतीय जनता का पहला महान संघर्ष था। इसी संघर्ष ने आधुनिक राष्ट्रीय आंदोलन के उदय के लिए मार्ग प्रशस्त किया। दिसंबर, 1885 में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस का जन्म हुआ जिसके नेतृत्व में भारतवासियों ने विदेशी शासन से स्वतंत्रता के लिए लंबा और वीरता पूर्ण संघर्ष किया। अंततोगत्वा 15 अगस्त, 1947 को भारत को ब्रिटिश राजतंत्र से आज़ादी मिल गई। यद्यपि ब्रिटिश सरकार से भारत को मुक्ति मिल गई थी तथापि ब्रिटिश सरकार भारत के लिए समस्याओं का पहाड़ छोड़ गए जिससे पार पाना बहुत चुनौती पूर्ण था।

सन 1858 के बाद धार्मिक और सामाजिक सुधार, राष्ट्रवाद और जनतंत्र की उठती हुई लहर ने स्वतंत्रता के लिए संघर्ष को जन्म दिया। उसकी अभिव्यक्ति सामाजिक संस्थानों तथा भारतीय जनता के धार्मिक दृष्टिकोण में सुधार लाने और उन्हें जनतांत्रिक बनाने के आंदोलन में भी हुई। अनेक भारतीयों ने महसूस किया कि देश के चतुर्दिक विकास और राष्ट्रीय एकता तथा एकजुटता पनपने के लिए सामाजिक और धार्मिक सुधार होना आवश्यक है। स्वामी विवेकानंद (1863-1902) ने भारतीय जनता की तत्कालीन सामाजिक स्थिति का वर्णन निम्नलिखित शब्दों में किया --

''यहाँ वहाँ जीर्णशीर्ण चीथड़ो में युवा लोगों तथा बूढ़ों की कृशकाय आकृतियाँ घूमती हुई दिखाई पड़ती है जिनके चेहरों पर सैकड़ों वर्षों की दरिद्रता और निराशा की गहरी झुर्रियाँ पड़ी है। गाय, बैल, भैंस हर जगह समान रूप से हैं -- हाँ उनकी आँखों में वही विषादमय दृष्टि, वही दुर्बल शरीर, रास्तों के किनारे कूड़ा करकट और गंदगी-यही है हमारा वर्तमान भारत। महलों के बिल्कुल बराबर में टूटी-फूटी झोपड़ियां, मंदिरों के बिल्कुल करीब कूड़ों का ढेर, भड़कीले वस्त्रों से सज्जित लोगों के साथ चलते लंगोटीधारी संन्यासी, अच्छे खाते पीते समृद्ध लोगों पर केंद्रित भूखों की मलिन आँखों की तरसती टकटकी-यही है हमारा अपना देश। भयंकर प्लेग और हैजे की विनाश लीला, राष्ट्र के मर्म स्थान को कुतरता हुआ मलेरिया जीवन के अभिन्न अंग के रूप में भुखमरी और अर्धभुखमरी, बहुधा तांडव करता हुआ मृत्युवत अकाल -- केवल रंग-रूप में ही मनुष्य दिखने वाले तीस करोड़ जीवों का समूह, अपने ही लोगों तथा बाहरी राष्ट्रों द्वारा कुचल कर निर्जीव बनाए गए, आशा विहीन अतीत विहीन भविष्य विहीन गुलाम जैसे विद्वेषपूर्ण स्वभाव वाले जिनके लिए अपने संगी लोगों की संपत्ति असहनीय है -- ताकतवर लोगों के पैरों की धूल चाटने के बावजूद जो कमजोर हैं उन पर संघातिक प्रहार करने वाले ऐसे कुत्सित, क्रूर अंधविश्वासों से भरे हुए हैं जो उनमें सहज ही है, जो कमजोर तथा भविष्य के प्रति निराश हैं, चरित्र बल के रूप में बिना कोई मानदंड वाले 30 करोड़ जीव भारत के शरीर पर ऐसे घूम रहे हैं जैसे किसी जानवर की सड़ी बदबूदार लाश पर कीड़े हो। यह है हमसे संबंधित तस्वीर जो सहज ही अंग्रेज अधिकारी के सामने अपने आप आ जाती है।[1]

इस प्रकार 1858 के बाद राजा राममोहन राय और पंडित विद्यासागर जैसे पहले के समाज सुधारकों के कार्य को विज्ञान, जनतंत्र और राष्ट्रवाद के साथ आधुनिक विश्व की आवश्यकताओं के अनुकूल अपने समाज को बनाने की भावना से ओत-प्रोत धार्मिक तथा सामाजिक सुधार के प्रमुख आंदोलनों ने आगे बढ़ाया और सुधार की प्रवृत्ति व्यापक बनी।

स्वामी विवेकानंद ने अपने धार्मिक संदेश में कहा कि अगर ज्ञान के साथ जिस वास्तविक संसार में हम रहते हैं उसमें कर्म न किया जाए तो ऐसा ज्ञान निरर्थक है। उन्होंने सर्वधर्म समभाव की घोषणा की तथा धार्मिक मामलों में किसी भी प्रकार की संकीर्णता की निंदा की तथा लोगों से स्वतंत्रता, समानता तथा मुक्त चिंतन की भावना आत्मसात करने की अपील की। उन्होंने शेष संसार से संपर्क तोड़ लेने तथा गतिहीन और संवेदनहीन बन जाने के कारण

भारतीयों की आलोचना की। उन्होंने कहा कि संसार के अन्य सब राष्ट्रों से हमारा अलगाव हमारे अधःपतन का कारण है और इसका एक ही प्रतिकार है कि शेष संसार की धारा में फिर से प्रवाह। गति ही जीवन का चिह्न है। विवेकानंद ने विचार की स्वतंत्रता के बारे में कहा कि विचार और कर्म की स्वतंत्रता जीवन, विकास और कल्याण की एक मात्र शर्त है, जहाँ उसका अभाव होता है वहाँ मनुष्य, जाति और राष्ट्र अवश्य अवनति की ओर जाता है। स्वामी विवेकानंद ने मानवतावादी राहत तथा सामाजिक कार्य करने के लिए सन् 1896 में रामकृष्ण मिशन की स्थापना की।[2]

एक लंबे और कठिन संघर्ष के बाद महात्मा गांधी के नेतृत्व में 15 अगस्त, 1947 को हमारा देश ब्रिटिश राजतंत्र से मुक्त हो गया। उस स्वतंत्रता आंदोलन में कई बहादुर स्वतंत्रता सेनानियों जैसे -- बी.आर. अम्बेडकर, भगत सिंह, बिरसा मुंडा, सुभाषचंद्र बोस आदि शामिल थे, का भी महत्त्वपूर्ण योगदान रहा। उस स्वतंत्रता आंदोलन की अवधि में देश में सुशासन तथा देशवासियों में निहित प्रतिभाओं को उन्मुक्त विस्तार देने के लिए उपयुक्त मूलभूत जनतांत्रिक सिद्धांतों और प्रक्रियाओं को वास्तविक स्वरूप प्रदान करने का कार्य चल रहा था। नवंबर 1946 में भारत की संविधान सभा का गठन किया गया। संविधान सभा ने सुशासन के सभी पहलुओं पर 3 वर्ष तक विस्तृत चर्चा की और हमारे राष्ट्र के आधारभूत ग्रंथ यानी 'भारत के संविधान' की रचना की, जिसे 26 नवंबर, 1949 को संविधान सभा द्वारा स्वीकृत किया गया और 26 जनवरी 1950 को देश में वह संविधान लागू हो गया और भारत एक गणतंत्र राज्य बन गया। तब से हर वर्ष 26 जनवरी की तिथि को 'गणतंत्र दिवस' के रूप में मनाया जाता है।

भारत के संविधान की प्रस्तावना के अनुसार भारत एक प्रभुतासंपन्न, लोकतंत्रात्मक, धर्मनिरपेक्ष, समाजवादी गणराज्य है जिसमें जनता को सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक विचार, मत, विश्वास तथा धर्म की स्वतंत्रता, पद एवं अवसर की समानता तथा व्यक्ति की गरिमा और राष्ट्र की एकता के लिए बंधुत्व की भावना सुनिश्चित की गई है। संविधान के अंतर्गत भारत में प्रजातंत्र तथा संसदीय प्रणाली को स्वीकार किया गया है तथा संघात्मक शासन पद्धति अपनाई गई है। इसके अनुच्छेद 368 के आधार पर संसद को संविधान में संशोधन करने का अधिकार दिया गया है।

हमारा देश 2047 में स्वतंत्रता की शताब्दी वर्ष की ओर बढ़ते हुए अमृत काल के प्रारंभिक दौर से गुजर रहा है। यह एक युगांतकारी परिवर्तन का कालखंड है। हम सब देशवासी उन दूरदर्शी जननायकों, समाज सुधारकों और अधिकारियों का कृतज्ञतापूर्वक स्मरण करते हैं जिनके कठिन परिस्थितियों में लंबे संघर्षमय यात्रा के बाद हम सब देशवासियों को अपने देश को नई ऊंचाइयों तक ले जाने का सुनहरा अवसर मिला है।

आजादी के बाद देश में प्रजातंत्र को मजबूत करने के लिए भारत सरकार ने जो मुख्य संवैधानिक कदम उठाए थे वह इस प्रकार हैं[3] --

(1) **जन प्रतिनिधित्व अधिनियम, 1951 :** यह अधिनियम देश में सामान्य चुनाव की प्रक्रिया के

बारे में विस्तृत रूप से बताता है। यह अधिनियम संसद (लोक सभा और राज्य सभा) सदस्यों की और विधान सभा तथा विधान परिषद के सदस्यों की चुनाव संबंधी योग्यता और अयोग्यता के बारे में वर्णन करता है।

(2) **संविधान का (61वाँ संशोधन) अधिनियम, 1988 :** इस अधिनियम द्वारा लोक सभा और विधान सभा में वोट डालने वालों की उम्र सीमा 21 वर्ष से घटा कर 18 वर्ष कर दी गई।

(3) **संविधान (73वाँ संशोधन) अधिनियम, 1993 :** इसके द्वारा पंचायत व्यवस्था संबंधी प्रावधानों को कार्यान्वित किए जाने की व्यवस्था की गई। इसका प्रयोजन सत्ता का विकेंद्रीकरण करके पंचायतों को अधिक स्वायत्तता प्रदान करना है।

(4) **संविधान (74वाँ संशोधन) अधिनियम, 1993 :** इसके द्वारा नगर निगमों से संबंधित व्यवस्था की गई। इसमें तीन स्तरीय नगर निगमों की व्यवस्था है -- नगर पंचायत, नगर परिषद तथा नगर निगम। इस संशोधन का उद्देश्य इन निकायों को स्वायत्ता प्रदान करना है।

(5) आर.टी.आई. अधिनियम, 2005 बनाकर सरकारी एजेंसियों को सार्वजनिक जाँच के लिए खोल दिया गया।

(6) संसद द्वारा जन लोकपाल अधिनियम, 2013 बनाया गया जो राजनीति में भ्रष्टाचार को रोकने के लिए बनाया गया है।

(7) देश में प्रत्येक 5 वर्ष के बाद लोक सभा और अपना समय सीमा पूरी करने के बाद देश की सभी विधान सभाओं, नगर निगम, ग्राम पंचायत के चुनाव लोकतांत्रिक तरीके से निरपेक्षतापूर्ण सफलतापूर्वक आयोजित होते हैं जो देश में मजबूत लोकतांत्रिक व्यवस्था का जीता-जागता सबूत है।

देश में सामाजिक समानता को बढ़ावा देने के लिए जो संवैधानिक प्रयास किए गए उनमें मुख्य निम्न प्रकार हैं --

(i) संविधान (आठवाँ संशोधन) अधिनियम 1960, संविधान (तेईसवाँ संशोधन) अधिनियम 1969, संविधान (62वाँ संशोधन) अधिनियम 1989, संविधान (104वाँ संशोधन) अधिनियम, 2020 : जो की सभी संविधान के अनुच्छेद 334 से संबंधित हैं के द्वारा अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजातियाँ एवं एंग्लो इंडियन समुदाय के व्यक्तियों के लिए लोक सभा तथा राज्य विधान सभा में सीटों का आरक्षण सन् 2030 तक के लिए बढ़ा दिया गया है।

(ii) संविधान (106वाँ संशोधन) अधिनियम, 2023 द्वारा महिलाओं के लिए लोक सभा तथा राज्य विधान सभाओं में 33 प्रतिशत सीटों के आरक्षण की व्यवस्था सुनिश्चित की गई है जिनमें से एक तिहाई सीटे केवल अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति की महिलाओं के लिए आरक्षित हैं।

(iii) संविधान (103वाँ संशोधन) अधिनियम, 2019 के द्वारा आर्थिक रूप से कमजोर

वर्गों से संबंधित व्यक्तियों को 10 प्रतिशत अतिरिक्त आरक्षण प्रदान किया गया है ताकि आर्थिक रूप के कमजोर वर्ग को उच्च शिक्षा और रोजगार में समान अवसर मिल सके।[4]

देश की एकता बनाए रखने के लिए और कुछ नागरिकों द्वारा पृथकतावादी भाषणों को रोकने के उद्देश्य से जो प्रयास किए गए उनमें मुख्य निम्न प्रकार से है --

(i) संविधान (16वाँ संशोधन) अधिनियम, 1963 जिसके द्वारा संविधान के अनुच्छेद 84, 173 और तृतीय अनुसूची में विहित शपथ के स्वरूप व उसकी शब्दावली में संशोधन किया गया। सांसद और राज्य के विधान मंडलों के सदस्यों, उच्चतम और उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों तथा भारत के नियंत्रक महालेखा परीक्षक को भारत की प्रभुता और अखंडता को बनाए रखने की शपथ लेनी होगी।[5]

(ii) 5 अगस्त, 2019 को संसद द्वारा संविधान के अनुच्छेद 370 और 35 को हटाने की मंजूरी दी गई। नोटिफिकेशन जारी करते ही 31 अक्टूबर, 2019 से जम्मू कश्मीर और लद्दाख को दो अलग-अलग केंद्र शासित प्रदेशों में पुनर्गठित कर दिया गया। इसके साथ ही केंद्र सरकार के 170 क़ानून जो पहले इस क्षेत्र में लागू नहीं थे अब वह इस क्षेत्र में लागू कर दिए गए हैं। यहाँ के स्थानीय निवासियों और दूसरे राज्यों के नागरिकों के बीच अधिकार अब समान हो गए। यह क्षेत्र अब देश के बाकी हिस्सों के साथ विकास की राह पर चल रहा है।[6]

देश की ज्वलंत समस्या जैसे खाद्य समस्या के हल के लिए सरकार द्वारा जो कदम उठाए गए उनमें मुख्य निम्न प्रकार से हैं --

(i) **संविधान (तृतीय संशोधन) अधिनियम, 1954 :** इस संशोधन के द्वारा केंद्र सरकार को सभी प्रकार के आवश्यक पदार्थ के उत्पादन, आपूर्ति और वितरण पर पूर्ण नियंत्रण की शक्ति प्राप्त हो गई। इससे पूर्व की व्यवस्था में आवश्यक खाद्य पदार्थों के पूर्ण नियंत्रण में रखने की शक्ति केंद्रीय सरकार की न होकर राज्यों को प्राप्त थी। स्थिति बड़ी असंतोषजनक थी। खाद्य पदार्थों की आपूर्ति कम थी। इस समस्या का निराकरण इस संविधान संशोधन द्वारा किया गया।

(ii) भूमि सुधार क़ानूनों को लागू करने के उद्देश्य से विभिन्न राज्यों में कई अधिनियम बनाए गए जैसे उत्तर प्रदेश जमींदारी उन्मूलन एवं भूमि व्यवस्था अधिनियम, 1952 जिसके द्वारा उत्तर प्रदेश में जमींदारी प्रथा समाप्त कर दी गई तथा नई कृषि भूमि व्यवस्था लागू की गई। संविधान (29वाँ संशोधन) अधिनियम 1972, संविधान (66वाँ संशोधन) अधिनियम 1990 द्वारा देश भर के भूमि सुधार क़ानून न्यायिक पुनर्विलोकन की परिधि के बाहर कर दिए गए। इन सुधारों से देश के कृषि क्षेत्र में हरित क्रांति लाने में काफी सहायता मिली।7

(iii) संविधान (26वाँ संशोधन) 1971 द्वारा देश के भूतपूर्व रजवाड़ों के विशेषाधिकारों

को समाप्त कर दिया गया।

देश में महिलाओं के रहने की स्थिति में सुधार के लिए और उनमें अपने क़ानूनी अधिकारों के बारे में जागरूकता बढ़ाने के लिए कई अधिनियम केंद्र सरकार द्वारा बनाए गए जिनमें मुख्य इस प्रकार से हैं[8] --

(i) **न्यूनतम मजदूरी अधिनियम, 1948 :** यह अधिनियम पुरुष और महिला श्रमिकों के बीच मजदूरी के भेदभाव या उनके न्यूनतम मजदूरी में भेदभाव की अनुमति नहीं देता है।

(ii) **खान अधिनियम 1952 और कारखाना अधिनियम, 1948 :** इन दोनों अधिनियमों में यह प्रावधान है कि महिलाओं को 7:00 p.m. से 6:00 a.m. के बीच में काम पर नहीं लगाया जा सकता है और इसके साथ ही काम के दौरान उनकी सुरक्षा और कल्याण का भी ध्यान रखना अनिवार्य है।

(iii) **हिंदू विवाह अधिनियम, 1955 :** इसके द्वारा एक समय में एक ही पति या पत्नी रखने का प्रावधान है। इसमें महिलाओं और पुरुष दोनों को तलाक और विवाह के संबंध में समान अधिकार दिए गए हैं।

(iv) **हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम, 1956 :** इस अधिनियम के द्वारा माता-पिता की संपत्ति में पुरुषों के साथ महिलाओं को भी समान अधिकार दिए हैं अर्थात् यदि लड़की चाहे तो अपने पिता की संपत्ति में अपना हिस्सा प्राप्त कर सकती है।

(v) **अनैतिक देह व्यापार रोकथाम अधिनियम, 1956 :** इसके द्वारा महिलाओं और लड़कियों के यौन शोषण के लिए उनकी तस्करी की रोकथाम के प्रावधान है। यह अधिनियम वेश्यावृत्ति के उद्देश्य से महिलाओं और लड़कियों की तस्करी की रोकथाम के लिए बनाया गया है।

(vi) **दहेज निषेध अधिनियम, 1961 :** इस अधिनियम के द्वारा शादी के पहले या बाद में महिलाओं से दहेज लेना और देना दोनों ही अपराध की श्रेणी में आता है।

(vii) **मातृत्व लाभ अधिनियम, 1961 :** यह अधिनियम महिलाओं को बच्चों के जन्म से पहले 13 सप्ताह और जन्म के बाद के 13 सप्ताह तक वेतनिक अवकाश प्रदान करता है ताकि वह बच्चे की पर्याप्त देखभाल कर सके। इस गर्भावस्था के दौरान महिलाओं को रोजगार से बाहर निकालना क़ानूनन जुर्म है।

(viii) **गर्भावस्था अधिनियम, 1971 :** के द्वारा कुछ विशेष परिस्थितियों जैसे बलात्कार की पीड़ित महिला या लड़की या किसी बीमारी की हालत में मानवीय और चिकित्सा आधार पर 24 सप्ताह तक के गर्भ को समाप्त करने की अनुमति दी जा सकती है। सामान्य परिस्थितियों में 20 सप्ताह के गर्भ को गिराने की अनुमति दी गई है।

(ix) **समान पारिश्रमिक अधिनियम, 1976 :** इस अधिनियम के अनुसार समान कार्य या समान प्रकृति के काम के लिए पुरुषों और महिलाओं दोनों श्रमिकों को समान पारिश्रमिक का भुगतान प्रदान किया जाएगा। साथ ही भर्ती प्रक्रिया में महिलाओं के साथ लिंग के आधार पर किसी भी प्रकार का भेदभाव गैर क़ानूनी होगा।

(x) **महिलाओं का अश्लील प्रदर्शन प्रतिषेध अधिनियम, 1986 :** यह अधिनियम महिलाओं का विज्ञापनों, प्रकाशनों, लेखन, पेंटिंग या किसी अन्य तरीकों से अभद्र प्रदर्शन प्रतिबंधित करता है।

(xi) **सती रोकथाम अधिनियम, 1987 :** यह अधिनियम सती प्रथा (पति की मृत्यु के बाद पत्नी को जबरन चिता में जलाना) का देश के किसी भी भाग में प्रचलन या उसका महिमामंडन को अपराध घोषित करता है। किसी भी महिला को सती होने के लिए बाध्य नहीं किया जा सकता है।

(xii) **राष्ट्रीय महिला आयोग अधिनियम, 1990 :** सरकार ने इस आयोग का गठन महिलाओं के संवैधानिक अधिकारों और अन्य सुरक्षा उपायों से संबंधित सभी मामलों का अध्ययन, जाँच और न्याय करने के लिए किया गया है।

(xiii) **घरेलू हिंसा अधिनियम, 2005 :** इसके द्वारा महिलाओं को सभी प्रकार के घरेलू हिंसा (शारीरिक, मानसिक, मौखिक या भावनात्मक हिंसा) से संरक्षण का प्रावधान किया गया है।

(xiv) **कार्यस्थल पर महिलाओं के यौन उत्पीड़न (रोकथाम, निषेध और निवारण) अधिनियम, 2013 :** इस अधिनियम में सार्वजनिक और निजी, संगठित या संगठित दोनों ही क्षेत्रों में सभी कार्य स्थलों पर महिलाओं को यौन उत्पीड़न से सुरक्षा प्रदान की गई है।

(xv) **लीगल सर्विसेज अथॉरिटी एक्ट :** इसके अनुसार बलात्कार की शिकार महिला को मुफ्त क़ानूनी सलाह पाने का अधिकार है। लीगल सर्विसेज अथॉरिटी की तरफ से किसी पीड़ित महिला की मदद के लिए इंतजाम किया जाता है।

(xvi) **जीरो एफ.आई.आर. का अधिकार :** दंड प्रक्रिया सहिंता 1873 की धारा 160 के अनुसार किसी भी महिला के खिलाफ अगर अपराध होता है तो वह किसी भी थाने में या कहीं से भी एफआईआर दर्ज कर सकती है। इसके लिए जरूरी नहीं कि शिकायत उसी थाने में दर्ज हो जहाँ घटना हुई है। जीरो एफ आई आर को बाद में उस थाने में भेज दिया जाएगा जहाँ अपराध हुआ है। महिला ईमेल, रजिस्टर्ड पोस्टल, चिट्ठी द्वारा भी किसी भी थाने में एफआईआर दर्ज करा सकती है।

इसी प्रकार, महिला विकास के अन्य प्रासंगिक क्षेत्र के लिए अधिनियम जैसे नारी शक्ति वंदन अधिनियम और सरकारी योजनाएँ जैसे सुकन्या समृद्धि योजना, 2015, बेटी बचाओ बेटी पढ़ाओ 2015, आँगनबाड़ी आदि बनाई गई हैं। जिनके द्वारा देश की महिलाओं के सशक्तिकरण

और उनकी स्थिति सुधारने में बहुत मदद मिली है और जिसके परिणामस्वरूप भारतीय समाज में बदलाव के साथ एक क्रांतिकारी परिवर्तन आया है।

इसी प्रकार बाल विकास और किशोरों को न्याय देने के उद्देश्य से भारत सरकार द्वारा बच्चों की देखभाल और संरक्षण अधिनियम, 2000, बच्चों को मुक्त और अनिवार्य शिक्षा का अधिकार अधिनियम, 2009, बाल श्रम निषेध और विनियमन अधिनियम, 2016, बाल विवाह निषेध अधिनियम, 2006 बनाए गए हैं।

क़ानूनों में सुधार की दृष्टि से अंग्रेजों द्वारा लागू किए गए तीन क़ानूनों की जगह वर्ष 2023 में तीन नए क़ानून बनाए गए। इन नए क़ानूनों का उद्देश्य पूर्ववर्ती क़ानूनों की तरह दंड देने का नहीं बल्कि न्याय उपलब्ध कराना है। यह बदलाव निम्न प्रकार से हैं। अब भारतीय दंड संहिता, 1860 के स्थान पर भारतीय न्याय संहिता, 2023, दंड प्रक्रिया संहिता, 1898 की जगह भारतीय नागरिक सुरक्षा संहिता, 2023 तथा भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 की जगह भारतीय साक्ष्य विधेयक, 2023 बनाए गए हैं। यह बदलाव 1 जुलाई, 2024 से अमल में आ गए हैं। प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी के शब्दों में 'यह क़ानून समाज के गरीब, वंचित और कमजोर वर्गों की बढी हुई सुरक्षा सुनिश्चित करते हैं। संगठित अपराध, आतंकवाद और ऐसे अन्य अपराधों के खिलाफ कड़ी कार्रवाही में सहायक होंगे, जो प्रगति की दिशा में हमारी शांतिपूर्ण यात्रा को कमजोर कर रहे हैं। यह क़ानूनी सुधार भारत के क़ानूनी ढाँचे को अमृत काल में अधिक प्रासंगिक तरीके से फिर से परिभाषित करते हैं। इससे हमने राजद्रोह से संबंधित पुराने क़ानूनों को भी समाप्त कर दिया है। यह औपनिवेशिक युग के क़ानूनों के अंत का प्रतीक है।'[9]

भारत सरकार ने ग्राम विकास और ग्रामीणों के उत्थान के लिए बहुत सारी सरकारी योजना चला रखी है जिनका लाभ किसान सहित अन्य ग्रामीणों को मिल रहा है। इन योजनाओं के परिणाम स्वरूप स्वतंत्रता के बाद 25 करोड़ लोग गरीबी रेखा से बाहर आए। इन योजनाओं में से मुख्य योजनाएँ निम्न प्रकार से हैं --

1. **स्वामित्व योजना :** इस योजना के तहत गाँव में लोगों को संपत्ति कार्ड का वितरण किया जाता है। कार्ड प्राप्त होने से लोगों का जमीन का मालिकाना हक मिल जाता है। ग्रामीण इलाके में निवास करने वाले भूमि धारकों को संपत्ति कार्ड के माध्यम से बैंक से सस्ता ऋण लेने में आसानी होती है।
2. **आयुष्मान भारत योजना :** आयुष्मान भारत योजना भारत सरकार की एक स्वास्थ्य योजना है जिसे 1 अप्रैल, 2018, को पूरे भारत में लागू कर दिया गया है। इस योजना का उद्देश्य आर्थिक रूप से कमजोर लोगों (बीपीएल कार्ड धारकों) का 5 रुपए लाख तक का स्वास्थ्य बीमा उपलब्ध कराना है। प्रधानमंत्री के अनुसार 55 करोड़ बीपीएल कार्ड धारक मार्च 2024 तक इस योजना से प्रत्यक्ष लाभ उठा चुके हैं।
3. **जल जीवन मिशन :** जल जीवन मिशन का उद्देश्य राज्य के उन ग्रामीण इलाकों में पानी

की सुविधा उपलब्ध कराना है जहाँ पानी की समस्या काफी गंभीर है। इस मिशन के तहत जिन इलाकों में पानी नहीं है वहाँ हर घर में पाइप लाइन के माध्यम से पानी पहुँचाया जाएगा। प्रधानमंत्री के अनुसार मार्च 2024 तक 11 करोड़ परिवारों को पीने का शुद्ध पानी इस योजना द्वारा मिल रहा है।

4. **प्रधानमंत्री आवास योजना (ग्रामीण) :** जिन लोगों के पास रहने के लिए घर नहीं है और जिनकी आर्थिक स्थिति खराब है और वह अपना घर नहीं बना पाते, ऐसे जरूरतमंद लोगों के लिए केंद्र सरकार की ओर से प्रधानमंत्री ग्रामीण आवास योजना शुरू की गई है। इस योजना के तहत शहरी क्षेत्र के लोगों को 120000 रुपए और ग्रामीण क्षेत्र में रहने वाले लोगों को 130000 रुपए की वित्तीय सहायता अपने घर बनाने के लिए प्रदान की जाती है।

5. **मनरेगा :** यह योजना प्रत्येक वित्तीय वर्ष में किसी भी ग्रामीण परिवार के उन व्यसक सदस्यों को 100 दिन का रोजगार उपलब्ध कराती है जो प्रतिदिन 220 रुपए की न्यूनतम मजदूरी पर सार्वजनिक कार्य संबंधित अकुशल मजदूरी करने को तैयार हैं।

6. **स्वयं सहायता समूहों का सशक्तिकरण :** इस योजना का उद्देश्य असंगठित ग्रामीण महिलाओं को संगठित कर महिलाओं को सामाजिक एवं आर्थिक रूप से सशक्त बनाना है। इन महिला स्वयं सहायता समूहों द्वारा स्कूल मध्याह्न भोजन, आँगनबाड़ी-पूरक पोषण आहार कार्यक्रम, आँगनबाड़ी केंद्र के हित ग्राहियों के लिए रेडी-टू-ईट और सार्वजनिक वितरण प्रणाली के तहत उचित मूल्य की दुकान के संचालन के साथ-साथ विभिन्न कार्य किए जा रहे हैं।

7. **प्रधानमंत्री ग्रामीण सड़क योजना :** इस योजना का प्रमुख उद्देश्य ग्रामीण इलाकों में 500 या इससे अधिक आबादी वाले (पहाड़ी और रेगिस्तानी क्षेत्रों में ढाई सौ लोगों की आबादी वाले गाँव) सड़क संपर्क से वंचित गाँवों को बारहमासी सड़कों से जोड़ना है ताकि छोटे किसान शहरों से सीधे जुड़ सकें और अपनी फसल वहाँ पर बेच पाएँ।

8. **स्वच्छ भारत मिशन :** भारत सरकार द्वारा प्रारंभ स्वच्छ भारत मिशन का उद्देश्य गलियों, सड़कों तथा अधोसंरचना को साफ सुथरा रखना है। सामुदायिक शौचालयों के निर्माण के माध्यम से खुले में शौच करने की प्रथा को समाप्त करना है। इस योजना के तहत शौचालय रहित घरों में शौचालय निर्माण के लिए सरकार की ओर से सहायता राशि प्रदान की जाती है।

9. **प्रधानमंत्री आदर्श ग्राम योजना :** इस योजना का उद्देश्य अनुसूचित जाति बाहुल्य गाँवों का समेकित विकास करना है। भारत सरकार की इस योजना के तहत पानी, स्वच्छता, आवास, बिजली आदि जैसी बुनियादी सुविधाएँ उपलब्ध कराने के लिए उक्त गाँवों के विकास करने के उद्देश्य से औसतन 20 रुपए लाख प्रति गाँव केंद्रीय सहायता के रूप में प्रदान करना है।

10. **किसान सम्मान निधि :** किसानों को खेती बाड़ी के काम में सुविधा पहुँचाने के उद्देश्य से प्रत्येक किसान को केंद्र सरकार द्वारा 500 रुपए प्रति माह सहायता दी जाती है जो प्रत्येक तिमाही या चार महीने में एक बार उसके बैंक खाते में सीधे जमा हो जाती है।
11. **मुफ्त खाद्यान योजना :** कॉविड महामारी के दिनों में समाज में कमजोर वर्गों को मुफ्त खाद्यान उपलब्ध कराने का निर्णय सरकार ने किया था। बाद में इन कल्याणकारी योजना को जारी रखते हुए सरकार ने देश के 80 करोड़ से अधिक लोगों को 2029 तक मुफ्त खाद्यान्न उपलब्ध कराने का निर्णय लिया है।
12. **सौभाग्य योजना :** इस योजना द्वारा हर घर को बिजली पहुँचाने का लक्ष्य रखा गया है।
13. **उज्ज्वला योजना :** इस योजना द्वारा हर घर में मुफ्त रसोई गैस कनेक्शन पहुँचाने का लक्ष्य रखा गया है।

देश की अर्थव्यवस्था की स्थिति को सुधारने के लिए स्वतंत्र भारत की सबसे पहले बनी सरकार ने पंचवर्षीय योजना बनाई। यह पंचवर्षीय योजना देश की अर्थव्यवस्था को उन्नत बनाने के लिए सरकार द्वारा अपनाई गई आर्थिक रणनीति थी। पहली पंचवर्षीय योजना 1951 से शुरू की गई। इस योजना में मुख्यतः जोर निजी क्षेत्र के ऐसे उद्योगों की तरक्की करने पर था जो देश में उपलब्ध कच्चे माल का अपने निर्माण में उपयोग करते थे। इन उद्योगों में कृषि, मछली पालन, मुर्गी पालन, खनन और बागवानी आदि शामिल थे। इस योजना के सफलतापूर्वक पूर्ण होने पर देश में शिक्षा, स्वास्थ्य और उद्योगों की उन्नति के लिए आधार तैयार होने में मदद मिली।

प्रथम पंचवर्षीय योजना के सफलतापूर्वक पूर्ण होने से देश की अर्थव्यवस्था में काफी सुधार आया। देश की कुल आमदनी में 18 प्रतिशत और प्रति व्यक्ति आय में 11 प्रतिशत की वृद्धि हुई। देश के विदेशी मुद्रा भंडार में भी वृद्धि हुई। देश का घरेलू उत्पादन में 14 प्रतिशत की वृद्धि हुई और देश की अर्थव्यवस्था में 3.6 प्रतिशत प्रति वर्ष की दर से वृद्धि दर्ज की गई। इस अवधि में मानसून ने भी काफी साथ दिया जिससे कृषि उत्पादन में काफी वृद्धि हुई। कई सिंचाई परियोजनाएँ इस अवधि में प्रारंभ की गई जैसे भाखड़ा और हीराकुंड बांध परियोजना, कोसी कोयना और चंबल नदियों पर बांध बनाने की परियोजनाएँ प्रारंभ हो चुकी थी। विश्व स्वास्थ्य संगठन ने भी स्वास्थ्य संबंधी समस्याओं को हल करने में भारत सरकार की मदद की। लगभग 8600 स्वास्थ्य शिक्षा संस्थान इन्हीं पाँच वर्षों में देश भर में स्थापित हुई। इन शिक्षण संस्थाओं द्वारा न केवल चिकित्सीय शिक्षा प्रदान की जाती है बल्कि चिकित्सीय सुविधा और चिकित्सालय की भी सुविधा प्रदान की जाती है। विश्व स्वास्थ्य संगठन के इस योगदान से भारतीय अर्थव्यवस्था को मजबूती मिली। इसी पंचवर्षीय योजना के अंतर्गत देश में पाँच इंडियन इंस्टीट्यूट आफ टेक्नोलॉजी स्थापित की गई जिनके द्वारा उच्च शिक्षा को प्रोत्साहित किया गया। विश्वविद्यालय अनुदान आयोग की स्थापना भारत में उच्च शिक्षा की प्रगति और निगरानी के लिए की गई। इससे शिक्षा क्षेत्र में काफी प्रगति हुई। भारी उद्योगों को बढ़ावा देने के लिए

देश में प्रतिवर्ष 35000 स्टील उत्पादन की क्षमता वाले पाँच स्टील प्लांट स्थापित करने के लिए परियोजना प्रारंभ की गई।

प्रथम पंचवर्षीय योजना के कार्यकाल के पूरा होने पर देश के औद्योगिक उत्पादन में 38ः की वृद्धि हुई। कुल 1770 किलोमीटर की सड़कों का निर्माण हुआ जिसमें 208 किलोमीटर के राजमार्ग भी शामिल थे, जिसके द्वारा लोगों को आवागमन में काफी सुविधा हुई। इसी कार्यकाल में सवारी और माल ढोने की क्षमता में भी काफी विस्तार किया गया। देश में डेयरी क्षेत्र को मजबूती प्रदान करने के लिए 13 जनवरी, 1970 को श्वेत क्रांति की शुरुआत की गई। इस क्रांति द्वारा दूध उत्पादन के क्षेत्र में भारत दुनिया के शीर्ष देशों में शामिल हो गया।

आजादी के बाद प्रजातंत्र को मजबूत करने और देश की ज्वलंत समस्याओं को हल करने के लिए देश में आवश्यक संवैधानिक संशोधन और सरकारी योजनाएँ और क़ानून बनाने के बाद वर्तमान प्रधानमंत्री द्वारा 15 अगस्त, 2022 को 76वें स्वतंत्रता दिवस के अवसर पर सन् 2047 तक स्वतंत्रता के 100 वर्ष पूरे होने तक देश को विकसित भारत बनाने का लक्ष्य रखा गया है, और इस लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए प्रधानमंत्री द्वारा 'पंच प्रण' के रूप में पाँच कार्य क्षेत्रों की पहचान की है। प्रधानमंत्री के अनुसार इन क्षेत्रों में एक एकीकृत शक्ति के रूप में आगे बढ़ने से हम देशवासी देश को एक आत्मनिर्भर विकसित देश बना सकते हैं। यह कार्य क्षेत्र हैं --

(1) महिला एवं बच्चे, (2) जल, सांस्कृतिक गौरव, पर्यावरण के लिए जीवन शैली, (3) स्वास्थ्य और कल्याण, (4) समावेशी विकास; (5) आत्मनिर्भर भारत और एकता।

आजादी के बाद से भारत ने कई उपलब्धियाँ हासिल की है। वर्तमान में देश की अर्थव्यवस्था विश्व की पाँचवीं सबसे बड़ी अर्थव्यवस्था है और यह अर्थव्यवस्था दुनिया की तीसरी सबसे बड़ी अर्थव्यवस्था बनने की और अग्रसर है। भारत विश्व का सबसे बड़ा लोकतांत्रिक देश है। देश ने स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद कई उपलब्धियाँ हासिल की है जिनमें कुछ इस प्रकार हैं।[10]

1. **डिजिटल विकास :** 80 के दशक के मध्य में बड़े पैमाने पर देश में कंप्यूटीकरण प्रारंभ हुआ। यह स्वतंत्रता के बाद भारत के लिए महत्त्वपूर्ण सकारात्मक विकासों में से एक है जिसके द्वारा भारत एक विशाल आईटी शक्ति के रूप में उभरा है। अब देश का भविष्य भी डिजिटल व्यवस्था को ही माना जाता है। डिजिटल लेनदेन का उदय और छोटे व्यापारियों में क्यूआर कोड की बढ़ती लोकप्रियता सुर्खियों में है। मंदिरों में भी क्यूआर कोड से डिजिटल दान हो रहा है। भारत में वैज्ञानिकों ने दूरसंचार के क्षेत्र में भी कई कीर्तिमान स्थापित किए हैं। बात ऑप्टिकल फाइबर की हो, वाई-फाई अथवा 5G की या फिर सुपर कंप्यूटर, क्वांटम कंप्यूटिंग की आज सूचना संचार के विकास से भारत ई प्रशासन, डिजिटल इकोनॉमी, ई लर्निंग, मौसम पूर्वानुमान में दुनिया के शीर्ष देशों में शामिल है। संचार के विकास में रोजगार सृजन के नए द्वार खोल दिए है। भारत का आईटी सेक्टर दुनिया को राह दिखा रहा है। सूचना संसार ने मनुष्य को आपस में जोड़ने के साथ सामाजिक, आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर बनाया है।

2. बैंकों का बढ़ता नेटवर्क देश में 1969 में हुआ 14 बैंकों का राष्ट्रीयकरण बैंकों को जन उन्मुखी बनाने का पहला बड़ा प्रयास था। तब से देश में बैंकिंग व्यवस्था में काफी सुधार हुआ है। स्वतंत्रता के समय 1947 में देश में जहाँ 664 निजी बैंकों की लगभग 5000 शाखाएँ थीं वहीं आज 12 सरकारी बैंक, 22 निजी क्षेत्र की बैंक, 43 क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक और 46 विदेशी बैंकों की लगभग 14,0000 शाखाएँ देश में कार्यरत हैं। केंद्र सरकार द्वारा 10 सरकारी बैंकों का बड़े बैंकों में विलय करके बैंकों में कर्मबल का सही इस्तेमाल करते हुए बैंकों के आंतरिक खर्चों में कटौती की गई। 28 अगस्त 2014 को भारत सरकार ने देश की जनता को बैंकिंग व्यवस्था से जोड़ने के लिए जनधन योजना लागू की। इस योजना के तहत 31.31 करोड़ लोगों के खाते खोले गए जिसमें भारत सरकार द्वारा सरकारी योजनाओं के तहत दी जाने वाली अनुदान राशि केंद्र सरकार द्वारा सीधे लाभार्थी के खाते में भेजी जा रही है। अब बिचौलियों के लिए गरीबों को लूटना मुश्किल हो गया है।
3. **अर्धव्यवस्था का वैश्वीकरण :** वर्ष 1991 में भारत सरकार द्वारा अर्थव्यवस्था का वैश्वीकरण करके औद्योगिक लाइसेंसिंग प्रणाली को समाप्त कर दिया गया और अर्थव्यवस्था को निजी क्षेत्र की अधिक भागीदारी के साथ-साथ विदेशी निवेश के लिए भी खोल दिया गया। 1991 के सुधारों के कारण वैश्विक जीडीपी में भारत की रैंकिंग तेजी से बढ़ी है।
4. **गुड्स एंड सर्विस टैक्स (जी एस टी) :** भारत सरकार ने एक देश-एक कर के उद्देश्य से 1 जुलाई 2017 को जीएसटी लागू किया। यह देश में कर सुधार की दिशा में एक बड़ा कदम है। जीएसटी लागू होने से पहले किसी उत्पाद पर हर राज्य में अलग-अलग उत्पादन कर व बिक्री कर लगता था। जीएसटी लागू होने के बाद किसी उत्पाद की कीमत हर राज्य में समान हो गई है क्योंकि राज्यों को मिलने वाले उनके हिस्से का टैक्स केंद्र सरकार देती है। इस प्रकार देश में किसी उत्पाद पर हर राज्य में वसूले जाने वाले अलग अलग उत्पादन कर व बिक्री कर की व्यवस्था को समाप्त कर दिया गयाद्य
5. **अंतरिक्ष के क्षेत्र में उपलब्धियाँ :** अंतरिक्ष के क्षेत्र में आत्मनिर्भरता को अमली जामा पहनाने के लिए 1969 में भारतीय अंतरिक्ष अनुसंधान संगठन (इसरो) का गठन किया गया। भारत के अंतरिक्ष कार्यक्रम का उद्देश्य संपूर्ण मानवता के कल्याण के लिए विज्ञान और प्रौद्योगिकी की भूमिका को और अधिक विस्तार तथा गहराई प्रदान करना है। अंतरिक्ष विज्ञान के क्षेत्र में नई उपलब्धियों ने युवा पीढ़ी की कल्पना शक्ति को नए पंख दिए हैं और उनमें वैज्ञानिक दृष्टिकोण पनपेगा। अंतरिक्ष क्षेत्र में भारत ने कई उपलब्धियाँ हासिल की है। 22 जुलाई, 2019 को चंद्रयान-दो द्वारा भारत चंद्रमा के दक्षिणी ध्रुव के क्षेत्र पर उतरने वाला पहला देश बन गया है। चंद्रयान-तीन को चंद्रमा के उसी स्थान पर जहाँ चंद्रयान-दो उतरा था, उतारने के बाद इसरो ने एक सौर मिशन भी शुरू किया है। सन् 2023 में आदित्य एल-1 सफलतापूर्वक हेलो ऑर्बिट में स्थापित किया गया जो कि एक सौर दूरबीन है। इसरो ने मंगल

ग्रह की जानकारियाँ जुटाने हेतु 5 नवंबर, 2013 को मार्स ऑर्बिटर मिशन को सफलता पूर्वक लॉन्च किया और मंगल की कक्षा में प्रवेश करने वाला एशिया का पहला देश बन गया है और वह भी बहुत कम खर्चे में। अंतरिक्ष के ब्लैक होल जैसे रहस्यों का अध्ययन करने के लिए अपने पहले एक्स-रे पोलरीमीटर सैटेलाइट को प्रक्षेपित किया गया है। हमारे प्रथम मानव अंतरिक्ष उड़ान कार्यक्रम 'गगनयान मिशन' की तैयारी सुचारू रूप से आगे बढ़ रही है। भारत के पास पीएसएलवी और जीएसएलवी जैसे अत्यंत सफल प्रक्षेपण यान है।

6. **रक्षाक्षेत्र में उपलब्धियाँ :** भारत ने 18 मई, 1974 को और फिर 11, 13 मई, 1998 में भूमिगत परमाणु परीक्षण करके भारत को परमाणु शक्ति संपन्न देश बना दिया। इस प्रकार भारत दुनिया के उन नौ देशों की श्रेणी में शामिल हो गया है जिनके पास परमाणु हथियार हैं। आज भारत रक्षा क्षेत्र में पूर्ण रूप से आत्मनिर्भर हो गया है और सभी प्रकार की चुनौतियों से निपटने में सक्षम है। वायु सेवा के लड़ाकू विमानों में राफेल, तेजस, सुखोई, मिग 29 और मिग-21 शामिल हैं। भारत की वायुसेना दुनिया की चौथी सबसे बड़ी वायुसेना है। भारतीय नौसेना दक्षिण एशिया की सबसे ताकतवर सेना है। सेना के पास कई प्रकार की मिसाइलें हैं जिनमें ब्रह्मोस भी शामिल है जो भारत में निर्मित है।

7. **चिकित्सा के क्षेत्र में उपलब्धियाँ :** 12 मई 2020 को कोविड-19 महामारी से लड़ने के लिए सरकार ने भारत के सकल घरेलू उत्पाद के 10 प्रतिशत के बराबर 20 लाख करोड़ रुपए के विशेष आर्थिक और व्यापक पैकेज की घोषणा की। इस अभियान के अंतर्गत बड़े पैमाने पर टीकाकरण का कार्यक्रम चलाया गया और भारत में निर्मित दो टीकों को-वैक्सीन और कोविशील्ड के प्रयोग से कॉविड 19 महामारी को रोकने में सफलता मिली और भारत की इस सफलता के कारण भारत के चिकित्सा वैज्ञानिकों ने दुनिया को राह दिखाने का काम किया है। हमने चेचक, हैजा, येलो फीवर, मलेरिया जैसी गंभीर बीमारियों को देश से जड़ से खत्म कर दिया है। आज अन्य देशों की अपेक्षा भारत में गंभीर से गंभीर बीमारियों का इलाज 65 से 90 प्रतिशत सस्ता और उच्च कोटि का दिया जाता है। भारत में मात्रा के हिसाब से दुनिया का तीसरा सबसे बड़ा औषधि उद्योग है। भारतीय फार्मा कंपनियों ने अपनी मूल्य स्पर्धा और अच्छी गुणवत्ता से सक्षम होकर वैश्विक पहचान बनाई है जिसके कारण दुनिया के लिए 60 प्रतिशत टीके और 20 प्रतिशत जेनेरिक दवाएँ भारत से निर्यात की जाती हैं। भारत में स्वास्थ्य सेवा क्षेत्र में जिसमें अस्पताल, चिकित्सा उपकरण, परीक्षण, आउटसोर्सिंग, टैली मेडिसिन, चिकित्सा पर्यटन और स्वास्थ्य बीमा शामिल है, में अभूतपूर्व वृद्धि और उन्नति हुई है। भारत में मनोदैहिक पद्धति से शरीर का इलाज किया जाता है। अन्य देशों की अपेक्षा भारत में इलाज 65 से 90 प्रतिशत तक सस्ता और उच्च क्वालिटी का किया जाता है।

8. **अल्पसंख्यकों से संबंधित फैसले :** केंद्र सरकार ने 2018 में मुसलमानों को हज यात्रा के लिए दी जाने वाली अनुदान राशि समाप्त कर दी। अनुदान राशि समाप्त के निर्णय से केंद्र सरकार

को 700 रुपए करोड़ प्रति वर्ष बचत होनी प्रारंभ हो गई। 1 अगस्त, 2019 से मुस्लिम महिला विवाह अधिकार संरक्षण विधेयक लागू किया गया जिससे मुस्लिम पति द्वारा अपनी पत्नी को तीन बार तलाक कहकर तलाक देना क़ानूनी जुर्म बन गया है। इसके अतिरिक्त केंद्र सरकार ने 10 जनवरी, 2020 को नागरिकता संशोधन क़ानून लागू किया। इस क़ानून से पाकिस्तान, अफगानिस्तान, बांग्लादेश में रह रहे हिंदू, सिख, बौद्ध, पारसी और यहूदी लोगों को भारतीय नागरिकता मिल सकती है यदि वह भारत का नागरिक बनना चाहे। इस क़ानून में मुस्लिम वर्ग को शामिल नहीं किया गया है।

9. **उन्नत सड़के :** भारत सरकार ने जनता की आवागमन को सुगम बनाने के उद्देश्य से देश में उन्नत सड़कें बनाना प्रारंभ किया। सन् 2001 में भारत सरकार ने स्वर्णिम चतुर्भुज योजना का शुभारंभ किया जो भारत में दिल्ली, मुंबई, चेन्नई और कोलकाता के इन चार प्रमुख शहरों को जोड़ने वाली देश की सबसे बड़ी राजमार्ग परियोजना है। देश में पहली बार प्रतिदिन 37 किलोमीटर राजमार्ग 6 से 12 लाइन के बनाए जा रहे हैं। 1947 में देश के राष्ट्रीय राजमार्ग की कुल लंबाई 24000 किलोमीटर थी जो अब 2024 में 140115 किलोमीटर हो गई है।
10. **रेलवे का विद्युतिकरण :** भारतीय रेलवे अब दुनिया के सबसे बड़े रेलवे नेटवर्कों में से एक है जिसमें 121520 किलोमीटर के रेलवे ट्रैक और 7305 रेलवे स्टेशन शामिल हैं। देश के कुल रेलवे ट्रैक का अधिकांश हिस्से का विद्युतीकरण हो चुका है। यात्रा के समय को कम करने के लिए कई दूरगामी ट्रेनों का संचालन किया गया है जैसे बंदे भारत ट्रेन, गतिमान ट्रेन आदि।
11. **कृषि क्षेत्र :** भारत में कृषि के क्षेत्र में विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी के उपयोग से उल्लेखनीय प्रगति हुई है और देश में हरित क्रांति लाने में काफी सहायता मिली। आज देश में रिकॉर्ड अनाज का उत्पादन हो रहा है। भारत अब दालों का दुनिया में सबसे बड़ा उत्पादक और उपभोक्ता राष्ट्र बन चुका है। चीनी का यह दूसरा और कपास का दुनिया का सबसे बड़ा उत्पादक देश बन गया है। आज़ादी के समय खाद्यान की कमी का सामना करने वाला भारत अब आत्मनिर्भर बन दुनिया भर के देशों को खाद्यान निर्यात कर रहा है।
12. वर्ष 2021 में भारत में भारत की अध्यक्षता में जी-20 शिखर सम्मेलन का सफल आयोजन किया गया जिसके माध्यम से भारत दक्षिणी गोलार्ध के देशों की आवाज के रूप में पहचाना गया।
13. भारत दुनिया का तीसरा बड़ा एविएशन केंद्र बन गया जिससे पर्यटन क्षेत्र में काफी उन्नति हुई है। यह देश में कम से कम पूंजी निवेश में अधिक से अधिक लोगों को रोजगार देने वाला क्षेत्र बनकर उभरा है।
14. 22 जनवरी 2024 को अयोध्या में प्रभु श्री राम के जन्म स्थान पर निर्मित भव्य मंदिर में स्थापित भगवान राम की मूर्ति के प्राण प्रतिष्ठा का ऐतिहासिक समारोह आयोजित

हुआ। इस समारोह को देश के लोगों द्वारा औपनिवेशिक मानसिकता से बाहर आकर उनमे सांस्कृतिक गौरव के पुनरुत्थान के रूप में देखा गया। और अपनी पैतृक विरासत पर गर्व महसूस हुआ। यह वही विरासत है जिस पर हम एक और उन्नत राष्ट्र का निर्माण करेंगे।

आजादी के आंदोलन के इतिहास की तरह ही आज़ादी के बाद के 75 वर्षो की यात्रा सामान्य भारतीयों के परिश्रम नई खोजों और उद्यमशीलता का प्रतिबिंब है। उपरोक्त उपलब्धियाँ तो देश की उपलब्धियों की बानगी भर है। हम भारतीय चाहे देश में रहें या फिर विदेश में हमने अपनी मेहनत से अपनी उद्यमशीलता को साबित किया है। हमें गर्व है हमारे राष्ट्र के संविधान पर। हमें गर्व है हमारी लोकतांत्रिक परंपराओं पर। लोकतंत्र की जननी भारत आज भी लोकतंत्र को मजबूती देते हुए आगे बढ़ रहा है। ज्ञान विज्ञान से समृद्ध भारत आज चंद्रमा से लेकर मंगल तक अपनी छाप छोड़ रहा है।

❑

संदर्भ

1. पुस्तक 'आधुनिक भारत' प्रकाशक NCERT के अध्याय 13
2. वही
3. भारत का वैधानिक एवं संवैधानिक इतिहास, डॉ. परांजपे अध्याय 38
4. BBC न्यूज हिंदी : भारत का संविधान, नरेंद्र मोदी
5. भारत का वैधानिक एवं संवैधानिक इतिहास, डॉ. परांजपे अध्याय 38
6. गूगल न्यूज से साभार
7. उत्तर प्रदेश भूमि निधियाँ : डॉ. आर आर मौर्या
8. गूगल न्यूज, भारत में महिला सशक्तिकरण से संबंधित क़ानून
9. न्यू इंडिया समाचार, 16-31 जनवरी, 2024
10. गूगल न्यूज

सन्तोष खन्ना

भारतीय लोकतंत्र के पचहत्तर वर्ष और कमजोर वर्ग के लिए आरक्षण

देश की सर्वोच्च न्याय संस्था उच्चतम न्यायालय ने एक अगस्त, 2024 को अपने सात सदस्यीय संवैधानिक पीठ से देविंदर सिंह बनाम पंजाब राज्य के दिये एक फैसले में कहा है कि अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति श्रेणियाँ मे उप-वर्गीकरण करना संवैधानिक है अर्थात् इस वर्गीकरण करने से आरक्षण के माध्यम से अपेक्षाकृत अधिक जरूरतमंद लोगों को लाभ देकर उनकी स्थिति में सुधार लाया जा सकता है। वास्तव में उच्चतम न्यायालय ने ईवी. चिन्नप्पा बनाम आंध्र प्रदेश राज्य के मामले में पाँच-सदस्यी संवैधानिक पीठ के पहले वाले फैसले को पलट दिया है जिसमें उप-वर्गीकरण को असंवैधानिक बताया गया था। उच्चतम न्यायालय ने यह भी स्वीकार किया है कि राज्यों को उप-वर्गीकरण करने का अधिकार है। यह फैसला सात न्यायाधीशों की संवैधानिक पीठ द्वारा दिया गया है जिनमें से चार न्यायाधीशों ने यह भी कहा है कि सरकार को क्रीमी लेयर का सिद्धांत भी अनुसूचित जातियों पर लागू करना चाहिए ताकि अनुसूचित जातियों में धनी परिवारों को आरक्षण के लाभ से दूर रखा जा सके।

वास्तव में भारत में जब 26 जनवरी, 1950 को संविधान लागू हुआ तब से संविधान अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति श्रेणियाँ को कई प्रकार का आरक्षण देता है। संविधान में अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति के वर्गों को राजनीतिक आरक्षण तो दिया गया ही है साथ में संविधान उन्हें सार्वजनिक पदों पर रोजगार के संबंध में आरक्षण देता है। इस के अलावा, उन्हें शैक्षिक संस्थानों में प्रवेश के संबंध में भी आरक्षण की व्यवस्था की गई है। अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति वर्गों को संविधान लागू होते ही आरक्षण मिल गया था परंतु बाद में अन्य पिछड़े वर्गों को भी आरक्षण दे दिया गया था।

अनुसूचित जाति भारत की अछूत जाति है। 2011 में अनुसूचित जाति भारत की आबादी का 16.6 प्रतिशत हिस्सा थी। उन्हें मल साफ करने, मृत जानवरों की सफाई करने, चमड़े का काम करने जैसे 'गंदे' काम करने पड़ते थे। उन्हें उच्च जाति के भोजन, पैसे या कपड़े संभालने की अनुमति नहीं थी क्योंकि उन्हें गंदा काम करना था। इसलिए आरक्षण सकारात्मक विभेद का एक रूप है, जो हाशिये के वर्गों के बीच समानता को बढ़ावा देने के लिए बनाया गया है, ताकि उन्हें सामाजिक और ऐतिहासिक अन्याय से बचाया जा सके। सामान्यतः इसका

अभिप्राय रोजगार और शिक्षा में समाज के हाशिये पर मौजूद वर्गों को वरीयता देने से है।

देश में आरक्षण का व्याकरण समझने के लिए यहाँ संविधान के उन प्रावधानों को जान लेना समीचीन होगा जिनके माध्यम से यह आरक्षण दिया गया है।

भारत के संविधान के अनुच्छेद 14 के अंतर्गत कहा गया है कि राज्य प्रत्येक नागरिक को कानून का समान संरक्षण प्रदान करेगा। अनुच्छेद 15 (1) में कहा गया है कि राज्य धर्म, मूल वंश, जाति, लिंग, निवास के आधार पर किसी नागरिक से भेदभाव नहीं करेगा। इसी अनुच्छेद के 15(4) में यह प्रावधान किया गया है कि यह अनुच्छेद सामाजिक और शैक्षणिक रूप से पिछड़े वर्ग अथवा अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों की उन्नति के लिए विशेष उपाय करने पर रोक नहीं लगाएगा।

अनुच्छेद 16(1) के अंतर्गत रोजगार के समान अवसरों की बात करते हुए कहा गया है कि अनुच्छेद 16(2) राज्य किसी भी पद पर सभी नागरिकों को रोजगार के समान अवसरों की गारंटी देता है और उसके साथ धर्म, मूल वंश, जाति, लिंग निवास के आधार पर भेदभाव नहीं करेगा। परंतु अनुच्छेद 16(4) में यह प्रावधान है कि इस अनुच्छेद की कोई बात राज्य को नागरिकों के किसी पिछड़े वर्ग के पक्ष में नियुक्तियों या पदों के आरक्षण के लिए कोई उपबंध करने से नहीं रोकेगी, जिसका प्रतिनिधित्व राज्य की राय में राज्य के अधीन सेवाओं में पर्याप्त नहीं है। संविधान का अनुच्छेद 46 प्रावधान कहता है कि राज्य समाज के कमजोर वर्गों में शैक्षणिक और आर्थिक हितों विशेषतः अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों का विशेष ध्यान रखेगा।

राजनीतिक आरक्षण संबंधी प्रावधान : अनुच्छेद 330 के अंतर्गत लोक सभा में अनुसूचित जातियों को राज्यों के उनकी जनसंख्या के अनुपात में आरक्षण दिया जाएगा। अनुच्छेद 331 के अंतर्गत लोक सभा में अनुसूचित जनजातियों को राज्यों के उनकी जनसंख्या के अनुपात में आरक्षण दिया जाएगा। अनुच्छेद 332 के अंतर्गत राज्यों की विधान सभाओं में अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों को राज्यों में उनकी जनसंख्या के अनुपात में आरक्षण दिया जाएगा।

अनुच्छेद 334 के अंतर्गत यह आरक्षण आरंभ में दस वर्ष के लिए दिया गया था किंतु दस वर्ष समाप्त होने पर हर बार दस वर्ष की अवधि और बढ़ा दी जाती है। वर्ष 1960 में यह अवधि 23वें संविधान संशोधन द्वारा दस वर्ष की बढ़ा कर इसे 1970 कर दिया गया था। बाद में इस अवधि को 45वें संविधान संशोधन द्वारा, 62वें, 79वें और 95वें संविधान संशोधन द्वारा क्रमशः 1980, 1990, 2000, 2010 और 2020 तक बढ़ा दिया गया था। अब इस अवधि को 106वें संविधान संशोधन, 2019 द्वारा बढ़ा कर वर्ष 2030 तक का कर दिया गया है। इसका अभिप्राय यह है कि अब तक यह आरक्षण अस्सी वर्ष तक बढ़ाया गया है। वर्ष 2030 में इसे बढ़ा कर 2040 और बाद में इसे 2050 में कर दिया जाएगा। वर्तमान परिस्थितियों को देखते हुए यह नहीं कहा जा सकता कि इस आरक्षण को कभी समाप्त भी किया जाएगा।

महिलाओं के लिए सीटों का आरक्षण : इधर सितंबर, 2023 में लोक सभा और विधान सभाओं में महिलाओं को भी 33 प्रतिशत आरक्षण दे दिया गया है। यह 128वाँ संविधान संशोधन अधिनियम, 2023 पारित कर संसद और विधान सभाओं में महिलाओं को 33 प्रतिशत आरक्षण दिया गया। इस विधेयक को नारी शक्ति वंदन विधेयक, 2023 का नाम दिया गया। इस अधिनियम में महिलाओं को आरक्षण पंद्रह वर्ष के लिए दिया गया है जिसे संसद द्वारा आगे बढ़ाने का अधिकार दिया गया है।

इसके लिए भारत के संविधान के अनुच्छेद 334 में एक नई धारा जोड़ कर एक नया अनुच्छेद 334(क) बना दिया गया है जिसमें कहा गया है कि इस अधिनियम के प्रभावी होने के बाद कराई गई जनगणना के आँकड़ों के प्रकाशन के बाद उन आँकड़ों के आधार पर सीमांकन कराया जाएगा तब महिलाओं को 33 प्रतिशत आरक्षण दिया जाएगा। यह आरक्षण 15 वर्ष के लिए होगा। अनुच्छेद 330 और 331 में आरक्षित अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति की सीटों में से एक तिहाई सीटें महिलाओं के लिए आरक्षित होगी। 332 के एक अनुच्छेद में 332क जोड़कर यह प्रावधान किया गया है कि राज्यों की विधान सभा में महिलाओं के लिए आरक्षण किया जाएगा इसके अतिरिक्त राज्यों की विधान सभा में आरक्षित अनुसूचित जाति और अनुसूचित जातियों की सीटों में से एक तिहाई सीटें महिलाओं के लिए आरक्षित की जाएगी।

राष्ट्रीय राजधानी दिल्ली को चूँकि राज्य का दर्जा नहीं मिला हुआ है इसलिए उसमें महिलाओं के लिए सीटों के आरक्षण के लिए अलग से प्रावधान किए जाने की आवश्यकता थी। इसके लिए अनुच्छेद 239कक में उपधारा (ख) को जोड़ा गया है। इसके लिए कहा गया है कि राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र दिल्ली को प्रशासनिक और विधायी कार्य के संबंध में विशेष दर्जा दिया गया है, इसलिए अनुच्छेद 239कक के अंतर्गत उपधारा (ख) जोड़ कर यह प्रावधान किया गया है कि संसद द्वारा बनाए गए सभी कानून राष्ट्रीय राजधानी दिल्ली में लागू होंगे।

संसद और राज्य विधान सभाओं में महिलाओं के लिए सीटें आरक्षित करने संबंधी मुद्दा सबसे पहले भारत के स्वतंत्रता संग्राम के दौरान महिलाओं की संस्थाओं द्वारा उठाया गया था। वर्ष 1931 में महिला संस्थाओं ने ब्रिटेन के प्रधानमंत्री को एक शासकीय ज्ञापन भेजा था। फिर स्वतंत्र भारत में वर्ष 1961 को राष्ट्रीय महिला परिप्रेक्ष्य रिपोर्ट में यह सिफारिश की गई थी कि पंचायतों से लेकर संसद तक महिलाओं के लिए सीटों का आरक्षण किया जाए। जब 73वें और 74वें संविधान संशोधन द्वारा देश में त्रि-स्तरीय पंचायत व्यवस्था की गई तो उसी सिफारिश के आधार पर महिलाओं के लिए एक तिहाई सीटें आरक्षित की गई।

संसद और विधान सभाओं में महिलाओं को 33 प्रतिशत आरक्षण देनै के लिए वर्ष 1996 में पहली बार महिला आरक्षण विधेयक संसद में पेश किया गया परंतु सत्तारूढ़ दल के पास बहुमत न होने के कारण यह विधेयक पारित नहीं किया जा सका। अगले लगभग ढाई दशक तक महिला आरक्षण विधेयक संसद में इधर-उधर लुड़कता ही रहा। एक बार तो इसे संसदीय

समिति के पास प्रेषित भी किया गया और संसदीय समिति की उस पर सिफारिशें भी आ गई किंतु इसके बारे में विरोध के स्वर इतने तीव्र रहते कि नतीजा वही रहता ढांक के तीन पात। एक बार तो वर्ष 2010 में राज्य सभा में महिला आरक्षण विधेयक पारित भी हो गया लेकिन लोक सभा में यह अटक गया और इसे कभी अधिनियम बनने का अवसर नहीं मिला।

अंततः जब वर्ष 2023 में मोदी सरकार ने नए संसद भवन में महिला आरक्षण विधायक को संसद में पारित करने का बीड़ा उठाया तो समुचित संसद ने इस विधायक को सर आँखों पर उठाया। विरोध का एक स्वर भी सुनने को नहीं मिला और महिला आरक्षण विधायक नारी शक्ति बंधन अधिनियम नाम से पारित हो गया।

अब इंतजार है तो नई जनगणना कराई जाने की और उसके सीमांकन के आधार पर सीटें आरक्षित की जाएंगी।

संविधान के उक्त प्रावधानों से यह तो स्पष्ट हो गया है अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति वर्गों का राजनीतिक आरक्षण एक प्रकार से स्थायी रुप ले चुका है क्योंकि हर दस वर्ष की अवधि के बाद पिछले पचहत्तर वर्षों से यह अवधि बिना किसी अवरोध के हर दस साल बाद बढ़ा दी जाती है। जहाँ तक अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजातियों को रोजगार के अवसरों और शैक्षणिक संस्थानों में प्रवेश के लिए आरक्षण मिला हुआ है, उस पर कई तरफ से आपत्तियाँ की जाती रहीं हैं। विशेष आर्थिक रुप से सेवाओं आदि में मेरिट की पक्षधर लॉबी तो विरोध करती रहती है। देश के उच्चतम न्यायालय में जब आरक्षण संबंधी मामले जाते हैं तो फैसले देने वाले न्यायाधीश भी कई तरह की टिप्पणियाँ करते रहते हैं। जब सरकार ने संविधान में संशोधन कर आर्थिक दृष्टि से कमजोर वर्गों को दस प्रतिशत आरक्षण दिया तो उस फैसले को भी उच्चतम न्यायालय में चुनौती दी गई थी। उस विषय पर फैसला देते हुए यह भी कहा गया था कि आरक्षण नीति हमेशा के लिए बनी नहीं रह सकती है। न्यायमूर्ति पी.बी. पारदीवाला ने आर्थिक दृष्टि से कमजोर वर्गों के आरक्षण को वैध ठहराने वाले फैसले से सहमति व्यक्त करते हुए कहा कि आरक्षण देने के स्थान पर उन कारणों को दूर किया जाना चाहिए जिससे कमजोर जातियों के लोग सामाजिक और आर्थिक दृष्टि से पिछड़े रह जाते हैं। आरक्षण संबंधी नीति हमेशा के लिए जारी नहीं रखी जा सकती है। इसी मामले में अपनी विमत्त राय में न्यायमूर्ति श्री रविंद्र भट्ट ने सब को याद दिलाया कि बाबासाहेब आंबेडकर ने संविधान सभा में कहा था कि आरक्षण को अस्थाई और अपवाद स्वरूप माना जाना चाहिए अन्यथा आरक्षण समानता के नियम को हड़प जाएगा।

न्यायमूर्ति पारदीवाला ने ही नाना पालखीवाल की पुस्तक 'We, The Nation, The Lost Decade' में नाना पालखीवाल को उद्धृत करते हुए कहा है कि संविधान के मूलभूत ढाँचे में एक भारत, जातिविहीन भारत की कल्पना की गई थी किंतु जाति-पाति में नया जीवन फूँक देने से इस न्याय निर्णय से राष्ट्र की भावना को नुकसान पहुँचाया है इससे संविधान के मूलभूत ढाँचे की अबमानना हुई है। इस फैसले से जाति-पाति का भूत फिर से जीवित हो उठा है।

इसने देश को अगड़े और पिछड़े हिस्सों में बाँट दिया है जिससे समाज में संघर्ष और नफरत की शक्ति पुनः जीवित हो उठी है और इससे पिछड़ापन एक निहित स्वार्थ में तब्दील हो कर रह गया है।'

न्यायमूर्ति ओ. चिनप्पा रेड्डी ने **के.सी. वसंत कुमार बनाम कर्नाटक राज्य** के एक फैसले में कहा था कि पिछड़ों को ऊपर उठने की जरूरत है उनकी आवश्यकता है उनकी जरूरतें हैं उनकी मांगे उनके अधिकार हैं उन्हें सम्मान चाहिए भीख नहीं।

भारत के तत्कालीन प्रधानमंत्री श्री जवाहरलाल नेहरू ने 27 जून 1961 को सभी राज्यों के मुख्यमंत्री को लिखे अपने एक पत्र में राज्यों द्वारा किसी भी जाति और समूह को आरक्षण और विशेषाधिकार देने की प्रवृत्ति पर आपत्ति जताते हुए कहा था कि इस प्रकार की प्रथा को तिलांजलि दे देना चाहिए और अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति श्रेणियाँ की जाति के आधार पर नहीं आर्थिक आधार पर सहायता की जानी चाहिए। नेहरू ने अपने उस पत्र में आगे लिखा कि 'मैं अपने देश को प्रथम दर्जे का राष्ट्र बनाना चाहता हूँ। जब भी हम दोयम दर्जे को प्रोत्साहन देंगे हमें हानि होगी। पिछड़े वर्गों की सहायता हमें उन्हें शिक्षा विशेष रूप से तकनीकी शिक्षा के अवसरों की व्यवस्था करके करनी चाहिए अन्यथा हम उनके लिए केवल वैसाखियो की व्यवस्था करेंगे जो उनके आगे बढ़ाने में सहायक सिद्ध नहीं होंगी। अगर किसी जाति के समाज या समूह के कुछ सदस्यों को आरक्षण की सुविधा से लाभ पहुँचेगा तो शेष समूह या जाति के सदस्य प्रगति नहीं कर पाएँगे, समूची जाति या समूह को इस श्रेणी में से निकालने की जरूरत नहीं है यह सुविधा एक ही पीढ़ी तक दी जानी चाहिए।'

एक अन्य न्याय निर्णय में न्यायमूर्ति पारदीवाला ने आर्थिक दृष्टि से पिछड़े वर्ग के लिए आरक्षण संबंधी मामले में बहुमत की राय से सहमत होते हुए लिखा था कि 'आरक्षण ने देश को बर्बाद कर दिया है और उससे देश की राष्ट्रीय प्रगति बाधित हुई है। आरक्षण नीति अनिश्चितकाल तक लागू नहीं रखी जा सकती। देश में जाति विहीन और श्रेणी विहीन समाज की स्थापना के लिए इस नीति को समाप्त कर दिया जाना चाहिए।[9] 'देविंद्र सिंह के मामले में न्यायमूर्ति बेला त्रिवेदी ने अपने विमत्त निर्णय में लिखा कि 'भारत की स्वतंत्रता के पचतहर वर्ष के बाद आरक्षण नीति पर पुनः विचार करने का समय आ गया है।'

एक बार न्यायमूर्ति पारदीवाला की किसी फैसले पर ऐसी टिप्पणियों पर आपत्ति करते हुए राज्य सभा के 57 संसद सदस्यों ने न्यायाधीश के खिलाफ अभियोग की सूचना दी थी जब न्यायमूर्ति पारदीवाला को पता चला तो उन्होंने अपने फैसले से वह टिप्पणी हटा दी थी।

जब एक अगस्त, 2024 को उच्चतम न्यायालय ने अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति के उप-वर्गीकरण को संविधानिक ठहराने का फैसला दिया तो अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति के काफी लोगों ने उसका जोर-जोर से विरोध किया है और उन्हें अपनी जातियों में उप-वर्गीकरण की बात पसंद नहीं आई क्योंकि ऐसे लोगों का आरक्षण में इतना निहित स्वार्थ हो गया है कि वह स्वयं पीढ़ी दर पीढ़ी इस संबंध में आरक्षण से लाभ उठाना

चाहते हैं और अपनी ही उन जातियों को इससे वंचित रखना चाहते हैं जिन्हें अभी तक इसका लाभ नहीं मिला है। निहित स्वार्थ वाले इन लोगों ने उच्चतम न्यायालय के फैसला के विरोध में एक दिन का भारत बंद बुलाया था। ऐसे लोगों के विरोध के रवैए को रेखांकित करते हुए उच्चतम न्यायालय के इस फैसले के साथ सहमति व्यक्त करते हुए न्यायमूर्ति श्री सतीश चंद्र शर्मा ने कहा है कि 'अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति के वर्गों में काफी लोग उप-वर्गीकरण का विरोध कर रहे हैं जबकि राज्य का कर्तव्य है कि नागरिकों के उन पिछड़े वर्गो को अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति वर्ग में प्रतिनिधित्व देने के लिए उपाय करें जिन्हें अभी पर्याप्त प्रतिनिधित्व नहीं मिला है क्योंकि अभी कुछ लोगों को ही इसका सारा लाभ मिल रहा है। वह आगे लिखते हैं कि उप-वर्गीकरण का विरोध करने वाले संविधान की सूची में शामिल उन अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति के लोगों का रवैया उस व्यक्ति की तरह है जो स्वयं तो रेल के जनरल डिब्बे में घुस जाते हैं किंतु एक बार जनरल डिब्बे में घुसने के बाद वे जनरल डिब्बे के बाहर खड़े लोगों को डिब्बे में घुसने से रोकने का हर संभव प्रयास करते हैं।'

इसी फैसले में इस बात पर सहमति जताते हुए न्यायमूर्ति पंकज मिथाल ने आरक्षण संबंधी नीति पर पुनः विचार करने की जरूरत पर बल देते हुए कहा कि अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति तथा अन्य पिछड़े वर्गों के उत्थान के लिए अब अन्य उपायों पर विचार किया जाना चाहिए। ऐसे लोग सरकार पर यह दवाब बना रहे हैं कि उप-वर्गीकरण के फैसले को संसद के माध्यम से निरस्त किया जाए। यहाँ तक कि ऐसे लोग उच्चतम न्यायालय ने उसके फैसले की समीक्षा करने की याचिका लगा चुके हैं जिसे उच्चतम न्यायालय ने फिलहाल खारिज कर दिया है।

क्या आरक्षण एक मौलिक अधिकार है?

वर्ष 1964 के **देवदासन बनाम भारत संघ मामले** में उच्चतम न्यायालय के न्यायमूर्ति सुब्बाराव ने अपने विमत फैसले में कहा था कि आरक्षण कोई मौलिक अधिकार नहीं है नागरिकों को अवसर की समानता का मौलिक अधिकार है, आरक्षण इस मौलिक अधिकार का अपवाद है। उन्होंने कहा चूँकि आरक्षण मौलिक अधिकार का अपवाद है और आरक्षण अगर 50 प्रतिशत से अधिक दिया जाता है तो इसका यह अर्थ है कि यदि सरकार आरक्षण समाप्त करती है तो पिछड़े वर्ग के नागरिकों को सरकार पर अपना कोटा बहाल करने के लिए दबाव डालने का कोई मौलिक अधिकार नहीं है। कानूनी शब्दावली में भारत के संविधान का अनुच्छेद

16 (4) उच्चतम न्यायालय के अनुसार केवल एक सक्षमकारी प्रावधान है किसी सरकार के लिए आरक्षण अनिवार्य नहीं है।

दशकों बाद **इंद्रा साहनी बनाम भारत संघ मामले** में उच्चतम न्यायालय के 9 -सदस्यीय संवैधानिक पीठ ने न्यायमूर्ति सुब्बाराव की असहमति को स्वीकार किया और कहा कि आरक्षण कोई अपवाद नहीं बल्कि अवसर के सामान्य सिद्धांत का एक घटक है। तब से हमारे देश

में कानून यह है कि अनुच्छेद 16(4) अवसर की समानता का मौलिक अधिकार नहीं है। उच्चतम न्यायालय के अगस्त 2024 के फैसले में यह भी कहा है कि आरक्षण नीति हमेशा के लिए बनी नहीं रह सकती है। उच्चतम न्यायालय ने कहा है कि आरक्षण एक मौलिक अधिकार नहीं है संविधान में आरक्षण कार्यक्रम को सक्षमकारी प्रावधान माना गया है और इसे मौलिक अधिकार नहीं मान जा सकता और राज्य सरकारों को आरक्षण देने का निर्देश देने के लिए कोई परमादेश जारी नहीं किया जा सकता। उच्चतम न्यायालय ने यह भी कहा है कि राज्य से सहायता न प्राप्त करने वाले संस्थानों पर आरक्षण लागू करना मौलिक अधिकार का उल्लंघन है। पदोन्नति में वरियता भी नहीं दी जा सकती है। वर्ष 2020 के **मुकेश कुमार बनाम उत्तराखंड** के फैसले में उच्चतम न्यायालय ने यह कहा है की अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों को प्रोन्नति आरक्षण देना जरूरी नहीं है।

2020 की प्रथम छमाही के दौरान उच्चतम न्यायालय **मुकेश कुमार बनाम उत्तराखंड** के मामले तथा दूसरा मामला **तमिलनाडु में मेडिकल पाठ्यक्रमों में छात्रों के लिए सीटों के आरक्षण** कोई मौलिक अधिकार नहीं है।

तमिलनाडु के मामले में उच्चतम न्यायालय ने कहा कि संविधान के अनुच्छेद-32 के तहत एक याचिका केवल मौलिक अधिकारों के उल्लंघन के मामले में दायर की जा सकती है। आरक्षण का अधिकार मौलिक अधिकार नहीं है।

❑

संदर्भ

1. देविंदर सिंह बनाम पंजाब राज्य 2024, 2. ई.वी. चिन्नैया बनाम आंध्र प्रदेश
3. भारत के संविधान के अनुच्छेद 14, 15 और 16(4),
4. भारत का संविधान अनुच्छेद 46
5. भारत का संविधान अनुच्छेद 330, 332, 332क, 334क
6. भारत का संविधान अनुच्छेद 239कक, 7. भारत का संविधान अनुच्छेद 243घ
8. महिला शक्ति वंदन अधिनियम, 2023
9. भारत का 73वाँ एवं 74वाँ संविधान संशोधन अधिनियम, 1992
10. जनहित अभियान बनाम भारत संघ, रिट याचिका (सिविल) संख्या 55/2019
11. We, The Nation, The Lost Decade, pp. 79 year 1995
12. के.सी. वसंत बनाम कर्नाटक राज्य 1985, एससीसी सप्लीमेंट 714
13. नेहरू का पत्र, 21 जून, 1961, 14. देवदासन बनाम भारत संघ मामला, 1964
15. इंद्रा साहनी बनाम भारत संघ मामला, 16. मुकेश कुमार बनाम उत्तराखंड, 2020

डॉ. (श्रीमती) विनय जैन

आजादी के 75 वर्ष और महिलाओं की राजनीतिक भागीदारी नारी शक्ति वंदन अधिनियम एक विस्तृत अध्ययन

सारांश : भारत जैसे प्रजातांत्रिक देश में आजादी के 75 वर्ष बाद स्त्री पुरुष को समान जीवन जीने तथा उत्थान के समान अबसर के प्रयासों में नारी शक्ति वंदन अधिनियम भारतीय महिलाओं को पुरुषों के समान राजनीति में भागीदारी देकर राजनीतिक समानता के अधिकार को साकार करता है। राजनीतिक भागीदारी शब्द का अर्थ बहुत व्यापक है यह न केवल मतदान की अधिकार से संबंधित है, बल्कि साथ ही साथ निर्णय लेने की प्रक्रिया, राजनीतिक सक्रियता, राजनीतिक चेतना आदि में भागीदारी से भी संबंधित है। राजनीतिक सक्रियता और मतदान महिलाओं की राजनीतिक भागीदारी का सबसे मजबूत क्षेत्र है, प्रस्तुत पत्र में स्वतंत्रता के बाद महिलाओं की राजनीतिक भागीदारी का अध्ययन करते हुए यह समझाने का प्रयास किया है कि लोकतंत्र के विकास और राष्ट्र निर्माण में महिलाओं की राजनीतिक भागीदारी इतनी महत्त्वपूर्ण और आवश्यक है जितनी कि पुरुषों की लेकिन विश्व में महिलाओं को लोकतंत्र के विकास और राष्ट्र निर्माण में राजनीतिक क्षेत्र में हाशिये पर रखा जाता रहा है।

भारत में महिलाओं की स्थिति हमेशा एक समान नहीं रही है। वैदिक युग से लेकर वर्तमान समय तक महिलाओं के सामाजिक और राजनीतिक पृष्ठभूमि बदलती रही है। स्वतंत्रता के बाद पहली लोक सभा से 18वीं लोक सभा तक महिला सांसदों की संख्या 15 प्रतिशत से अधिक नहीं रही है। हालाँकि भारतीय राजनीति में महिलाओं की भूमिका बढ़ रही है लेकिन 1952 से 2024 तक के संसद में प्रतिनिधित्व के आँकड़ों के अनुसार महिलाओं का भारतीय राजनीति में योगदान पुरुषों की तुलना में बहुत कम है। भारत में महिलाओं ने राष्ट्रपति और प्रधानमंत्री के साथ-साथ विभिन्न राज्यों की मुख्यमंत्री के पद भी संभाले हैं उसके बावजूद भी भारतीय राजनीति में महिला प्रतिनिधित्व की हमेशा कमी रही। प्रस्तुत पत्र में तालिका के माध्यम से भारत में महिला मुख्यमंत्री और महिलाओं का प्रतिनिधित्व लोक सभा और राज्य सभा मैं दर्शाया गया है। महिलाओं का प्रतिनिधित्व तभी बढ़ सकता है जब महिलाओं को संवैधानिक राजनीतिक आरक्षण प्राप्त हो ताकि निश्चित संख्या में महिलाओं की उपस्थिति सुनिश्चित की जा सके जिससे महिलाएँ निर्णय निर्माण में सशक्त भूमिका निभा सके। प्रस्तुत पत्र में महिला आरक्षण का पंचायती राज से शुरू होकर नारी शक्ति बंधन अधिनियम तक विस्तृत अध्ययन

किया गया है। नारी शक्ति वंदन अधिनियम ने देश में एक नई युग की शुरुआत का जय घोष किया है जिसमें लोक सभा व राज्य की विधान सभाओं एवं राष्ट्रीय राजधानी दिल्ली की विधान सभा में महिलाओं के लिए 33 प्रतिशत आरक्षण का प्रावधान है साथ ही विधेयक के पास होने के बाद महिलाओं की विधान सभा में क्या तस्वीर होगी का अध्ययन भी प्रस्तुत पत्र में करने का प्रयास किया गया है इसके अलावा निष्कर्ष में नारी शक्ति बंदन अधिनियम के पास होने के बाद राष्ट्र निर्माण में महिलाओं की न केवल भागीदारी बढ़ेगी बल्कि इस देश की राजनीति तथा सामाजिक आर्थिक परिदृश्य में व्यापक परिवर्तन होगा यह विकसित भारत के सपनों को साकार करने की दिशा में एक बड़ा कदम होना बताया गया है।

प्रस्तावना : प्रत्येक देश और समाज का विकास इस बात पर निर्भर करता है कि उसने अपनी जनसंख्या के विभिन्न वर्गों विशेष रूप से अपनी आधी आबादी अर्थात् महिलाओं को सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक व्यवस्था में क्या स्थान दे रखा है। विकास और प्रगति का वही खंड स्वर्णिम युग कहलाता है, जब समाज की सभी इकाइयाँ समाज निर्माण में मिलजुल कर अपना योगदान देती है और उसका लाभ सभी तक समान रूप से पहुँचता है। आजादी के 75 वर्ष बाद नारी शक्ति बंदन अधिनियम महिलाओं को पुरुषों के समान राजनीतिक रूप से सहभागी बनाने तथा उन्हें सशक्त बनाने के लिए एक महत्त्वपूर्ण कदम हैं। आजादी के बाद महिलाओं का सम्मान बढ़ा लेकिन उनकी राजनीतिक, सामाजिक तथा आर्थिक सशक्तिकरण की गति दशकों से धीमी ही रही। आज की महिला फाइटर प्लेन उड़ा रही है, ओलंपिक में पदक जीत रही है, बड़ी-बड़ी कंपनियाँ चला रही हैं और देश का राष्ट्रपति और प्रधानमंत्री बनकर देश की बागडोर सम्भाल रही है लेकिन व्यावहारिक तौर पर देखें तो यह संख्या महिलाओं की आबादी की अंश मात्र है। हमारे समाज की महिलाओं का एक बड़ा तबका आज भी सामाजिक बंधनों की वीडियो को पूरी तरह से तोड़ नहीं पाया है। उनका अपना स्वतंत्र अस्तित्व नहीं है और जब-जब कोई स्त्री अपनी उपस्थिति दर्ज करना चाहती है तब-तब न जाने कितने रीति-रिवाजों, परंपराओं की दुहाई देकर उसको आगे बढ़ने से रोका जाता है। महिला आरक्षण अधिनियम पर सहमति न बनने के पीछे भी यही पुरुषवादी सोच रही है और हर बार महिला आरक्षण विधेयक को कभी कानूनी तंत्र के द्वारा अड़चन लगाकर तो कभी महिलाओं को पहले शिक्षित और सार्वजनिक क्षेत्र में भागीदार बनाए जाने वाले मुद्दों को रखकर महिला आरक्षण बिल पास नहीं किया गया था।

आधी जनसंख्या की प्रजातांत्रिक व्यवस्था में राजनीतिक अस्तित्व के रक्षण और भविष्य निर्माण का प्रश्न हैं यह फैसला महिलाओं को उनके अधिकार देगा, वही निर्णय प्रक्रिया में उनकी भागीदारी सुनिश्चित कर देगा, इससे महिलाओं के भीतर आत्मविश्वास पैदा होगा जो समाज में महिलाओं को एक जिम्मेदार भूमिका निर्माण में सहायक सिद्ध होगा। राजनीतिक सहभागिता के लिए महिला आरक्षण जरूरी है,जो महिलाओं को सशक्त बनाने में एक महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाएगा।

भारत मैं महिलाओं की राजनीतिक भागीदारी

भारत वर्ष एक संपन्न परंपरा और सांस्कृतिक मूल्यों से समृद्ध देश है। जहाँ महिलाओं का समाज में प्रमुख स्थान रहा है। आजादी के बाद महिलाओं का समाज में सम्मान बढ़ा है लेकिन गरीबी और निरक्षरता महिलाओं की सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक प्रगति में बाधा रही है जैसे गुणवत्तापूर्ण शिक्षा और कौशल के माध्यम से महिलाओं को व्यवसाय की ओर प्रोत्साहित कर उन्हें आर्थिक रूप से सशक्त किया जा सकता है, वैसे ही राजनीति में आरक्षण देकर महिलाओं का राजनीतिक रूप से सशक्त किया जा सकता है। महिलाएँ ऊर्जा से भरी, दूरदर्शी जीवंत उत्साह और प्रतिबद्धता के साथ सभी चुनौतियों का सामना करने में सक्षम हैं। आनादि काल से ही महिलाएँ मानवता की प्रेरणा स्रोत रही है, झांसी की रानी लक्ष्मीबाई से लेकर भारत की पहली महिला शिक्षिका सावित्रीबाई फुले तक महिलाओं ने बड़े पैमाने पर समाज में बदलाव के उदाहरण स्थापित किए हैं।[2] राजनीति में भी विश्व के सभी देश की तुलना में भारतीय महिलाओं ने बहुत महत्त्वपूर्ण पदों को सुशोभित किया है परंतु राजनीति में महिलाओं की भागीदारी स्वतंत्रता के बाद से अब तक संतोषप्रद नहीं रही। प्रथम लोक सभा से लेकर अब तक अनेक-अनेक महिलाएँ राजनीति और संसद में अलग-अलग भूमिका निभा चुकी है उनमें से अनेक सांसद बनी, मंत्री बनी, राज्य सभा और लोक सभा में सभापति और उपसभापति के पद पर भी रही। देश की प्रधानमंत्री रही, राष्ट्रपति रही जैसे विजयलक्ष्मी पंडित, श्रीमती सुचेता कृपलानी, नंदिनी सत्तपति, पार्वती कृष्णान, तारकेश्वरी सिन्हा, गिरिजा व्यास, उमा भारती, कुमारी शैलजा, कृष्णा शाही, शीला कोल, ममता बनर्जी, सुखवंश कौर, संतोष चौधरी, कुमारी विमला, लक्ष्मी एम. मेनन, सुषमा स्वराज, सुमित्रा महाजन, मीरा नायर, बसुन्धरा राजे सिंधिया, नाजमा हेपतुल्लाह, श्रीमती दीपिका, शीला दीक्षित, इंदिरा गांधी, प्रतिभा पाटिल, द्रोपदी मुर्मू (भारत की राष्ट्रपति) आदि अनेक महिलाओं ने देश की राजनीति में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई।[3]

भारत में महिला मुख्यमंत्री

1947 से अब तक भारत में 17 महिला मुख्यमंत्री हुई हैं। मुख्यमंत्री बनने वाली पहली महिला भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस पार्टी की सुचेता कृपलानी थी जिन्होंने 2 अक्टूबर, 1963 को उत्तर प्रदेश की मुख्यमंत्री के रूप में शपथ ली थी। सबसे लंबे समय तक सेवा करने वाली महिला मुख्यमंत्री भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की शीला दीक्षित थी जिन्होंने दिल्ली की मुख्यमंत्री के रूप में कार्य किया और 15 वर्षों से अधिक समय तक इस पद पर रही। ऑल इंडिया अन्ना द्रविड़ मुनेत्र कड़गम की पूर्व महासचिव जयललिता ने तमिलनाडु की मुख्यमंत्री के रूप में कार्य किया और उनका दूसरा सबसे लंबा कार्यकाल रहा उन्होंने 2016 में अपनी मृत्यु तक पद संभाला। वह पद पर रहते हुए मरने वाली पहली मुख्यमंत्री बनी जबकि इस राज्य की पार्टी की बी. जानकी रामचंद्रन का कार्यकाल सबसे छोटा केवल 23 दिन था। भारत में केवल 12 राज्यों और एक केंद्र शासित प्रदेश में महिला मुख्यमंत्री रही पश्चिम बंगाल की ममता बनर्जी और राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र दिल्ली की आतिशी भारत की निवर्तमान मुख्यमंत्री है।[4]

तालिका-1 भारत में महिला मुख्यमंत्री

क्र.	महिला मुख्यमंत्रियों के नाम	पार्टी
1.	शीला दीक्षित	कांग्रेस
2.	जयललिता	अन्नाद्रमूक
3.	ममता बनर्जी	टी.एम.सी.
4.	वसुंधरा राजे	भाजपा
5.	रावडी देवी	राष्ट्रीय जनता दल
6.	मायावती	बहुजन समाजवादी पार्टी
7.	शशि कला	एमजीपी
8.	नंदिनी सत्तपति	कांग्रेस
9.	सुचेता कृपलानी	कांग्रेस
10.	आनंदीबेन पटेल	भाजपा
11.	महबूबा मुफ्ती	जीकेपीडीपी
12.	उमा भारती	भाजपा
13.	अनवरा तैमूर	कांग्रेस
14.	राजिंदर कौर भट्टल	कांग्रेस
15.	सुषमा स्वराज	भाजपा
16.	व.एन. जानकी रामचंद्रन	अन्नाद्रमूक
17.	अतिशी	आम आदमी पार्टी

भारत में महिलाओं की राजनीतिक भागीदारी

भारत में लोक सभा और राज्य सभा में 1952 से लेकर अब तक महिला (सांसदों) सदस्यों की सहभागिता निम्नांकित आँकड़ों से स्पष्ट होती है।

तालिका-2 भारतीय लोक सभा में महिला प्रतिनिधित्व

चुनाव का वर्ष	महिला प्रतिनिधियों की संख्या	महिला प्रतिनिधियों का प्रतिशत
1951	22	5
1957	22	5
1962	31	6
1967	29	6
1971	28	5
1977	19	4
1980	28	5
1984	43	8

1989	29	6
1991	39	7
1996	40	7
1998	43	8
1999	49	9
2004	45	8
2009	59	11
2014	66	12
2019	78	14
2024	77	14.7

स्रोत : इलेक्शन कमीशन ऑफ इंडिया

तालिका-3 भारतीय राज्य सभा में महिला प्रतिनिधित्व

चुनाव का वर्ष	महिला प्रतिनिधियों की संख्या	महिला प्रतिनिधियों का प्रतिशत
1952	15	6.9
1954	17	7.8
1956	20	8.6
1958	22	9.5
1960	24	10.2
1962	18	7.2
1964	21	8.9
1966	23	9.8
1968	22	9.6
1970	14	5.7
1972	18	7.4
1974	18	7.5
1976	42	10.1
1978	25	10.2
1980	29	12
1982	24	10.1
1984	24	10.3
1986	28	11.5
1988	25	10.6

1990	24	10.3
1992	17	7.2
1994	20	8.2
1996	19	7.8
1998	19	7.7
2000	22	9
2002	25	10.2
2004	28	11.4
2006	25	10.2
2008	24	9.8
2010	27	11
2012	26	10.6
2014	31	12.7
2016	27	11
2018	28	11.4
2020	25	10.2

स्रोत : इलेक्शन कमीशन ऑफ इंडिया

उपरोक्त आँकड़ों से पता चलता है, कि भारत में महिलाओं की स्थिति संतोषप्रद नहीं रही है। शासन एवं राजनीतिक सत्ता पर पुरुषों के एकाधिकार के कारण केवल पुरुष हित एवं कल्याण में ही व्यवस्था का संचालन किया गया। इस समस्या का समाधान तभी संभव हो सकेगा, जब महिलाओं को सांविधानिक-राजनीतिक आरक्षण प्राप्त हो ताकि निश्चित संख्या में महिलाओं की उपस्थिति सुनिश्चित की जा सके और जब महिलाओं की उपस्थिति सुनिश्चित होगी तो वे निर्णय निर्माण में सशक्त भूमिका निभा सकेगी और इस आधार पर ही महिला विकास को सार्थक गति प्राप्त हो सकेगी। महिलाओं का सशक्तिकरण समाज को सुदृढ़ता एवं समृद्धि प्रदान करेगा। महिलाओं की प्रगति एवं विकास निश्चित तौर पर राष्ट्रीय समृद्धि को नए आयाम प्रदान करते हैं।[5]

महिलाओं की राजनीतिक भागीदारी के प्रति सरकार की प्रतिबद्धता 2023 में पारित नारी शक्ति वंदन अधिनियम या महिला आरक्षण अधिनियम में स्पष्ट रूप से परिलक्षित होती है। यह वास्तव में जेंडर समानता और सशक्तिकरण की दिशा में एक और ऐतिहासिक कदम है।

महिला आरक्षण अधिनियम

महिलाओं की राजनीतिक सहभागिता समय की आवश्यकता बन गई है महिलाओं की राजनीतिक सहभागिता महिला सशक्तिकरण की एक सीढ़ी है। राजनीतिक रूप से सशक्त

महिला निर्णय निर्माण में अपनी एक महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा सकेगी। विकासशील देश एवं विकसित देशों में महिलाओं का प्रतिनिधित्व संतोषप्रद नहीं है।

भारत में भी महिलाओं की राजनीतिक सहभागिता पुरुषों की तुलना में कम ही रही है इस समस्या का समाधान तभी संभव हो सकेगा जब महिलाओं को संवैधानिक राजनीतिक आरक्षण प्राप्त हो ताकि निश्चित संख्या में महिलाओं की उपस्थिति सुनिश्चित की जा सके। भारत में महिलाओं की राजनीतिक भागीदारी बढ़ाने के लिए पंचायती राज स्तर पर 1983 में 73वाँ और 74वाँ संविधान संशोधन किया गया जिसके द्वारा महिलाओं को स्थानीय स्तर पर राजनीति में सहभागिता प्रदान की गई और इस प्रयास में उन्हें सत्ता के केंद्र तक पहुँचाने में योगदान दिया। स्थानीय स्तर पर महिलाओं की सक्रियता बढ़ाने का प्रयास सराहनीय रहा।[6]

इसी क्रम को आगे बढ़ाते हुए 12 सितंबर, 1996 को 81वाँ संविधान संशोधन विधेयक संसद में पेश किया गया इस विधेयक का उद्देश्य लोक सभा और विधान सभा में महिलाओं के लिए एक तिहाई स्थानों का आरक्षण प्रदान करना है यह संविधान संशोधन विधेयक के माध्यम से भारत के संविधान के अनुच्छेद 239, 233, 230, 330, 332 में संशोधन कर महिलाओं के लिए लोक सभा और राज्य की विधान सभा में एक तिहाई स्थानों का आरक्षण की व्यवस्था की जानी थी। 81वाँ संशोधन विधेयक राजनीतिक दलों की आम सहमति प्राप्त करने के नाम पर लंबित हो गया इसके बाद लोक सभा भंग हो जाने पर यह विधेयक 84वाँ संविधान संशोधन के नाम पर 14 दिसंबर, 1998 को लोक सभा में प्रस्तुत किया गया। यह लोक सभा में विधेयक पर कोई फैसला करने से पहले ही भंग हो गई। इसके पश्चात् 85वाँ संविधान संशोधन विधेयक के रूप में महिला आरक्षण विधेयक 23 दिसंबर, 1999 को तेरहवीं लोक सभा में लाया गया परंतु आम सहमति नहीं बन पाई। इसके बाद भी महिला आरक्षण विधेयक को पास कराने की कोशिश होती रही।

इसी प्रयास में 9 मार्च, 2010 को 108वाँ संविधान संशोधन विधेयक के रूप में महिला आरक्षण विधेयक राज्य सभा के सत्र में प्रस्तुत किया। सांसदों के विरोध के बावजूद महिला आरक्षण विधेयक राज्य सभा में पास हो गया। फिर भी इसे लोक सभा में लंबित रखा गया है।[7] वर्तमान में प्रस्तावित महिला आरक्षण विधेयक की समस्याओं के समाधान के प्रति गंभीर ईमानदार एवं सृजानात्मक प्रयास और पवित्र नीयत रखते हुए महिला आरक्षण विधेयक को भारत की नई संसद में 20-21 सितंबर, 2023 पेश किया गया जो नारी शक्ति के लिए ऐतिहासिक पल बन गया। कभी सत्ता और पुरुषत्व की सोच को सर्वोपरि मानकर जिस बिल को दशकों तक लटकाया गया था या हर संसद में सिर्फ कहने भर के लिए पास होने को रखा गया जिससे पूरे देश की महिलाओं को ये अहसास कराया जाए कि हम तो प्रयास कर रहे हैं पर अड़चन ही इतनी है। उसे प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने अपने प्रयासों में पारदर्शिता लाते हुए संसद के दोनों सदनों द्वारा पारित कर दिया और राष्ट्रपति के हस्ताक्षर के बाद 29 सितंबर, 2023 को कानून बन गया। लोक सभा और विधान सभाओं में महिलाओं को 33 प्रतिशत

आरक्षण कानूनी रूप से मिल गया। नारी शक्ति वंदन अधिनियम कोई सामान्य कानून नहीं है। यह नए भारत की नई लोकतांत्रिक प्रतिबद्धता का उद्घोष है।

नारी शक्ति वंदन अधिनियम, 2023 में रखे नए प्रावधान

संविधान का 128वाँ संशोधन अधिनियम, 2023

- इस बिल के माध्यम से आर्टिकल 339एए, 332ए और 334ए में संशोधन किए गए।
- 339 एए के माध्यम से 33 फीसदी सीटे राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र दिल्ली में महिलाओं के लिए आरक्षित होंगी।
- 330ए के माध्यम से लोक सभा में प्रत्यक्ष निर्वाचन से भरे जाने वाली एक तिहाई सीटे एससी और एसटी से संबंधित महिलाओं के लिए आरक्षित होगी।
- 332ए के माध्यम से प्रत्येक राज्य की विधान सभा में महिलाओं के स्थान आरक्षित होंगे अनुच्छेद के खंड 3 में एससी और एसटी सहित एक तिहाई सीटें महिलाओं के लिए आरक्षित की जाएँगी।
- 334ए में नया प्रावधान जोड़ा गया है जिसके तहत महिला आरक्षण की अवधि 15 साल के लिए होगी। भविष्य में जरूरत महसूस होने पर संसद को आरक्षण की अवधि बढ़ाने का अधिकार होगा।
- लोक सभा में अभी सीटों की संख्या 543 है। जैसे ही कानून लागू होगा महिला सदस्यों की संख्या 181 हो जाएगी जो वर्तमान में 82 है।[8]

तालिका-4 नारी शक्ति वंदन अधिनियम अमल में आने के बाद क्या बदलेगा

राज्य	**कुल सीट**	**कानून बनने के बाद महिला विधायकों की संख्या**
उत्तर प्रदेश	403	134
पश्चिम बंगाल	294	98
महाराष्ट्र	288	96
बिहार	243	81
तमिलनाडु	234	78
मध्य प्रदेश	230	76
कर्नाटक	224	74
राजस्थान	200	66
गुजरात	182	60
आंध्र प्रदेश	175	58
उड़ीसा	147	49
केरल	140	46
असम	126	42

तेलंगना	119	39
पंजाब	117	39
छतीसगढ़	90	30
हरियाणा	90	30
जम्मू कश्मीर	87	29
झारखण्ड	81	27
उतराखंड	70	23
दिल्ली	70	23
हिमाचल प्रदेश	68	22
त्रिपुरा	60	20
मणिपुर	60	20
मेघालय	60	20
अरुणाचल प्रदेश	60	20
नागालैंड	60	20
गोवा	40	13
मिजोरम	40	13
सिक्किम	32	10
पुडुचेरी	30	10

महिला आरक्षण अधिनियम के लाभ

सकारात्मक कार्रवाई : अधिनियम का उद्देश्य महिलाओं को राजनीति में शामिल करके उन्हें सशक्त बनाना है यह अधिनियम सुनिश्चित करेगा कि महिलाओं को देश की राजनीति में उचित प्रतिनिधित्व मिले।

पंचायत में सफल पैटर्न : पंचायत में मौजूदा आरक्षण प्रणाली ने सकारात्मक परिणाम दिखाए हैं जो राष्ट्रीय स्तर पर सामान पैटर्न को दोहराने की अवश्यकता की ओर इशारा करते हैं।

लिंग संवेदनशीलता : यह माना जाता है कि महिलाएँ महिलाओं से संबंधित मुद्दों के प्रति अधिक ग्रहणशील और संवेदनशील होती हैं कानून बनाने में उनके शामिल होने से महिलाओं से संबंधित मुद्दों के समाधान में सकारात्मक प्रभाव पड़ेगा।[10]

निष्कर्ष

उपर्युक्त विश्लेषण से एक बात स्पष्ट हो चुकी है कि महिलाओं को राजनीतिक रूप से सशक्त बनाने के लिए आरक्षण जरूरी है। इसके अतिरिक्त महिलाओं को उनके अधिकारों के प्रति जागरूक, सजग एवं सशक्त बनाना आज सबसे महत्त्वपूर्ण मुद्दा है। उन्हें सशक्त बनाने

का सबसे कारगर तरीका उन्हें उनके कानूनी अधिकारों की जानकारी देना ताकि वह जान सकें कि कानून के द्वारा उनको कौन-कौन से अधिकार प्राप्त हैं इसके लिए महिलाओं को अधिक से अधिक शिक्षित एवं सशक्त होना होगा तभी वह अपने प्रति होने वाले अत्याचार अन्याय एवं शोषण का मुकाबला मजबूती से कर सकती हैं। पुरुष यदि नारी जाति का विश्व मानव समाज में शक्ति व विकास के दर्शन के क्रियान्वयन के लिए सकारात्मक सहयोग लेना चाहता है तो महिलाओं को राजनीतिक सहभागिता के लिए प्राप्त कानून नारी शक्ति अधिनियम को सफल बनाने के लिए एक विश्वसनीय एवं प्रभावी सहयोग प्रदान करने की नैतिक जिम्मेदारी लेनी होगी।

❑

संदर्भ

1. विधि भारती (स्वर्ण जयंती नारी विशेषांक), विधि भारती परिषद, नई दिल्ली
2. महिला सशक्तिकरण और कानून, लेखक संतोष खन्ना, पृ. 33
3. लेखक : श्री बंडारू दत्तात्रेय, माननीय राज्यपाल हरियाणा
4. भारत में महिलाओं की राजनीतिक भागीदारी विकिपीडिया
5. भारत में महिलाओं की राजनीतिक भागीदारी विकिपीडिया
6. दैनिक जागरण समाचार-पत्र 14 मार्च, 2010
7. आरक्षण के प्रश्न पर हुआ विवाद, सेमीनार प्र. 457 सितंबर,1957 एवं मनुषी पृ. 116 जनवरी-फरवरी 2000 एवं नारी शक्ति वंदन अधिनियम NEW INDIA SAMACHAR https://newindiasamachar.pib.gov.in
8. आशा कौशिक, नारी सशक्तिकरण-विमर्श एवं यथार्थ, पाइंटर पब्लिशर्स, प्रथम संस्करण, 2004, जयपुर, पृ. 258
9. नारी शक्ति वंदन अधिनियम NEW INDIA SAMACHAR https://newindia samachar.pib.gov.in
10. न्यूज डेस्क, अमर उजाला नई दिल्ली पब्लिश्ड बाय शिवेंद्र तिवारी अपडेटेड 29 सितंबर, 2023, 6:23 pm IST

डॉ. विदुषी भारद्वाज

वक्फ एक्ट

अरबी भाषा के 'वक्फ़' शब्द से 'वक्फ़' शब्द बना है, जिसका अर्थ है अल्लाह के नाम। जब कोई मुस्लिम व्यक्ति या संस्था इस्लाम में धर्म में आस्था के कारण अपनी चल या अचल संपत्ति इस्लाम धर्म में मान्यता प्राप्त किसी उद्देश्य के लिए स्थाई रूप से समर्पित करती है, तो उसे वक्फ़ कहते हैं। इस प्रकार वक्फ़ इस्लाम धर्म और मुसलमानों के कल्याण ये लिए किया गया दान है। वक्फ़ करने वाले को वाकिफ़ कहते हैं। वाकिफ़ वक्फ़ करते समय यह निर्दिष्ट कर सकता है कि वक्फ़ का उपयोगा मस्ज़िद, यतीमखाना या कब्रिस्तान आदि के लिए किस प्रकार किया जाए।

भारत में वक्फ़ बोर्ड का गठन 1913 में किया गया था। वक्फ़ संपत्ति के प्रबंधन के लिए अंग्रेज सरकार ने सर्वप्रथम वक्फ़ अधिनियम, 1923 बनाया था। यद्यपि लंदन की प्रिवी पर्स काउंसिल में वक्फ़ पर विवाद की सुनवाई करने वाली चार जजों की बैंच ने वक्फ़ को सबसे खराब प्रकार की शाश्वतता के रूप में बताया और इसे अमान्य घोषित कर दिया था तथापि तत्कालीन भारत की अंग्रेजी सरकार ने 'फूट डालो राज करो' की नीति के तहत इसे लागू कर दिया था। स्वतंत्रता के बाद बने नए भारत के संविधान में वक्फ़ एक्ट की कोई व्यवस्था नहीं थी।

भारत का विभाजन धर्म के आधार पर हुआ, जिसमें मुस्लिमों को एक अलग देश पाकिस्तान दे दिया गया। स्वतंत्रता के पश्चात् जनसंख्या की अदला-बदली बहुत भीषण समस्या थी। फिर भी 1950 में नेहरू लियाकत समझौता किया गया। इसमें दोनों देशों के अल्पसंख्यकों की सुरक्षा का दायित्व उनकी सरकारों को सौंपा गया। नेहरू जी ने मुसलमानों की धार्मिक संपत्तियों के संरक्षण के लिए वक्फ़ एक्ट, 1954 बनाया और विभाजन के बाद पाकिस्तान गए मुसलमानों की संपत्ति वक्फ़ बोर्डो को सौंप दी।

वक्फ़ एक्ट के अनुसार अधिकतम 20 सदस्यों की एक केंद्रीय वक्फ़ परिषद होगी -- जिसकी संरचना निम्नवत् होगी --

1. इसका अध्यक्ष पदेन होगा।
2. 3 व्यक्ति अखिल भारतीय स्वरूप और राष्ट्रीय महत्त्व वाले मुस्लिम संगठनों का प्रतिनिधित्व करने वाले होंगे।

3. 2 सदस्य लोक सभा से होंगे।
4. 1 सदस्य राज्य सभा से होगा।
5. 3 बोर्डों के अध्यक्ष चक्रानुक्रम से होंगे।
6. उच्चतम या उच्च्य न्यायालय के न्यायाधीश रहे हों, ऐसे 2 सदस्य होंगे।
7. राष्ट्रीय ख्याति वाला एक अधिवक्ता होगा।
8. एक व्यक्ति ऐसे वक्फ़ का प्रतिनिधित्व करेगा जिसकी सकल आय 5 लाख या उससे अधिक हो।

इस एक्ट के अनुसार राज्यों के वक्फ़ बोर्ड में 11 सदस्य होंगे, जिसमें 2 सांसद, जो उस राज्य से संसद के लिए चुने गए मुस्लिम सदस्यों द्वारा अपने में से चुने जाएंगे 2 राज्य विधान मंडल के मुस्लिमों द्वारा अपने में से चुने जाएंगे, 6 अन्य मुस्लिम सदस्य, जो राज्य सरकार द्वारा धारा 10 में निर्दिष्ट व्यक्तियों की विभिन्न श्रेणियों से नामित किए जाएंगे वक्फ़ आयुक्त, जो पदेन सदस्य सचिव होंगे। वक्फ़ बोर्ड के अध्यक्ष को उसके सदस्यों द्वारा अपने में से चुना जाएगा। वक्फ़ आयुक्त को अध्यक्ष नही चुना जाएगा।

1955 में इस एक्ट में पहला संशोधन किया गया। तत्पश्चात, 1964 के संशोधन के बाद 1995 में नरसिंह राव सरकार ने वक्फ़ एक्ट में संशोधन करके वक्फ़ संपत्तियों के प्रबंधन और प्रशासन से संबंधित प्रावधानों को अधिक प्रभावशाली बना दिया। इस एक्ट में प्रत्येक राज्य में राज्य वक्फ़ बोर्ड की स्थापना, वक्फ़ संपत्तियों को पंजीकृत किया जाना तथा उनका रिकार्ड रखना एवं वक्फ़ ट्रिब्यूनल बनाने आदि का प्रावधान था। 2013 में मनमोहन सिंह सरकार ने वक्फ़ बोर्ड को स्वायत्त इकाई बनाकर असीमित शक्तियाँ प्रदान कर दीं। वक्फ़ संबंधी विवादों के निबटारे के लिए बनाए गए वक्फ़ ट्रिब्युनल के निर्णय को अंतिम बना दिया गया। यह अधिनियम वक्फ़ अर्थात् मुसलमानों द्वारा मुस्लिम धर्म एवं कल्याण के लिए दान की गई संपत्तियों के रख-रखाव के लिए बना था। उसके 2013 में संशोधन के अनुसार उसने व्यक्तिगत और सरकारी संपत्तियों पर भी दावा करना शुरू कर दिया। 2009 में वक्फ़ बोर्ड के पास कुल 4 लाख एकड़ भू-संपत्ति थी, वहाँ वर्तमान में वह लगभग 9 लाख 40 हजार एकड़ भूमि में लगभग 8.7 लाख संपत्तियों का स्वामी है।

वक्फ़ एक्ट के 2013 के संशोधन की धारा 40 के अनुसार यदि वक्फ़ बोर्ड के सर्वेयर को लगता है कि कोई संपत्ति वक्फ की है, भले ही उसके पास उसके प्रामाणिक दस्तावेज न हों, वह राज्य के राजस्व विभाग में न चढ़ी हो, बोर्ड उसे अपनी बना सकता है। इसके लिए मुतवल्ली (जो वक्फ़ का लेखा-जोखा रखता है) उस संपत्ति को वक्फ़ के रजिस्टर में चढ़ा लेता है और वक्फ़ बोर्ड उस संपत्ति के स्वामी को नोटिस देता है कि वह संपत्ति वक्फ़ बोर्ड की है। 30 दिनों के अंदर संपत्ति स्वामी को अपना स्वामित्व सिद्ध करना होगा। इसके लिए संपत्ति स्वामी को वक्फ़ ट्रिब्यूनल में जाना होगा, जो राज्य की राजधानी में स्थित होता है। इस अवधि में उस संपत्ति का स्वामी यदि अपना स्वामित्व सिद्ध नहीं कर पाता है या वक्फ़

ट्रिब्यूनल उसके साक्ष्यों से से संतुष्ट नहीं होता हे तो वह उस संपत्ति को वक्फ़ की घोषित कर देता है। वक्फ़ ट्रिब्यूनल का निर्णय अंतिम माना जाता है। इसके पश्चात्, बोर्ड उस संपत्ति का कब्जा दिलाने के लिए जिलाधिकारी को आदेशित करता है, जिससे जिलाधिकारी उसका कब्जा बोर्ड को दिलाता है। उदाहरण के लिए, यदि मध्य प्रदेश के सिंगौर जिले के किसी गाँव में वक्फ़ बोर्ड किसी की संपत्ति पर अपना दावा बताकर उसे खाली करने के लिए कहता है तो उस संपत्ति मालिक को अपील करने अपने गाँव से 712 कि.मी. तक मध्य प्रदेश की राजधानी भोपाल जाना ही होगा, जहाँ वक्फ़ ट्रिब्यूनल है। वक्फ़ ट्रिब्यूनल (जिसमें सभी सदस्य मुसलमान होते हैं) उस केस में सुनवाई करके अपना निर्णय देता है और उसका निर्णय अंतिम होगा। उच्च न्यायालय से भी अधिक शक्तिशाली इस वक्फ़ ट्रिब्यूनल और वक्फ़ बोर्ड से एक आम आदमी और गरीब अनपढ़ आदिवासी, दलित, जो अपनी बस्ती से अधिक दूर कभी नहीं गया, के सम्मुख कितनी भीषण समस्या खड़ी हुई होगी -- यह आसानी से समझा जा सकता है।

कुछ क़ानून विशेषज्ञों का मानना है कि यह एक्ट समानता का अधिकार देने वाली संविधान की धारा 14 व 25 का उल्लंघन करता है। अन्य किसी धर्म के लिए ऐसा क़ानून नहीं है, मुस्लिमों को विशेषाधिकार देकर यह अन्य धर्म के लोगों के साथ अन्याय है। पाकिस्तान गए मुसलमानों की संपत्तियों पर भी वक्फ़ बोर्ड का अधिकार है, जबकि वे शत्रु संपत्ति के तहत सरकार की होनी चाहिए। उसने इस एक्ट का लाभ उठाते हुए तमिलनाडु व बिहार के 2 गाँवों पर अपना दावा किया। पुरातात्त्विक विभाग की 120 संपत्तियों को वह अपनी संपत्ति मानता है। दिल्ली की अनेक महत्त्वपूर्ण संपत्तियों पर वह अपना दावा करता है। वक्फ़ बोर्ड के पास वर्ष 2009 में जहाँ लगभग 4 लाख एकड़ जमीन थी वहीं आज वह लगभग 9 लाख 40 हजार एकड़ भू-संपत्तियों का स्वामी है। देश में सेना और रेलवे के बाद सर्वाधिक संपत्ति वक्फ़ बोर्ड के पास है। एक अल्पसंख्यक धार्मिक संस्था के पास इतनी अधिक भूसंपत्ति होना चिंता का विषय बनता है।

वक्फ़ बोर्ड की इस निरंकुशता के विरुद्ध अनेक मुकदमे उच्च एवं उच्चतम न्यायालय में दायर किए गए हैं। माननीय न्यायालयों ने वक्फ़ बोर्ड के विरुद्ध भी निर्णय दिए हैं। उदाहरण के लिए वक्फ़ बोर्ड बनाम जिंदल सॉ लिमिटेड एवं अन्य केस में माननीय उच्चतम न्यायालय के न्यायमूर्ति हेमंत गुप्ता तथा वी. सुब्रह्मण्यम् की बैंच ने 29.04.2022 को वक्फ़ बोर्ड द्वारा एक भूमि पर अपना दावा बताने के संबंध में वक्फ़ बोर्ड के विरुद्ध निर्णय दिया था।[1] क्योंकि वह भूमि राजस्व रिकॉर्ड में वक्फ़ के रूप में दर्ज नहीं थीं। जबकि इसे 1995 के वक्फ़ एक्ट के अनुसार राजस्व विभाग में दर्ज होना चाहिए था। इस निर्णय से एक तो यह धारणा ध्वस्त हुई थी कि वक्फ़ ट्रिब्यूनल का निर्णय अंतिम होता है। दूसरे, वक्फ़ की संपत्ति राजस्व रिकॉर्ड में उल्लिखित होनी अनिवार्य है, वक्फ़ के रजिस्टर में उल्लेख मात्र से ही कोई संपत्ति वक्फ़ की नहीं होगी।

इसी प्रकार **साबिर अली बनाम खान बनाम सैयद मोहम्मद, अहमद अली, खान** अन्य

देश में माननीय उच्चतम न्यायालय ने 23.6.2023 को निर्णय दिया[2] कि किसी संपत्ति को वक्फ़ संपत्ति चिह्नित करने से पहले वक्फ़ अधिनियम, 1954 की धारा 4 अथवा वक्फ़ अधिनियम 1995 के अनुसार उस संपत्ति का सर्वेक्षण किया जाना अनिवार्य है। इसमें यह भी कहा गया है कि 1949 के पहले स्थानांतरित की गई किसी भी संपत्ति पर वक्फ़ बोर्ड का अधिकार नहीं होगा क्योंकि उसके कागज़ मान्य नहीं होंगे तथा विभाजन के बाद संपत्ति का मूल स्वामी यदि देश छोड़कर चला गया है या 1962, 65 और 71 के युद्ध में पाकिस्तान के साथ होने के आरोप में भाग गया है तो वह संपत्ति सरकार की हो जाएगी।

उच्चतम न्यायालय द्वारा दिए गए कई फैसलों के उपरांत केंद्रीय सरकार ने संशोधन विधेयक 2024 प्रस्तावित किया है जिसमें कुल 40 संशोधनों का प्रस्ताव है। इसमें कुछ प्रमुख बिंदु निम्नवत हैं --

1. इस विधेयक में केंद्रीय वक्फ़ परिषद तथा राज्य वक्फ़ बोर्डों की संरचना बदलने के लिए वक्फ़ एक्ट की धारा 1 तथा धारा 14 में संशोधन करने का प्रस्ताव है, जिसमें वक्फ़ बोर्ड में महिलाओं का प्रतिनिधित्व होगा। वक्फ़ बोर्ड में 2 महिलाओं को भी सम्मिलित करने का प्रस्ताव है तथा केंद्रीय वक्फ़ परिषद में गैर-मुस्लिम भी हो सकेंगे।
2. इसमें राज्य के वक्फ़ बोर्डों द्वारा जिस संपत्ति पर दावा दिया जाएगा उसको अनिवार्य रूप से सत्यापित किए जाने का भी प्रस्ताव है। यह रजिस्टर करना अनिवार्य होगा कि वक्फ़ किसने, कब और किसके सम्मुख किया। सर्वे का अधिकार जिलाधिकारी का होगा।
3. पत्नी की सहमति के बिना वक्फ़ नहीं किया जा सकेगा।
4. यदि व्यक्ति के अपनी औलाद नहीं है तो संपत्ति रक्त संबंधी रिश्तेदार को दी जा सकती है।
5. बोहरा और आगारवानी मुसलमानों को भी इसमें मान्यता दी गई है।
6. वक्फ़ ट्रिब्यूनल में सदस्य मुस्लिम ही रहेंगे।

वक्फ़ संशोधन विधेयक, 2024 के संबंध में अपने सुझाव देने के लिए सरकार ने 39 सदस्यों की एक संयुक्त संसदीय समिति बनाई है, जो विचार विमर्श के पश्चात् अपने सुझाव सरकार के सम्मुख प्रस्तुत करेगी। तत्पश्चात् सरकार आवश्यक कार्रवाई करेगी।

इस लेख में लेखिका मौलिकता का दावा नहीं करती। लेख सामान्य जानकारी पर आधारित है।

❑

संदर्भ

1. उच्चतम न्यायालय जजमेंट, पृ. 11-12
2. विवेक पांडे lawbear.in/supreme court - Internet 2 Sep. 2023 pg. 5-48

नोट : इस लेख में लेखिका की कुछ भी मौलिकता नहीं है। यह इंटरनेट पर उपलब्ध जानकारियों के आधार पर लिखा गया है।

देवदत्त शर्मा

वाक्-स्वातंत्र्य और अभिव्यक्ति-स्वातंत्र्य का अधिकार क्या और क्यों?

भारत के संविधान के अनुच्छेद 19(1) (क) में वाक्-स्वातंत्र्य और अभिव्यक्ति-स्वातंत्र्य के अधिकार का उल्लेख करते हुए कहा गया है --

''सभी नागरिकों को वाक्-स्वातंत्र्य और अभिव्यक्ति-स्वातंत्र्य का अधिकार होगा।''

इस अधिकार पर निर्बंधन लगाते हुए इसी अनुच्छेद के उपखंड (2) में कहा कि --

''खंड (1) के उपखंड (क) की कोई बात उक्त उपखंड द्वारा दिए गए अधिकार के प्रयोग पर (भारत की प्रभुता और अखंडता)[1], राज्य की सुरक्षा, विदेशी राज्यों के साथ मैत्रीपूर्ण संबंधों, लोक व्यवस्था, शिष्टाचार या सदाचार के हितों में अथवा न्यायालय अवमान, मानहानि या अपराध-उद्दीपन के संबंध में युक्तियुक्त निर्बंधन जहाँ तक कोई विद्यमान विधि अधिरोपित करती है, वहाँ तक उसके प्रवर्तन पर प्रभाव नहीं डालेगी या वैसे निर्बंधन अधिरोपित करने वाली कोई विधि बनाने से राज्य को निवारित नहीं करेगी।''

वाक्-स्वातंत्र्य व अभिव्यक्ति स्वातंत्र्य का अर्थ

वाक्-स्वातंत्र्य और अभिव्यक्ति-स्वातंत्र्य का अर्थ है, शब्दों, लेखों, मुद्रणों, चिन्हों या किसी अन्य प्रकार से अपने विचारों को प्रकट करना। अभिव्यक्ति-स्वातंत्र्य में किसी व्यक्ति के विचारों, किसी ऐसे माध्यम से अभिव्यक्त करना भी सम्मिलित है जिससे वह दूसरों तक उन्हें संप्रेषित कर सके, इस प्रकार संकेतो, अंकों, चिन्हों तथा ऐसी ही अन्य क्रियाओं द्वारा किसी व्यक्ति के विचारों की अभिव्यक्ति भी सम्मिलित है। विचारों को व्यक्त करने के जितने भी माध्यम हैं वे सभी वाक्-स्वातंत्र्य व अभिव्यक्ति स्वातंत्र्य के अंतर्गत आते हैं। इस प्रकार वाक्-स्वातंत्र्य व अभिव्यक्ति-स्वातंत्र्य के अंतर्गत प्रेस की स्वतंत्रता भी आती है। विचारों का स्वतंत्र प्रसारण, प्रेस की स्वतंत्रता का मुख्य उद्देश्य है, जो भाषण द्वारा या समाचार-पत्रों द्वारा प्राप्त किया जा सकता है।

राष्ट्र का ध्वज लहराना, अभिव्यक्ति स्वातंत्र्य का प्रतीक है जो अनुच्छेद 19(1) (क) की परिधि में आता है। मतदान करना, किसी मतदाता की वाक्-स्वातंत्र्य व अभिव्यक्ति की स्वातंत्र्य के मूल अधिकार के अंतर्गत आता है।"

जानने का अधिकार भी वाक् स्वातंत्र्य व अभिव्यक्ति स्वातंत्र्य का अभिन्न अंग है। इसमें सरकार के संचालन से संबंधित सुरक्षा जानने का अधिकार है। केवल आपवादिक मामले में जब देश की अथवा लोक हित में आवश्यक हो, तभी उनका प्रकटीकरण नहीं किया जा सकता है। लोकतान्त्रिक सरकार एक खुली सरकार होती है जिसके विषय में जनता को जानने का अधिकार होता है। **रोमेश थापर बनाम मद्रास राज्य** के मामले में उच्चतम न्यायालय ने कहा कि वाक् स्वातंत्र्य और अभिव्यक्ति स्वातंत्र्य में विचारों के प्रसार करने की स्वतंत्रता भी सम्मिलित है और यह स्वतंत्रता विचारों के प्रसारण की स्वतंत्रता द्वारा सुनिश्चित है, इस स्वतंत्रता के लिए परिचालन की स्वतंत्रता भी उतनी ही आवश्यक है जितनी प्रकाशन की स्वतंत्रता। निस्संदेह परिचालन की स्वतंत्रता के बिना प्रकाशन का कोई महत्त्व नहीं होगा।[7]

समाचार-पत्रों को पूर्ण अधिकार है कि वह लोकहित की बातों का प्रकाशन करे और उस पर पूर्व-अवरोध लगाना सांविधानिक नहीं है किंतु वर्तमान व आसन्न खतरों के आधार पर निर्बधन लगाए जा सकते हैं ऐसी बातों पर प्रकाशन के पूर्व-अवरोध से प्रेस की स्वतंत्रता का हनन होता।[8]

वाक्-स्वातंत्र्य व अभिव्यक्ति-स्वातंत्र्य में केवल अपने ही विचारों के प्रसार की स्वतंत्रता तक ही सीमित नहीं है, इसमें दूसरों के विचारों के प्रसार व प्रकाशन की स्वतंत्रता भी सम्मिलित है जो प्रेस की स्वतंत्रता द्वारा ही संभव है।[9]

सूचना का अधिकार अधिनियम, 2005

अनुच्छेद 19(1) (क) के अंतर्गत (नागरिकों के सूचना के अधिकार हेतु व्यावहारिक राजक्रम स्थापित करने, लोक प्राधिकारियों के नियंत्रणाधीन सूचना तक पहुँच सुनिश्चित करने, प्रत्येक लोक प्राधिकारी के कार्यों की पारदर्शिता और जवाबदेही हेतु, केंद्रीय सूचना आयोग और राज्य सूचना आयोग और उससे संबंधित या उससे अनुवर्ती मामलों के उपबंध हेतु, सूचना का अधिकार अधिनियम, 2005 पारित किया गया।

ऐसी अवस्था में जहाँ भारत के संविधान ने लोकतंत्रात्मक गणतंत्र को स्थापित किया है, और ऐसी अवस्था में जहाँ लोकतंत्र की माँग एक संसूचित नागरिक और सूचना की पारदर्शिता जो कि इसके कार्यकरण हेतु प्राणभूत है और भ्रष्टाचार को रोकने तथा सरकार और उसके अंगों को शासितों के प्रति जराबदेह बनाने हेतु उक्त अधिनियम 12 अक्टूबर, 2005 से प्रभावी हो गया।

इस अधिनियम के अंतर्गत, एक अपीलीय तंत्र की स्थापना जिसके पास जाँच की शक्तियाँ, लोक सूचना अधिकारियों के निर्णयों का पुनर्विलोकन, विधिनुसार सूचना प्रदत्त करने में असफलता पर दांडिक उपबंध, अधिकतम प्रकटीकरण और न्यूनतम अपवादों का उपबंध, सांविधानिक उपबंधों से संगतता और लोक प्राधिकारियों द्वारा सूचना की पहुँच तथा प्रकटीकरण हेतु प्रभावी तंत्र इत्यादि के उपबंध किए गए हैं।

इस अधिनियम में जो सूचनाएँ नहीं दी जा सकती हैं, वे इस अधिनियम की धारा 8 में वर्णित है।

मतदाता का सूचना का अधिकार

''उम्मीदवारों (सांसद और विधायक) को नामांकन-पत्र भरते समय उच्चतम न्यायालय ने निर्देश दिया कि आपराधिक रिकार्ड, अपनी संपत्ति, देनदारी और शैक्षणिक योग्यता की जानकारी देना है।'' उच्चतम न्यायलय की तीन-सदस्यीय पीठ ने कहा कि मतदाता का सूचना का अधिकार, संविधान के अनुच्छेद 19(1) (क) में प्रदत्त अभिव्यक्ति के स्वातंत्र्य के अधिकार का आवश्यक अंग है।

इस निर्णय के पश्चात् अब उम्मीदवारों (सांसद व विधायक) को नामांकन पत्र भरते समय अग्रलिखित पाँच बातों की जानकारी (सूचना) देना अनिवार्य है --

1. क्या उम्मीदवार को पहले किसी आपराधिक मामले में दोषी ठहराया गया है, दोषमुक्त किया गया है अथवा बरी किया गया है, यदि ऐसा है तो क्या उसे जेल की सजा अथवा जुर्माना किया गया है।
2. नामांकन पत्र भरने से 6 माह पहले क्या उम्मीदवार किसी ऐसे अपराध के लम्बित मामले में आरोपी बनाया गया है जिसमें दो या उससे अधिक वर्ष की कारावास की सजा का प्रावधान है और जिसमें आरोप तय किए गए हो, यदि ऐसा है तो उसका विवरण।
3. उम्मीदवार और उसके पति अथवा पत्नी तथा आश्रितों की परिसंपत्तियों, चल अचल, बैंक बैलेंस आदि।
4. उम्मीदवार की देनदारी, यदि हो तो और विशेषकर क्या किसी सार्वजनिक वित्तीय संस्थान अथवा सरकार की देनदारी बाकी है
5. उम्मीदवार की शैक्षिक योग्यता की जानकारी।

इलेक्ट्रॉनिक्स मीडिया पर सरकार का एकाधिकार नहीं

सेक्रेटरी, मिनिस्ट्री ऑफ इनफॉरमेशन एंड ब्रॉड कास्टिंग बनाम क्रिकेट एसोशियन ऑफ 'वेस्ट बंगाल[11] के वाद में उच्चतम न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि ''अनुच्छेद 19(1)(क) की स्वतंत्रता के अंतर्गत किसी भी नागरिक को इलेक्ट्रॉनिक मीडिया-टेलिविजन, रेडियो द्वारा किसी घटना का आँखों देखा चित्र प्रसारित करने का अधिकार है और सरकार उस पर केवल अनुच्छेद 19 के खंड (2) में विनिर्दिष्ट आधारों पर ही निर्बंधन लगा सकती है, किसी अन्य आधार पर नहीं।''

उच्चतम न्यायालय ने इसी वाद में यह भी अभिनिर्धारित किया कि -- क्रिकेट का खेल अभिव्यक्ति का माध्यम है और यह अनुच्छेद 19(1)(क) के वाक्-स्वातंत्र्य और अभिव्यक्ति-स्वातंत्र्य के अंतर्गत आता है। इस अधिकार के अंतर्गत मैचों का इलेक्ट्रॉनिक मीडिया अर्थात्

दूरदर्शन और रेडियो से प्रसारण करने का अधिकार भी सम्मिलित है, यह अधिकार मैचों के आयोजकों का है जिसमें हस्तक्षेप नहीं किया जा सकता है, आयोजक किसी भी माध्यम से मैचों का प्रसारण कर सकते हैं। सरकार को मैचों के प्रसारण पर कोई एकाधिकार नहीं है, इस अधिकार पर केवल अनुच्छेद 19(2) में वर्णित आधारों पर ही निर्बंधन लगाए जा सकते हैं अन्य किसी आधार पर नहीं।

उच्चतम न्यायालय ने इस वाद में क्षेत्र विस्तार के बारे में कहा कि वाक्-स्वातंत्र्य व अभिव्यक्ति-स्वातंत्र्य की अंतर्गत संसूचना प्राप्त करना और उसका प्रसारण करना भी सम्मिलित है। इसकी कोई भोगोलिक सीमा नहीं है। आज इलेक्ट्रॉनिक मीडिया दूरदर्शन व रेडियो संचार के बहुत प्रभावी माध्यम है। 'वायु तरंगें' सार्वजनिक संपत्ति हैं और उनका प्रयोग सार्वजनिक लाभ के लिए किया जाना चाहिए। इस अधिकार पर केवल अनुच्छेद 19(2) के अंतर्गत वर्णित आधारों पर निर्बंधन लगाए जा सकते हैं।

उच्चतम न्यायालय ने यह भी अपने निर्णय में कहा कि सरकार को एक स्वतंत्र स्वायत्त संस्था की स्थापना करनी चाहिए जिसमें समाज के सभी वर्गों का प्रतिनिधित्व हो जो 'वायु तरंगों' के नियंत्रण एवं प्रयोग को विनियमित करें। अनुच्छेद 19(2) इन मामलों में सरकार को एकाधिकार सृजित करने की शक्ति प्रदान नहीं करता है। टेलीग्राफ एक्ट की धारा 4 का निवचन अनुच्छेद 19(1) के अनुरूप किया जाना चाहिए।

एक स्वातंत्र्य व अभिव्यक्ति-स्वातंत्र्य के विषय में एक अन्य महत्त्वपूर्ण वाद **टाटा प्रेस लिमिटेड बनाम टेलीफोन निगम लिमिटेड**[12] के वाद में उच्चतम न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि वाणिज्यिक वाक 'विज्ञापन' की अनुच्छेद 19(1) (क) द्वारा प्रदत्त स्वातंत्र्य के अंतर्गत आता है और उस पर अनुच्छेद 19(2) में वर्णित आधारों पर ही निर्बंधन लगाया जा सकता है। लोकतंत्र में वाणिज्यिक स्वतंत्रता देश की अर्थव्यवस्था के लिए आवश्यक है। अतः उच्चतम न्यायालय ने निर्णय दिया कि सरकारी टेलीफोन डायरेक्टरी में प्राइवेट कंपनी को विज्ञापन प्रकाशित करने का अधिकार है, इसमें सरकार को कोई एकाधिकार प्राप्त नहीं है। ऐसे वाणिज्यिक विज्ञापन जो भ्रामक, अऋजु और असत्य हैं; उन्हें अनुच्छेद 19(2) के अंतर्गत किया जा सकता है।

फोन टेप करना -- एकांतता के अधिकार पर हस्तक्षेप

पीपुल्स यूनियन फॉर सिविल लिबर्टीज बनाम भारत संघ[13] के वाद में उच्चतम न्यायालय ने कहा कि 'एकांतता का अधिकार अनुच्छेद 21 के अंतर्गत दिए गए प्राण और दैहिक स्वतंत्रता के अधिकार में सम्मिलित है। उच्चतम न्यायालय ने टेलीफोन एक्ट, 1885 की धारा 5 (2) के अधीन राज्य सरकार की विवेकीय शक्ति के प्रयोग के लिए विस्तृत मार्गदर्शक सिद्धांत जारी किए जिससे इसके दुरुपयोग को रोका जा सके --

1. टेलीफोन टेप करने का आदेश केवल केंद्रीय सरकार के गृहसचिव और राज्य सरकार के गृह सचिव द्वारा ही दिया जा सकता है।

2. आदेश की प्रति एक सप्ताह के अंदर पुनर्विलोकन समिति को भेजी जाएगी।
3. आदेश यदि बढ़ाया नहीं जाता तो 2 माह की समाप्ति पर प्रवर्तन में नहीं रहेगा।
4. प्राधिकारी जो आदेश जारी करता है, वह बीच में संदेश को रोककर पढने या सुनने का ब्योरा रखेगा।
5. बीच में रोककर सुनने की बात न्यूनतम होगी, जितना धारा 5(2) के लिए आवश्यक हो।
6. आदेश को पुनर्विलोकन समिति दो माह के अंदर स्वयं जाँच करेगी कि क्या आदेश, धारा 5 (2) के अधीन सुसंगत है।
7. यदि पुनर्विलोकन के फलस्वरूप, समिति इस निष्कर्ष पर पहुँचती है कि धारा 5 (2) का उल्लंघन हुआ है, आदेश को रद्द कर देंगी, समिति टेप की हुई सामग्री को नष्ट करने का आदेश देगी।
8. यदि जाँच के पश्चात् पुनर्विलोकन समिति इस निष्कर्ष पर पहुँचती है कि 'धारा 5 (2) का उल्लंघन नहीं किया गया है तो अपने निष्कर्ष को रिकार्ड करेगी।

राष्ट्रीय ध्वज फहराना -- नागरिक का मूल अधिकार

भारत संघ बनाम नवीन जिंदल[14] के वाद में उच्चतम न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि अपने मकान पर राष्ट्रीय ध्वज को फहराने का अधिकार, भारत के प्रत्येक नागरिक को संविधान के अनुच्छेद 19(1) (क) के अंतर्गत प्राप्त है किंतु यह अधिकार भी आत्यंतिक नहीं है। इस मूल अधिकार पर अनुच्छेद 19(1) (क) के उपखंड (2) के अंतर्गत युक्तियुक्त निर्बंधन लगाए जा सकते हैं।

उच्चतम न्यायालय ने यह भी अभिनिर्धारित किया कि फ्लैग कोड यद्यपि अनुच्छेद 13 (3) (क) के अधीन 'विधि' नहीं है किंतु इसमें विहित मार्गदर्शक सिद्धांत, जो राष्ट्रीय ध्वज के आदर और गरिमा को संजोए रखने के लिए उपबंधित हैं, को मानना आवश्यक है। राष्ट्रीय ध्वज का आदर करना प्रत्येक नागरिक का मूल कर्त्तव्य भी है।

प्रेस की स्वतंत्रता

समाचार-पत्र, विचारों को अभिव्यक्त करने का एक महत्त्वपूर्ण माध्यम है। राजनीतिक स्वतंत्रता तथा प्रजातंत्र की सफलता के लिए प्रेस की स्वतंत्रता अपरिहार्य है। भारतीय प्रेस कमीशन ने कहा कि ''प्रजातंत्र केवल विधान मंडल की सचेत देखभाल में ही नहीं वरन् लोकमत की देखरेख और मार्गदर्शन के अंतर्गत मी फलता-फूलता है, प्रेस की ही स्वतंत्रता से लोकमत स्पष्ट होता है।''[15]

साकल पेपर्स लिमिटेड बनाम भारत संघ[16] के वाद में अभिनिर्धारित किया गया कि ''वाक् व अभिव्यक्ति-स्वातंत्र्य में प्रेस की स्वतंत्रता भी शामिल है क्योंकि समाचार-पत्र विचारों को अभिव्यक्त करने का माध्यम मात्र ही हैं लेकिन प्रेस की स्वतंत्रता, नागरिक की वाक् व अभिव्यक्ति

की स्वतंत्रता से बढ़कर नहीं है। अतः प्रेस की स्वतंत्रता भी उन निर्बंधनों के अधीन है जो अनुच्छेद 19(2) द्वारा नागरिकों की वाक् व अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता पर लगाए जा सकते हैं।''

लोर्ड मेंसफील्ड के अनुसार[17] प्रेस की स्वतंत्रता का अर्थ है -- बिना सरकारी अनुज्ञा के विचारों को प्रकाशित करना बशर्ते देश की साधारण विधि का उल्लंघन न किया गया हो। प्रेस की स्वतंत्रता केवल समाचार पत्रों के प्रकाशन तक ही सीमित नहीं है, इसके अंतर्गत ऐसे प्रकाशन भी शामिल है जिनके द्वारा कोई व्यक्ति अपने विचारों को दूसरे व्यक्तियों तक पहुँचा सकता है जैसे; पत्रिका, पत्रक, परिपत्र आदि।

प्रभुदत्त बनाम भारत संघ[18] के वाद में अभिनिर्धारित किया गया कि प्रेस की स्वतंत्रता में सूचनाओं तथा समाचारों को जानने का अधिकार भी शामिल है। ऐसे व्यक्तियों से साक्षात्कार के माध्यम से सूचनाएँ, जानने की स्वतंत्रता है किंतु जानने की स्वतंत्रता भी आत्यंतिक नहीं है, उस पर अनुच्छेद 19(2) के वर्णित आधारों पर युक्तियुक्त निर्बंधन लगाए जा सकते हैं।

प्रेस की स्वतंत्रता का अर्थ -- कर से मुक्ति नहीं

प्रिन्टर्स (मैसूर) लि. बनाम असिटेंट कामर्शियल टैक्स आफिसर[18] के वाद में उच्चतम न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि समाचार-पत्रों को केंद्रीय बिक्रीकर के अधीन समाचार-पत्रों के प्रकाशन के लिए कच्चे माल के क्रय करने पर 4 प्रतिशत बिक्रीकर से छूट पाने का हक है। समाचार-पत्रों पर उक्त छूट देने के लिए ही केंद्रीय बिक्री कर अधिनियम की धारा (2) के अधीन 'माल' शब्द की परिभाषा में संशोधन किया गया है जो समाचार-पत्रों की बिक्री पर बिक्री कर लगाने का निषेध करता है, इसका यह अर्थ नहीं है कि प्रेस कर से मुक्त है।

विचाराधीन बंदियों का साक्षात्कार

भारत संघ बनाम चारू लता जोशी[19] के वाद में उच्चतम न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि प्रेस को जेल में, विचाराधीन कैदियों के साक्षात्कार करने का अबाध अधिकार नहीं है। ऐसी अनुमति जेल मैनुअल में दिए गए संबंधित नियमों व विनियमों के अधीन ही दी जा सकती है। **एम. हसन बनाम आंध्र प्रदेश सरकार**[20] के वाद में उच्चतम न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि अनुच्छेद 19 के उपखंड (2) के अधीन रहते हुए एक फिल्म, चलचित्र या वीडियो विचारों और भावों के संप्रेषण की अनुमति दी जा सकती है अन्यथा नहीं। अतः अनुच्छेद 19(1) (क) के उपखंड (2) के आधारों के बिना, साक्षात्कार देने के लिए सम्मति देने वाले कैदियों को साक्षात्कार करने से रोकना अनु. 19(1) (क) के अधीन अभिव्यक्ति के अधिकार का उल्लंघन है और असांविधानिक है।

प्रदर्शन या धरना

कामेश्वर सिंह बनाम स्टेट ऑफ बिहार[21] के वाद में उच्चतम न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि प्रदर्शन करना या धरना देना भी अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के साधन है किंतु अनुच्छेद

19(1) (क) केवल उन्हीं प्रदशनों या धरनों को संरक्षण प्रदान करता है जो हिंसात्मक व उच्छृंखल न हो।

हड़ताल करना, मूल अधिकार नहीं

ओ.के. धान्य बनाम इ. एक्स. जोसेफ[22] के वाद में अभिनिर्धारित किया गया कि हड़ताल करने का अधिकार अनुच्छेद 19(1) (क) के अंतर्गत कोई अधिकार नहीं है, अतः किसी व्यक्ति को हड़ताल करने से रोका जा सकता है; प्रदर्शन जब हड़ताल बन जाए तो वह अभिव्यक्ति स्वातंत्र्य का अधिकार नहीं रहता है।

बंद का आह्वाहन व आयोजन असांविधानिक

भारतीय कम्युनिष्ट पार्टी (मार्क्सवादी) बनाम भरत व अन्य[23] के वाद में उच्चतम न्यायालय की तीन सदस्यीय पीठ ने अभिनिर्धारित किया कि राजनीतिक दलों द्वारा बंद का आयोजन करना अनुच्छेद 19(1) (क) और अनुच्छेद 21 द्वारा प्रदत्त मूल-अधिकारों का अतिक्रमण व असांविधानिक है।

चलचित्रों पर पूर्व-अवरोध, सांविधानिक

के.ए. अब्बास बनाम भारत संघ[24] के वाद में उच्चतम न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि चलचित्रों पर पूर्व-अवरोध, अनुच्छेद 19(1) (क) के अधीन सांविधानिक है और चलचित्रों पर पूर्व-अवरोध लोकहित में है। अमेरिका में चलचित्रों पर पूर्व-अवरोध को सांविधानिक माना गया है।

निर्बंधन के आधार (अनुच्छेद 19 (2)) अनुच्छेद 19 (2) के अनुसार, वाक्-स्वातंत्र्य और अभिव्यक्ति स्वातंत्र्य पर अग्रलिखित आधारों पर युक्तियुक्त निर्बंधन लगाए जा सकते हैं --

1. भारत की प्रभुता और अखंडता,
2. राज्य की सुरक्षा,
3. विदेशी राज्यों के साथ मैत्रीपूर्ण संबंधों,
4. लोकव्यवस्था,
5. शिष्टाचार या सदाचार के हितों में,
6. न्यायालय अवमान,
7. मानहानि, या
8. अपराध उद्दीपन ।

1. भारत की प्रभुता एवं अखंडता : यह आधार, अनुच्छेद 19(2) में संविधान के सोलहवें संशोधन अधिनियम 1963 द्वारा जोड़ा गया। इसके अंतर्गत ऐसे यह कथनों के प्रकाशन पर युक्तियुक्त निर्बंधन लगाया जा सकता है जिनसे भारत की प्रभुता एवं अखंडता पर किसी प्रकार

की आँच आती हो या भारत के किसी भाग को संघ से पृथक होने के लिए उकसाया गया हो। वैसे किसी प्रदेश की सीमाएँ कम करने या बढ़ाने का प्रचार करने पर रोक नहीं लगाई जा सकती है।

2. राज्य की सुरक्षा : सुरक्षा विदेशी हमले या आंतरिक-अव्यवस्था जैसा विद्रोह खतरे में पड़ती है, मामूली शांति भंग से नहीं। **रोमेश थापर बनाम मद्रास राज्य**[25] के वाद में अभिनिर्धारित किया गया कि सरकार की आलोचना करने या सरकार के प्रति अनादर या दुर्भावना को उकसाना, राज्य की सुरक्षा को खतरे में डालने वाला नहीं माना जाएगा।

3. विदेशी राज्यों के साथ मैत्रीपूर्ण संबंधों : संविधान के प्रथम संशोधन अधिनियम, 1951 द्वारा अनुच्छेद 19(2) युक्तियुक्त निर्बंधन का खंड में जोड़ा गया है। इस खंड का उद्देश्य केवल अपलेख और मानहानि के क्षेत्र को विस्तृत करना है और किसी को ऐसी मिथ्या या झूठी अफवाहें फैलाने से रोकना है जिससे किसी विदेशी राज्य के साथ हमारे मैत्री पूर्ण संबंधों को आघात पहुँचाना है।

4. लोक-व्यवस्था : युक्तियुक्त निर्बंधन का यह भी संविधान प्रथम संशोधन अधिनियम 1951 के द्वारा जोड़ा गया। इस आधार से तात्पर्य है कि समाज में विधिसम्मत व्यवस्था करना है अतः स्पष्ट है कि कोई भी बात जो समाज की शांति पर विपरीत प्रभाव है वह लोक-व्यवस्था पर भी विपरीत प्रभाव डालेगी। कोई भी बात, जिससे समाज में अशांति या क्षोभ उत्पन्न होता है, लोक-व्यवस्था के विरुद्ध होती है। इस प्रकार समाज में सांप्रदायिक विक्षोम पैदा करना था इस उद्देश्य से हड़ताल करवाना कि श्रमिकों में विक्षोभ उत्पन्न हो आदि ऐसे अपराध हैं जो लोक व्यवस्था के प्रतिकूल हैं।

5. शिष्टाचार या सदाचार के हितों में ऐसे कथनों या प्रकाशनों पर जिनसे लोक-नैतिकता एवं शिष्टता पर प्रतिकूल प्रभाव पडता है, सरकार युक्तियुक्त निर्बंधन लगा सकती है। सामान्यतः शिष्टाचार की कोई परिभाषा नहीं है। संतुलित व मर्यादित व्यवहार ही शिष्टाचार कहलाता है एक **आंग्ल वाद आर बनाम हिकालिन**[26] में कहा गया कि ''ऐसे कथन या प्रकाशन जो अनैतिक एवं भ्रष्ट विचारों को जन्म दे, अश्लील कहे जाएँगे। इस प्रकार सामान्यतः शिष्टाचार से तात्पर्य अश्लीलता का न होना है। **राजस्थान राज्य बनाम चावला**[27] के वाद में कहा गया कि ''इस अपवाद का प्रयोजन उन भाषणों और प्रकाशनों पर निर्बंधन लगाना है जो नैतिकता पर आघात करते हों।'' **करतार सिंह बनाम पंजाब राज्य**[28] में अभिनिर्धारित किया कि ''अश्लीलता के विरुद्ध बनाई गई विधि को इस खंड से संरक्षण प्राप्त होगा।''

6. न्यायालय अवमान : भारत के संविधान में न्यायालय अवमान की परिभाषा नहीं दी गई किंतु संसद ने न्यायालय अवमान अधिनियम, 1971 पारित कर इस कमी को समाप्त कर दिया है। इस अधिनियम की धारा 2 के अनुसार न्यायालय अवमान के अंतर्गत सिविल और आपराधिक दोनों प्रकार के अवमान शामिल है।

सिविल अवमान का अर्थ है कि जानबूझकर न्यायालय के निर्णय, डिक्री, निर्देश, आदेश,

रिट या उसकी किसी प्रक्रिया की अवहेलना या न्यायालय को दिए गए वचन का जानबूझकर भंग करना। आपराधिक अवमान से तात्पर्य ऐसे प्रकाशनों (चाहे वे मौखिक या लिखित या किसी अन्य माध्यम) से है जो --

1. न्यायालयों या न्यायाधीशों की निंदा की प्रवृत्ति वाला या उसके प्राधिकार को कम करने वाला हो या
2. जो पक्षपात का लाँछन लगाता हो या न्यायिक कार्यवाहियों में हस्तक्षेप करता हो या हस्तक्षेप करने की प्रवृत्ति वाला हो या
3. किसी भी प्रकार से न्याय प्रशासन के कार्य में हस्तक्षेप करता हो या हस्तक्षेप करने की प्रवृत्ति वाला हो या इस कार्य में अवरोध करता हो या अवरोध की प्रवृत्ति वाला हो। किंतु अग्रलिखित कृत्यों से न्यायालय अवमान नहीं होता है --
   (क) निर्दोष प्रकाशन और उसका विवरण,
   (ख) न्यायिक कार्यवाहियों का उचित व सही प्रकाशन,
   (ग) न्यायिक कृत्य की उचित आलोचना,
   (घ) न्यायाधीशों के विरूद्ध ईमानदारी से की गई शिकायत,
   (ङ) वाद की न्यायिक कार्यवाहियों का सही प्रकाशन।

7. मानहानि : कोई भी ऐसा कथन या प्रकाशन जो किसी व्यक्ति की प्रतिष्ठा को क्षति पहुँचाता है, मानहानि कहलाता है। ऐसे कथन का प्रकाशन मानहानि कहा जाता है, जो किसी व्यक्ति की समाज में घृणा, हँसी या अवमान का पात्र बनाता है। ऐसे कथन या प्रकाशन पर अनुच्छेद 19(2) के अंतर्गत युक्तियुक्त प्रतिबंध लगाए जा सकते हैं।

मानहानि भी दो प्रकार की होती है -- 1. सिविल 2. आपराधिक। सिविल मानहानि में 'अपकृत्य विधि' में पूर्ण विवरण है। आपराधिक मानहानि के विषय में भारत दंड संहिता की धारा 499 7500 में उल्लेख है।

अपराध उद्दीपन : यह आधार, संविधान के प्रथम संशोधन अधिनियम 1951 द्वारा जोड़ा गया। वाक् व अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता, किसी व्यक्ति को इस बात का अधिकार नहीं देती कि वे लोगों की अपराध करने के लिए भड़काएँ या उकसाये। अपराध करने की उत्तेजना देने वाले भाषणों को विधि द्वारा रोका व दंडित किया जा सकता है। 'उकसाना' शब्द के अंतर्गत कथा सम्मिलित है, इसका निर्धारण न्यायालय करेगें जो प्रत्येक मामले के तथ्यों और परिस्थितियों पर निर्भर करेगा।

युक्तियुक्त निर्बंधन की कसौटी

युक्तियुक्त-निर्बंधन क्या है, यह कठिन प्रश्न है। निर्बंधनों की युक्तियुक्ता का निर्धारण करना न्यायालयों का कार्य है। युक्तियुक्ता का निर्णय प्रत्येक मामले के तथ्यों और परिस्थितियों के आधार पर किया जाएगा, उच्चतम न्यायालय ने कुछ सामान्य नियम स्थापित किए हैं जिनके

आधार पर निर्बंधनों की युक्तियुक्तता की जाँच की जाती है, वे अग्रलिखित हैं --

1. कोई निर्बंधन युक्तियुक्त है या नहीं, इसका निर्णय करने की शक्ति न्यायालयों की है, विधानमंडल को नहीं।[29]
2. आवश्यक है कि लगाए गए निर्बंधनों और उस उद्देश्य में तर्क संगत संबंध हो जिसे विधि बनाकर विधानमण्डल प्राप्त करना चाहता है, यदि विधिस्वेच्छाकारी और आवश्यकता से अधिक निर्बंधन लगाने की अनुमति देती है तो उसे अवैध घोषित किया जाएगा।
3. युक्तियुक्तता का निर्णय प्रत्येक मामले के तथ्यों और परिस्थितियों के आधार पर किया जाएगा।[30]
4. निर्बंधनों को मौलिक विधि और प्रक्रियात्मक विधि, दोनो दृष्टिकोणों से युक्तिसंगत होना चाहिए।[31]
5. राज्य की नीति के निदेशक तत्वों में निहित उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए लगाए गए निर्बंधन युक्तियुक्त माने जा सकते हैं।
6. निर्बंधनों की युक्तियुक्तता के निर्धारण में न्यायालयों का दृष्टिकोण वस्तुनिष्ठ होना चाहिए, व्यक्तिनिष्ठ नहीं।[32]
7. निर्बंधनों को युक्तियुक्त बनाने के लिए, उनमें और उस उद्देश्य में जिसे विधायिका विधि बनाकर प्राप्त करना चाहती है, एक विवेकपूर्ण संबंध होना चाहिए।[33]
8. अनुच्छेद 19(1) में प्रदत्त अधिकार पर लगाए गए निर्बंधन केवल अनुच्छेद 19 के उपखंड (2) में दिए गए आधारों पर ही लगाए जा सकते हैं, इससे अन्य किसी आधार पर लगाए गए निर्बंधन, असांविधानिक होंगे।[34]
9. न्यायालयों का कार्य केवल निर्बंधनों की युक्तियुक्तता का निर्माण करना है, न कि विधि की युक्तियुक्तता का निमार्ण करना।[35]
10. युक्तियुक्त निर्बंधन 'निषेधात्मक' भी हो सकते हैं, कुछ विशेष परिस्थितियों में नागरिकों के आधार पर पूर्ण रोक लगाना युक्तियुक्त निर्बंधन माना जाता है।[36]

❑

संदर्भ

1. संविधान (सोलहवाँ संशोधन) अधिनियम 1963 की धारा 2 द्वारा अंतः स्थापित
2. इंडियन एक्सप्रेस न्यूज पेपर्स बनाम भारत संघ (1985) एस.सी.सी. 641
3. भारत संघ बनाम नवीन जिंदल (2004) 2, सरा. सी.सी. 510, पैरा 37
4. भारत संघ बनाम एसोशिएशन फॉर डेमोक्रेटिक रिफार्म्स, ए.आई.आर. 2002 एस.सी.
5 पीपुल्स यूनियन फॉर सिविल लिबरटीज बनाम भारत संघ, ए.आई.आर, 2003 एस. सी. 2363
6. वायज पल्युशन (V) इन रि, ए.आई.आर. 2005, एस.सी. 31361

7. ए.आई.आर. 1950, एस-सी 124.
8. रिलायंस पेट्रोकेमिकल्स लि. प्रोप्राइटर्स ऑफ इंडियन न्यूज पेपर (बाम्बे) प्रा. लि. ए..आई. आर. 1989, एस-सी. 190
9. श्रीनिवास बनाम मदास राज्य, ए.आई.आर. 1951 मदास 79
10. पीपुल्स यूनियन फॉर सिविल लिबर्टीज बनाम भारत संघ, ए.आई.आर. 2004, एस.सी. 456
11. (1995) 2, एस.एस.सी. 161
12 (1995) 5, एस.सी. सी. 138.
13. ए.आई.आर. 1997, एस.सी. 568.
14. ए.आई.आर. 2004, एस.सी. 1559,
15. प्रेस कमीशन रिपोर्ट, खंड-1, पृष्ठ 359
16. शर्मा बनाम सिन्हा, ए.आई.आर. 1959, एस.सी. 395
17. लावेल बनाम ग्रिफिन (1938) 303, यू.एस. 444
18. ए.आई.आर. 1982, एस.सी. 6
18(अ). (1994)2, एस.सी.सी. 434
19. ए.आई.आर. 1999, एस.सी. 1379
20. ए.आई.आर. 1998, आंध्र प्रदेश 35
21. ए.आई.आर. 1972, एस.सी. 1166
22. ओ.के. घोष बनाम इ. एक्स जोसेफ, ए.आई.आर. 1973 एस.सी. 812
23. ए.आई.आर. 1998, एस.सी. 184
24. ए.आई.आर. 1971, एस. सी. 481
25. ए.आई.आर. 1950, एस.सी. 124
26. 1968, एल.आर. क्यू. बी. 360
27. (1959) स.च. (1) एस.सी.आर. 904
28. (1956) एस.सी. 541
29. चिंतामन राय बनाम मध्य प्रदेश राज्य, ए.आई.आर. 1951, 118
30. मद्रास राज्य बनाम बी.जी. राय, ए.आई.आर. 1952, एस.सी. 196
31. डॉ. खरे बनाम पंजाब राज्य, ए.आई.आर. 1950, एस.सी. 213
32. बंबई राज्य बनाम बालसारा, ए.आई.आर. 1951, एस.सी. 348
33. मद्रास राज्य बनाम वी.जी. राव, ए.आई.आर. 1952, एस.सी. 196
34. रोमेश थापर बनाम मदास राज्य, ए.आई.आर. 1950, एस.सी. 124
35. एच.बी. खरे बनाग दिल्ली राज्य, ए.आई.आर. 1950 एस.सी. 211
36. नरेंद्र कुमार बनाम भारत संघ, ए.आई.आर. 1960, एस.सी. 430

डॉ. दुष्यंत कुमार एवं मंगला प्रसाद पटेल

भारत में कामकाजी महिलाओं के संवैधानिक और कानूनी अधिकारों का एक संक्षिप्त अध्ययन

प्रस्तावना

भारत में महिलाओं के अधिकारों को दो श्रेणियों में वर्गीकृत किया जा सकता है, अर्थात् संवैधानिक अधिकार और कानूनी अधिकार। संविधान के विभिन्न प्रावधानों में संवैधानिक अधिकार दिए गए हैं। दूसरी ओर, कानूनी अधिकार संसद और राज्य विधान सभाओं के विभिन्न कानूनों (अधिनियमों) में दिए गए हैं। भारत का संविधान एक ऐसे युग में लिखा गया था जब भारतीय महिलाओं की स्थिति बहुत खराब थी और उनमें तत्काल सुधार की आवश्यकता थी। समाज में महिलाओं को मानसिक और शारीरिक रूप से प्रताड़ित किया जाता था। इसीलिए संविधान में महिलाओं के पक्ष में कई कदम उठाए गए हैं। लैंगिक समानता का सिद्धांत भारतीय संविधान में अपने मौलिक कर्तव्यों, मौलिक अधिकारों, निर्देशक सिद्धांतों और प्रस्तावना में भी निहित है। संविधान महिलाओं को समानता प्रदान करता है और राज्य को महिलाओं के पक्ष में सकारात्मक भेदभाव के उपायों को अपनाने का अधिकार भी देता है। भारत एक लोकतांत्रिक देश है इसलिए कानूनों, विकास नीतियों, योजनाओं और कार्यक्रमों का उद्देश्य विभिन्न क्षेत्रों में महिलाओं की उन्नति है। लेकिन अब समाज में कई मामलों में महिलाओं का शोषण हो रहा है। महिलाओं के खिलाफ हिंसा महिलाओं के अधिकारों के लिए एक बड़ा खतरा रही है। ज्यादातर महिलाएँ अपने अधिकारों के बारे में पूरी तरह से जागरूक नहीं हैं इसलिए, यह लेख भारत में महिलाओं के संवैधानिक और कानूनी अधिकारों और भारत में महिलाओं के अधिकारों के लिए चुनौतियों पर चर्चा करेगा।

भारत में कामकाजी महिलाओं के कानूनी और संवैधानिक अधिकारों को कानूनों, नीतियों और न्यायिक व्याख्याओं के एक जटिल ढाँचे द्वारा आकार दिया गया है जिसका उद्देश्य लैंगिक समानता, सामाजिक न्याय और कार्यस्थल सुरक्षा सुनिश्चित करना है। ऐतिहासिक रूप से, भारतीय समाज लैंगिक पूर्वाग्रहों से जूझ रहा है जिसने कार्यबल में महिलाओं की भागीदारी में बाधा उत्पन्न की है। हालाँकि, कानूनी और संवैधानिक परिदृश्य पिछले कुछ वर्षों में काफी विकसित हुआ है, जो कामकाजी महिलाओं को सुरक्षा का एक मजबूत सेट प्रदान करता है।

संवैधानिक अधिकार

भारतीय संविधान, जो 1950 में लागू हुआ, कामकाजी महिलाओं सहित महिलाओं के अधिकारों की नींव रखता है। अनुच्छेद 14 कानून के समक्ष समानता की गारंटी देता है, जबकि अनुच्छेद 15 लिंग के आधार पर भेदभाव को प्रतिबंधित करता है। अनुच्छेद 16 सार्वजनिक रोजगार के मामलों में समान अवसर सुनिश्चित करता है। साथ में, ये अनुच्छेद भारत में लैंगिक समानता के लिए कानूनी ढाँचा स्थापित करते हैं।

इसके अलावा, राज्य के नीति निर्देशक सिद्धांत (संविधान का भाग चार) सामाजिक न्याय के प्रति प्रतिबद्धता को सुदृढ़ करते हैं, विशेष रूप से अनुच्छेद 39 (ए) और (डी), जो समान काम के लिए समान वेतन और श्रमिकों के अधिकारों, विशेष रूप से महिलाओं के संरक्षण की माँग करते हैं। ये संवैधानिक प्रावधान विभिन्न कानूनों के लिए आधार प्रदान करते हैं जो कामकाजी महिलाओं को कार्यस्थल पर शोषण, भेदभाव और असमानता से बचाते हैं।

प्रमुख विधायी सुरक्षा

कामकाजी महिलाओं के संवैधानिक अधिकारों को बनाए रखने के लिए कई महत्त्वपूर्ण कानून बनाए गए हैं। 1976 का समान पारिश्रमिक अधिनियम पुरुषों और महिलाओं दोनों के लिए समान काम के लिए समान वेतन को अनिवार्य करता है, जो ऐतिहासिक रूप से वंचित महिलाओं की मजदूरी असमानताओं को संबोधित करता है। मातृत्व लाभ अधिनियम 1961, 2017 में संशोधित, 26 सप्ताह तक का भुगतान मातृत्व अवकाश बढ़ाता है, गर्भावस्था और प्रारंभिक मातृत्व के दौरान नौकरी की सुरक्षा प्रदान करता है, जिससे महिलाओं और बच्चों के स्वास्थ्य और कल्याण को बढ़ावा मिलता है।

कार्यस्थल पर महिलाओं का यौन उत्पीड़न (रोकथाम, निषेध और निवारण) अधिनियम 2013 एक और ऐतिहासिक कानून है जो 1997 में सुप्रीम कोर्ट द्वारा निर्धारित विशाखा दिशानिर्देशों से उभरा है। यह अधिनियम अनिवार्य करता है कि नियोक्ता काम पर यौन उत्पीड़न को रोकने और संबोधित करने के लिए तंत्र बनाते हैं, जिससे महिलाओं के लिए एक सुरक्षित कार्य वातावरण प्रदान किया जा सके। यह संगठनों के लिए यौन उत्पीड़न से संबंधित शिकायतों को संभालने के लिए आंतरिक शिकायत समितियों (आईसीसी) की स्थापना करना भी अनिवार्य बनाता है।

इसके अलावा, 1948 का कारखाना अधिनियम कारखानों में काम करने वाली महिलाओं के लिए सुरक्षा विनियम प्रदान करता है, जैसे काम के घंटों पर प्रतिबंध और एक निश्चित संख्या से अधिक महिला कर्मचारियों वाले प्रतिष्ठानों में क्रेच सुविधाओं के प्रावधान। इसी तरह, 1948 का कर्मचारी राज्य बीमा अधिनियम महिला कर्मचारियों को चिकित्सा और वित्तीय लाभ प्रदान करता है।

न्यायिक व्याख्याएँ

न्यायपालिका ने कामकाजी महिलाओं के अधिकारों को सुदृढ़ करने और उनका विस्तार करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई है। विशाखा बनाम विशाखा जैसे ऐतिहासिक मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय ने राजस्थान राज्य (1997) और एयर इंडिया बनाम नर्गिस मिर्जा (1981) के मामले में अपने निर्णय में न केवल लैंगिक संवेदनशील कानूनों की आवश्यकता पर बल दिया है बल्कि महिलाओं के अधिकारों को बढ़ाने के लिए संवैधानिक प्रावधानों की व्याख्या भी की है। इस क्षेत्र में न्यायपालिका की सक्रियता ने एक प्रगतिशील कानूनी ढाँचे को आकार देने में योगदान दिया है जो कार्यस्थल में लैंगिक असमानता की चुनौतियों को संतुलित करना चाहता है।

चुनौतियाँ और अंतराल

इस मजबूत कानूनी ढाँचे के बावजूद, महत्त्वपूर्ण चुनौतियाँ बनी हुई हैं। इन कानूनों का प्रवर्तन अक्सर कमजोर होता है, खासकर असंगठित क्षेत्र में जहाँ अधिकांश भारतीय महिलाएँ कार्यरत हैं। लिंग आधारित वेतन असमानताएँ, यौन उत्पीड़न, कैरियर में उन्नति के अवसरों की कमी और छोटे उद्यमों में अपर्याप्त मातृत्व लाभ कार्यबल में महिलाओं की पूर्ण भागीदारी में बाधा बने हुए हैं। सांस्कृतिक दृष्टिकोण और सामाजिक मानदंड भी बाधाएँ पेश करते हैं, क्योंकि कई महिलाओं को अपनी पेशेवर आकांक्षाओं पर घरेलू जिम्मेदारियों को प्राथमिकता देने के दबाव का सामना करना पड़ता है।

जबकि कामकाजी महिलाओं के अधिकारों की रक्षा के लिए भारत का कानूनी और संवैधानिक ढाँचा व्यापक है, वास्तविक लैंगिक समानता प्राप्त करने के लिए प्रभावी कार्यान्वयन और सांस्कृतिक परिवर्तन आवश्यक हैं। जागरूकता बढ़ाने, प्रवर्तन तंत्र को मजबूत करने और अर्थव्यवस्था के सभी क्षेत्रों में महिलाओं के लिए अधिक समावेशी और सहायक कार्य वातावरण बनाने के लिए निरंतर प्रयासों की आवश्यकता है।

भारत में कार्यस्थलों पर कामकाजी महिलाओं के कानूनी अधिकारों पर न्यायपालिका की भूमिका

भारत में न्यायपालिका ने कार्यस्थल में कामकाजी महिलाओं के कानूनी अधिकारों को आकार देने और उनकी सुरक्षा करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई है। ऐतिहासिक निर्णयों और संवैधानिक और वैधानिक प्रावधानों की सक्रिय व्याख्याओं के माध्यम से, भारतीय अदालतों ने न केवल लैंगिक समानता को बरकरार रखा है, बल्कि महिलाओं के लिए कार्यस्थल के अधिकारों के दायरे को भी व्यापक बनाया है। इस संदर्भ में न्यायपालिका की भूमिका महत्त्वपूर्ण है क्योंकि यह सुनिश्चित करती है कि विधायी उपायों को प्रभावी ढंग से लागू किया जाए और बदलती सामाजिक-आर्थिक स्थितियों में महिलाओं के अधिकारों की रक्षा के लिए नए मानक विकसित किए जाएँ।

संवैधानिक ढाँचा और न्यायिक भूमिका

भारतीय संविधान, अनुच्छेद 14, 15 और 16 के माध्यम से, कानून के समक्ष समानता की गारंटी देता है, लिंग के आधार पर भेदभाव को रोकता है, और सार्वजनिक रोजगार में समान अवसर सुनिश्चित करता है। न्यायपालिका ने विभिन्न निर्णयों में इन प्रावधानों को सुदृढ़ किया है, जिससे कामकाजी महिलाओं के कानूनी अधिकारों को मजबूती मिली है।

इस संबंध में सबसे महत्त्वपूर्ण मामलों में से एक है **विशाखा एवं अन्य बनाम राजस्थान राज्य**। इस ऐतिहासिक फैसले में, भारत के उच्चतम न्यायालय ने विशिष्ट कानून के अभाव में कार्यस्थल पर यौन उत्पीड़न को संबोधित करने के लिए दिशानिर्देश निर्धारित किए। विशाखा दिशा-निर्देशों ने संगठनों में शिकायत समितियों की स्थापना को अनिवार्य कर दिया और नियोक्ताओं को यौन उत्पीड़न को रोकने के लिए सक्रिय उपाय करने की आवश्यकता थी। इस मामले ने विधायी कार्रवाई के अभाव में सक्रिय ढाँचा बनाने की न्यायपालिका की क्षमता का प्रदर्शन किया। दिशानिर्देशों ने बाद में 2013 के कार्यस्थल पर महिलाओं के यौन उत्पीड़न (रोकथाम, निषेध और निवारण) अधिनियम का आधार बनाया जिसने औपचारिक रूप से इन सुरक्षाओं को संस्थागत बनाया।

कार्यस्थल सुरक्षा और लैंगिक समानता

न्यायपालिका ने महिलाओं के लिए सुरक्षित कार्य परिस्थितियाँ सुनिश्चित करने के लिए भी हस्तक्षेप किया है। उदाहरण के लिए, पीपुल्स यूनियन फॉर डेमोक्रेटिक राइट्स बनाम भारत संघ (1982) मामले में सर्वोच्च न्यायालय ने मानवीय कामकाजी परिस्थितियों के महत्त्व पर बल दिया, जिसमें लिंग-विशिष्ट विचार शामिल हैं, विशेष रूप से खतरनाक उद्योगों में कमजोर श्रमिकों के लिए। इस मामले ने यह सुनिश्चित करने के लिए संवैधानिक जिम्मेदारी पर प्रकाश डाला कि महिलाओं को शोषणकारी कामकाजी परिस्थितियों के अधीन नहीं किया जाता है, इस प्रकार लिंग-संवेदनशील श्रम नीतियों की आवश्यकता को मजबूत किया जाता है। एक अन्य महत्त्वपूर्ण हस्तक्षेप **एयर इंडिया बनाम नर्गेश मिर्जा** (1981) में था, जहाँ सुप्रीम कोर्ट ने शादी, गर्भावस्था और सेवानिवृत्ति के संबंध में एयर होस्टेस पर लगाए गए भेदभावपूर्ण सेवा शर्तों को रद्द कर दिया था। न्यायालय ने फैसला सुनाया कि ऐसी स्थितियाँ समानता के सिद्धांतों का उल्लंघन करती हैं और महिलाओं की गरिमा का अपमान करती हैं, जिससे सार्वजनिक और निजी रोजगार में काम करने के अधिकार और समान उपचार की व्यापक व्याख्या होती है।

समान वेतन और मातृत्व लाभ

न्यायपालिका ने महिलाओं के लिए समान पारिश्रमिक सुनिश्चित करने में भी महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई है। 1976 का समान पारिश्रमिक अधिनियम लिंग की परवाह किए बिना समान कार्य के लिए समान वेतन को अनिवार्य करता है, लेकिन इसका कार्यान्वयन असंगत रहा

है। अदालतों ने इस कानून का अनुपालन सुनिश्चित करने के लिए नियमित रूप से कदम उठाया है। मैकिनॉन मैकेंजी एँड कंपनी लिमिटेड बनाम ऑड्रे डीश्कोस्टा (1987) जैसे मामलों में, सुप्रीम कोर्ट ने दोहराया कि महिलाओं को समान काम के लिए समान रूप से भुगतान किया जाना चाहिए, पारिश्रमिक में लिंग समानता के सिद्धांत को लागू करना। इसके अलावा, न्यायपालिका ने मातृत्व लाभ अधिनियम 1961 के तहत दिए गए अधिकारों को मजबूत करते हुए मातृत्व लाभों की व्यापक व्याख्या की है। दिल्ली नगर निगम बनाम महिला श्रमिक (2000) जैसे मामलों में, सुप्रीम कोर्ट ने माना कि यहाँ तक कि आकस्मिक और संविदा महिला कर्मचारी भी मातृत्व अवकाश और लाभ की हकदार थीं, जिससे विभिन्न क्षेत्रों में महिलाओं के लिए व्यापक कवरेज सुनिश्चित हुआ।

उभरती चुनौतियों का समाधान

जैसे-जैसे सामाजिक मानदंड विकसित होते हैं, न्यायपालिका कामकाजी महिलाओं के सामने आने वाली नई चुनौतियों के अनुकूल होती जा रही है। उदाहरण के लिए, अदालतों ने गिग श्रमिकों, अनुबंध श्रम और अनौपचारिक क्षेत्र के कर्मचारियों से संबंधित मुद्दों को उठाया है, जहाँ महिलाओं को अक्सर गंभीर शोषण का सामना करना पड़ता है और बुनियादी कानूनी सुरक्षा की कमी होती है। ऐसे मामलों में, न्यायपालिका ने अनौपचारिक क्षेत्रों में श्रम सुरक्षा के विस्तार का आह्वान किया है, यह सुनिश्चित करते हुए कि महिलाओं को कानूनी सुरक्षा उपायों के दायरे से बाहर नहीं रखा गया है। भारतीय न्यायपालिका ने कामकाजी महिलाओं के कानूनी अधिकारों को हासिल करने और बढ़ाने में एक परिवर्तनकारी भूमिका निभाई है। यौन उत्पीड़न के खिलाफ सुरक्षा सुनिश्चित करने से लेकर समान वेतन और मातृत्व लाभों को मजबूत करने तक, अदालतें कार्यस्थल में लैंगिक न्याय की सुरक्षा करने में सबसे आगे रही हैं। हालाँकि, चुनौतियाँ बनी हुई हैं, विशेष रूप से अनौपचारिक और असंगठित क्षेत्रों में, और इन अंतरालों को पाटने के लिए निरंतर न्यायिक सक्रियता आवश्यक होगी। न्यायपालिका की भूमिका महत्त्वपूर्ण रहेगी क्योंकि भारत कार्यस्थल में वास्तविक लैंगिक समानता के लिए प्रयास करना जारी रखता है।

भारत में कामकाजी महिलाओं के अधिकारों की सुरक्षा में सामाजिक न्याय के सिद्धांतों की भूमिका

सामाजिक न्याय के सिद्धांत भारत में कामकाजी महिलाओं के अधिकारों की रक्षा करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं, यह सुनिश्चित करते हुए कि उनके पास समान अवसर, गरिमापूर्ण कामकाजी परिस्थितियों और भेदभाव से स्वतंत्रता तक पहुँच है। समानता, निष्पक्षता और मानवीय गरिमा के मूल्यों में निहित, सामाजिक न्याय सिद्धांतों का उद्देश्य उन ऐतिहासिक और संरचनात्मक नुकसानों को दूर करना है जिनका महिलाओं ने औपचारिक और अनौपचारिक दोनों रोजगार क्षेत्रों में सामना किया है। ये सिद्धांत भारतीय संविधान में अंतर्निहित हैं और

कानूनों, नीतियों और न्यायिक हस्तक्षेपों में परिलक्षित होते हैं जो कामकाजी महिलाओं के उत्थान और उनके अधिकारों की रक्षा करने का प्रयास करते हैं।

सामाजिक न्याय का संवैधानिक आधार

भारतीय संविधान सामाजिक न्याय के सार को विशेष रूप से अपनी प्रस्तावना, मौलिक अधिकारों (भाग III) और राज्य के नीति निर्देशक सिद्धांतों (भाग IV) के माध्यम से मूर्त रूप देता है। प्रस्तावना न्याय के आदर्शों को रेखांकित करती है -- सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक -- और स्थिति और अवसर की समानता। अनुच्छेद 14, 15 और 16 कानून के समक्ष समानता की गारंटी देते हैं, लिंग के आधार पर भेदभाव को रोकते हैं और सार्वजनिक रोजगार में समान अवसर सुनिश्चित करते हैं। ये संवैधानिक जनादेश कामकाजी महिलाओं के अधिकारों की रक्षा करने, कार्यस्थल में लैंगिक समानता को बढ़ावा देने के लिए आधार प्रदान करते हैं। राज्य के नीति निर्देशक सिद्धांत, विशेष रूप से अनुच्छेद 38 और 39, सामाजिक न्याय की आवश्यकता को और सुदृढ़ करते हैं। अनुच्छेद 38 राज्य से असमानताओं को कम करके लोगों के कल्याण को बढ़ावा देने का आह्वान करता है, जबकि अनुच्छेद 39 समान कार्य के लिए समान वेतन पर जोर देता है और यह अनिवार्य करता है कि पुरुष और महिला श्रमिकों को आजीविका के पर्याप्त साधन और सुरक्षित काम करने की स्थिति का अधिकार है। साथ में, ये प्रावधान कार्यस्थल में महिलाओं के समान उपचार की वकालत करके और संरचनात्मक असमानताओं को संबोधित करके सामाजिक न्याय की भावना को मूर्त रूप देते हैं जिन्होंने ऐतिहासिक रूप से उन्हें हाशिए पर डाल दिया है।

समान वेतन और रोजगार के अवसर

सामाजिक न्याय का सिद्धांत महिलाओं के लिए समान काम के लिए समान वेतन हासिल करने में सहायक रहा है। 1976 का समान पारिश्रमिक अधिनियम इस मान्यता का प्रत्यक्ष परिणाम है कि लिंग आधारित वेतन असमानता अन्यायपूर्ण है और समानता और निष्पक्षता के सिद्धांतों के विपरीत है। यह कानून समान या समान कार्य करने वाले पुरुषों और महिलाओं के लिए समान वेतन को अनिवार्य करता है, यह सुनिश्चित करता है कि महिलाओं के साथ केवल उनके लिंग के आधार पर मजदूरी के मामले में भेदभाव नहीं किया जाता है। इसके अलावा, सामाजिक न्याय के सिद्धांत की माँग है कि महिलाओं को रोजगार के समान अवसर प्रदान किए जाएँ जबकि कानून भर्ती, पदोन्नति और अन्य रोजगार से संबंधित निर्णयों में गैर-भेदभाव की गारंटी देता है, सामाजिक न्याय के लिए यह सुनिश्चित करने के लिए सक्रिय हस्तक्षेप की आवश्यकता है कि ये अवसर सभी महिलाओं को उपलब्ध कराए जाएँ, जिनमें दलितों, आदिवासियों और ग्रामीण क्षेत्रों की महिलाओं जैसे हाशिए के समुदायों की महिलाएँ शामिल हैं। सकारात्मक कार्रवाई नीतियाँ, हालाँकि मुख्य रूप से जाति-आधारित आरक्षण पर

केंद्रित हैं, अधिक समावेशी कार्यक्षेत्रों को बढ़ावा देकर अप्रत्यक्ष रूप से महिलाओं को भी लाभान्वित करती हैं।

मातृत्व अधिकार और कार्य-जीवन संतुलन

सामाजिक न्याय कामकाजी महिलाओं के अपने पेशेवर और व्यक्तिगत जीवन को संतुलित करने के अधिकारों की वकालत करने में भी महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता है। वर्ष 2017 में संशोधित मातृत्व लाभ अधिनियम 1961 में 26 सप्ताह के सवैतनिक मातृत्व अवकाश का प्रावधान है, ताकि यह सुनिश्चित किया जा सके कि महिलाओं को अपने करियर और मातृत्व के बीच चयन न करना पड़े। सामाजिक न्याय में निहित यह कानून महिलाओं की जैविक और सामाजिक जिम्मेदारियों को पहचानता है और उन्हें गर्भावस्था और प्रसवोत्तर के दौरान नौकरी की सुरक्षा प्रदान करता है।

मातृत्व लाभों के अलावा, सामाजिक न्याय के सिद्धांत कार्यस्थल नीतियों की माँग करते हैं जो कार्य-जीवन संतुलन को बढ़ावा देते हैं, जिसमें चाइल्ड केअर सुविधाओं तक पहुँच, लचीले काम के घंटे और मातृत्व अवकाश के बाद काम पर लौटने वाली महिलाओं के लिए सुरक्षा शामिल है। इन मुद्दों को संबोधित करके, सामाजिक न्याय आर्थिक और व्यावसायिक नुकसान को कम करने में मदद करता है जो महिलाओं को अक्सर उनकी देखभाल करने वाली भूमिकाओं के कारण सामना करना पड़ता है।

यौन उत्पीड़न से सुरक्षा

कार्यस्थल पर महिलाओं को यौन उत्पीड़न से बचाने के लिए कानूनों को आकार देने में सामाजिक न्याय का सिद्धांत भी मौलिक रहा है। कार्यस्थल पर महिलाओं का यौन उत्पीड़न (रोकथाम, निषेध और निवारण) अधिनियम 2013 एक महत्त्वपूर्ण विधायी उपाय है जो महिलाओं की गरिमा की रक्षा करने और एक सुरक्षित और न्यायसंगत कार्य वातावरण बनाने का प्रयास करता है। यह अधिनियम इस सिद्धांत पर आधारित है कि सभी श्रमिकों को, लिंग की परवाह किए बिना, हिंसा, धमकी और उत्पीड़न से मुक्त वातावरण में काम करने का अधिकार है।

अनौपचारिक क्षेत्र की चुनौतियों का समाधान

भारतीय महिलाओं का एक महत्त्वपूर्ण हिस्सा अनौपचारिक क्षेत्र में काम करता है, जहाँ कानूनी सुरक्षा और निरीक्षण की कमी के कारण सामाजिक न्याय अक्सर मायावी होता है। सामाजिक न्याय सिद्धांत असंगठित क्षेत्रों में महिलाओं के लिए श्रम सुरक्षा, जैसे उचित मजदूरी, सुरक्षित काम करने की स्थिति और मातृत्व लाभ के विस्तार की वकालत करते हैं। 2008 के असंगठित श्रमिक सामाजिक सुरक्षा अधिनियम जैसी पहल इस अंतर को दूर करने की कोशिश करती है, हालाँकि इन श्रमिकों के लिए व्यापक सुरक्षा सुनिश्चित करने के लिए बहुत कुछ किया जाना बाकी है।

भारत में कामकाजी महिलाओं के अधिकारों की रक्षा के लिए सामाजिक न्याय के सिद्धांत आवश्यक हैं, क्योंकि वे समानता, निष्पक्षता और गरिमा पर जोर देते हैं। ये सिद्धांत कानूनी और संवैधानिक ढाँचे में परिलक्षित होते हैं, जो समान वेतन सुनिश्चित करने, मातृत्व अधिकारों को सुरक्षित करने, यौन उत्पीड़न को रोकने और एक सुरक्षित कार्य वातावरण प्रदान करने का प्रयास करता है। हालाँकि, चुनौतियाँ बनी हुई हैं, विशेष रूप से अनौपचारिक क्षेत्र में और इन सुरक्षाओं के प्रभावी कार्यान्वयन को सुनिश्चित करने में। सामाजिक न्याय को बनाए रखने के निरंतर प्रयास भारत के कार्यस्थलों में वास्तविक लैंगिक समानता प्राप्त करने के लिए महत्त्वपूर्ण होंगे।

❑

संदर्भ

1. बसु, दुर्गा दास, भारत के संविधान का परिचय, लेक्सिस नेक्सिस
2. रतन, ज्योति, स्त्री और विधि, भारत लॉ हाउस
3. माइनेनी, एसआर, महिलाओं से संबंधित कानून, एशिया लॉ हाउस
4. सिंह, सरोज कुमार, कानूनी प्रावधानों के तहत भारत में महिला अधिकार, रेड शाइन इंटरनेशनल प्रेस
5. यूनुस, सबा और वर्मा, सीमा, भारत में महिला सशक्तिकरण के लिए कानूनी प्रावधान, इंटरनेशनल जर्नल ऑफ ह्यूमैनिटीज एँड मैनेजमेंट साइंस, वॉल्यूम III, अंक वी
6. वनागेरी, हुसेनासाब और असगी, रेणुका ई. महिला सशक्तिकरण में महिलाओं के अधिकार और गैर-सरकारी संगठनों की भूमिका। तुम्बे ग्रुप ऑफ इंटरनेशनल जर्नल, खंड-IV, अंक-I
7. प्रतिबा, एल., भारत में महिला सशक्तिकरण के मुद्दे और चुनौतियों पर एक अध्ययन अनुसंधान विश्लेषण के लिए ग्लोबल जर्नल, खंड-VI, अंक-IX

पुष्पा सिन्हा

भारत में मानव अधिकार

लोकतंत्र वस्तुतः लोकमंगल की कामना एवं प्रयोग है। लोकतंत्र में मतदाता का महत्व एवं आकांक्षा होती है।

मुगलों एवं अंग्रेजों से आज़ादी के बाद, भारत में आधुनिक लोकतंत्र की नींव पडी। असली लोकतंत्र वही है जिसमें देश का प्रत्येक नागरिक बिना किसी लोक-लुभावन वादे, शक्तिबल, धन-बल के प्रयोग से अपनी आकांक्षानुसार अपना नेता चुने, जो उसकी आकांक्षाओं को पूर्ण करने की हैसियत एवं तमन्ना रखे।

यदि भारतीय लोकतंत्र को हम मानव अधिकार के परिप्रेक्ष्य से देखें, तो पाते हैं कि हमारा लोकतंत्र एक छद्‌म लोकतंत्र साबित हुआ है। मानव अधिकार की दो मुख्य बातें जगतसिद्ध हैं, जिसमें पहला है मानव का गरिमामयी जीवन और दूसरा है मानव के जीवन में स्वतंत्रता। इसमें मानव अपना जीवन स्वेच्छा से मर्यादापूर्वक जीते हुए अपने जीवन लक्ष्य को हासिल करे। साथ ही हर धर्म एवं शास्त्रों में कहा गया है कि प्रत्येक मानव जन्म से समान एवं स्वतंत्र है। सारे मानव अधिकार प्रकृति प्रदत्त अधिकार हैं, जिसमें मानव पराधीन एवं बेबस न होकर, अपने प्रारब्ध अनुसार जीवन को भोग कर शांत एवं संतुष्ट महसूस करते हुए अंत समय में उसे जीवन से कोई मलाल न रह जाए।

मानव अधिकार का मूल मंत्र है, 'सर्वे भवंतु सुखिनः'। तभी तो पृथ्वी पर प्रत्येक मानव को सुखी और संतुष्ट रखने के लिए 10 दिसंबर, 1948 को संयुक्त राष्ट्र संघ ने 'युनिवर्सल डिक्लेरेशन आफ ह्यूमन राइट्स' या फिर कहें 'मानवाधिकारों का सार्वभौमिक घोषणा पत्र की घोषणा की गई, ताकि दुनिया के मानव को अपने मानव होने का अर्थ समझ में आ सके। हाँ, यहाँ पर यह कहना भी जरूरी है कि अधिकार के साथ साथ कर्त्तव्य भी जरूरी है। यानी कि कर्त्तव्य पथ पर ही अधिकारों का गमन होता है। बिना कर्त्तव्य के अधिकार बेमानी है।

लोकतंत्र एक चुनावी प्रक्रिया से गुजरता है, जिसमें देश के नागरिकों की महत्वपूर्ण भागीदारी होती है। लेकिन अब सवाल यह उठता है कि क्या भारत में लोकतंत्र सही रास्तों पर चल रहा है हमारी आज़ादी के 75 वर्षो में देश में लोकतंत्र तो है, पर वह लोकतंत्र के मापदंडों पर खरा नहीं उतर पा रहा है।

मानव अधिकारों में मुख्य एवं प्रथम अधिकार है, 'जीवन का अधिकार।' इसके अंतर्गत

पोषण, स्वास्थ्य, शिक्षा, रोजगार एवं निर्भयता है, जो मानव को शांत, संतुष्ट एवं गरिमामय बनाता है। लेकिन हमारे देश भारत में ये सारे अधिकार सभी नागरिकों को नहीं मिल पा रहे हैं। इसके कई कारण हैं जिसमें मुख्य कारण है राजनीति में व्याप्त भ्रष्टाचार।

चुनाव के समय मतदाता सही जनप्रतिनिधि नहीं चुन पाते हैं, क्योंकि नागरिकों में शिक्षा की कमी, गरीबी तथा चुनाव के दिनों में नेताओं द्वारा लोकलुभावन वादों के साथ धन एवं शराब वितरण में फँस कर फिसल जाते हैं और गलत एवं भ्रष्टाचारी जनप्रतिनिधि चुन लिए जाते हैं।

भारत में लोकतंत्र की कमजोर स्थिति को देखते हुए 25 जनवरी, 1950 में चुनाव आयोग की स्थापना की गई, जो चुनावी प्रक्रिया का सही ढंग से संचालन करे और चुनावी खामियों को दूर करे। तभी तो प्रत्येक वर्ष 25 जनवरी को राष्ट्रीय मतदाता दिवस मनाया जाता है। इस दिन नागरिकों को चुनाव के प्रति भिन्न भिन्न तरीकों से शिक्षित किया जाता है, ताकि देश में सही मायने में लोकतंत्र स्थापित हो सके।

कुछ वर्षों पहले की बात करें तो पता चलता है कि चुनावी प्रक्रिया के दौरान कुछ नागरिकों के वोट बाहुबली प्रत्याशी द्वारा डाल दिए जाते थे। फिर सुनने में आता रहा कि चुनाव के बाद बैलेट बाक्स लूट लिए जाते थे।

देश की आज़ादी के कुछ ही वर्षों के बाद से राजनीति में भ्रष्टाचार ने जड़ें जमाना शुरू कर दिया था।धीरे-धीरे इसका साम्राज्य विकसित होता रहा। लेकिन सवाल उठता है कि आखिर भ्रष्टाचार कैसे खत्म हो। तो इसका उत्तर यह है कि प्रत्येक मतदाता को जागरूक बनना होगा। यदि पाँच उम्मीदवार मैदान में हैं, तो उनमें से सबसे बेहतर का चुनाव, हर मतदाता को करना होगा। साथ ही चुनाव आयोग भी चुनावी प्रक्रिया के दौरान सख्त रुख अपना रहा है।

आधुनिक समय में लोकतंत्र का तकाजा यह कहता है कि वह नागरिकों द्वारा सही ढंग से जनप्रतिनिधि चुनें जाएँ, जो नागरिकों की सुख-सुविधा की व्यवस्था करे, ताकि वे गरिमामयी संतुष्ट जीवन जी सकें।

अब समय आ गया है कि चुनावी प्रक्रिया सही ढंग से संचालित हो जिसमें मतदाता सोच समझ कर अपने जनप्रतिनिधि चुनें जिनकी मनसा जनता की सेवा करना हो, न कि कुर्सी से चिपक कर भ्रष्टाचार करना।

अब हमें आशा ही नहीं, बल्कि पूर्ण विश्वास है कि 2047 में जब हमारा देश भारत अपनी आज़ादी के 100 वर्ष मना रहा होगा, तब हमारा लोकतंत्र प्रगतिशील होगा, जिसमें नागरिकों के मानव अधिकारों की पूर्णरुपेण सुरक्षा हो सकेगी।

❑

जगदीश चंद चौहान

संविधान के अनुच्छेद 356 की उपयोगिता : एक विहंगावलोकन

हमारा संविधान विश्व का सबसे लंबा लिखित संविधान है। यह एक व्यापक और विस्तृत दस्तावेज है। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् संविधान निर्माताओं के समक्ष जहाँ एक तरफ राष्ट्रीय एकता और अखंडता को बनाए रखना तो दूसरी तरफ देश में लोकतंत्र की स्थापना करना वास्तव में दोनों ही चुनौती भरे कार्य थे। उस समय देश को विभाजन की विभीषिका से गुजरना पड़ा, पूरा देश सम्प्रदायिक दंगों से झुलस रहा था, यह एक प्रकार की अस्थिरता का दौर था और ऊपर से 560 से भी अधिक देसी रियासतों का भारत में विलय करना पड़ा। ऐसी परिस्थितियों में हमारे संविधान निर्माताओं ने अनुच्छेद 356 जैसे प्रावधान को हमारे संविधान में शामिल किया ताकि कोई राज्य भारत से अलग होने की सोच भी न सके। यह प्रावधान ब्रिटिश सरकार द्वारा पारित भारत सरकार अधिनियम, 1935 से लिया गया है। बिडम्बना देखिए कि उस समय के हमारे स्वतंत्रता संग्राम के सभी प्रमुख नेताओं ने जिसका पुरजोर विरोध किया था उसी प्रावधान को आखिरकार देश हित में संविधान में फिर से शामिल कर लिया गया।

अनुच्छेद 356 में कहा गया है कि यदि राष्ट्रपति, राज्य के राज्यपाल से रिपोर्ट प्राप्त होने पर या अन्यथा, संतुष्ट हैं कि ऐसी स्थिति उत्पन्न हो गई है जिसमें राज्य की सरकार इस संविधान के प्रावधानों के अनुसार नहीं चल सकती है, तो राष्ट्रपति उद्घोषणा द्वारा --

(ए) राज्य सरकार के सभी या किसी भी कार्य को और राज्य के विधानमंडल के अलावा राज्यपाल या राज्य के किसी भी निकाय या प्राधिकरण में निहित या प्रयोग की जाने वाली सभी या किसी भी शक्ति को अपने ऊपर ले लेगा;

(बी) घोषित करें कि राज्य के विधानमंडल की शक्तियाँ संसद के अधिकार के तहत या उसके द्वारा प्रयोग योग्य होंगी;

(सी) ऐसे आकस्मिक या परिणामी प्रावधान करें जो राष्ट्रपति को उद्घोषणा के उद्देश्यों को प्रभावी करने के लिए आवश्यक या वांछनीय लगें, जिसमें किसी भी निकाय या प्राधिकरण से संबंधित इस संविधान के किसी भी प्रावधान के संचालन के पूर्ण या आंशिक रूप से निलंबित करने के प्रावधान शामिल हैं।

सरल भाषा में कहें तो इस अनुच्छेद के तहत अगर राष्ट्रपति को लगता है कि किसी राज्य में संविधान के मुताबिक सरकार नहीं चलाई जा रही है और संवैधानिक तंत्र पूरी तरह

से विफल हो गया है तो वह वहाँ राष्ट्रपति शासन लगा सकते हैं। राष्ट्रपति, राज्यपाल की रिपोर्ट प्राप्त होने पर या उसके बिना भी राष्ट्रपति शासन लगा सकते हैं। इसके अंतर्गत, सरकार को निलंबित कर दिया जाता है और केंद्र सरकार सीधे राज्य का प्रशासन संभाल लेती है। इस दौरान राज्यपाल, अपने कुछ सलाहकारों की मदद से, राज्य की प्रशासनिक व्यवस्था चलाते हैं।

विधान सभा को या तो निलंबित कर दिया जाता है या भंग कर दिया जाता है ताकि राज्य में फिर से नए सिरे से चुनाव कराए जा सकें।

इसके लिए पूर्व में संसद के दोनों सदनों से मंजूरी लेनी पड़ती है, अगर ऐसा करना संभव नहीं हो तो अध्यादेश जारी कर भी राष्ट्रपति शासन लगाया जा सकता है और दो माह के भीतर संसद से मंजूरी ली जा सकती है।

राष्ट्रपति शासन केवल छह महीने के लिए लगाया जा सकता है और अगर इसको बढ़ाने की आवश्यकता हो तो संसद से उसकी फिर मंजूरी लेनी पड़ती है। यदि एक वर्ष से अधिक अवधि के लिए राष्ट्रपति शासन बढ़ाना पड़े तो चुनाव आयोग को ये लिखकर सूचित करना होगा कि राज्य में किन्ही अपरिहार्य कारणों से विधान सभा चुनाव नहीं कराए जा सकते, इसलिए उस राज्य में राष्ट्रपति शासन की अवधि को और छह महीने के लिए बढ़ा दिया जाए। इस प्रकार राष्ट्रपति शासन की अवधि अधिकतम तीन साल तक बढ़ाई जा सकती है।

स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् देश में ऐसी परिस्थितियों का निर्माण हुआ कि हमारे संविधान निर्माताओं को देश में शांति और स्थिरता बनाए रखने के उद्देश्य से ऐसा प्रावधान करना पड़ा जिसके कारण हमारा संविधान जो मूल स्वरूप में संघीय प्रणाली अपनाता है देखने में एकात्मक प्रणाली (केन्द्रीयकरण) की तरफ ज्यादा झुकता हुआ नजर आने लगा। इस प्रावधान के तहत हम कह सकते हैं कि जब भी देश के किसी राज्य में अलगाववाद या आतंकवाद जैसी समस्याओं का सामना करना पड़ा तो केंद्र सरकार को राज्य के हालात काबू में करने के लिए इस प्रावधान का सहारा लेना पड़ा। जैसेकि हमने पंजाब और जम्मू कश्मीर में देखा कि अलगाववादी और आतंकवादी तत्व कैसे देश को तोड़ने की साजिश करते रहे जिसका सामना राज्य सरकारें नहीं कर सकती थीं। ऐसे राज्य को तुरंत राष्ट्रपति शासन के अधीन लाकर केंद्र सरकार ने सख्ती से ऐसे तत्वों के नापाक इरादों को विफल कर दिया। इसी कारण, पंजाब और जम्मू कश्मीर में लंबे समय तक राष्ट्रपति शासन रहा। ऐसे राज्यों में जहाँ आतंकवाद फैला हुआ हो, वहाँ शीघ्र विधान सभा चुनाव कराना भी संभव नहीं हो सकता। ऐसी परिस्थितियों में देश की एकता और अखंडता को बनाए रखने के लिए यह प्रावधान बहुत उपयोगी सिद्ध हुआ है।

एक अन्य परिस्थिति में जब राज्यों में चुनावों के उपरांत किसी पार्टी या किसी गठबंधन को बहुमत नहीं मिलता तो ऐसी स्थिति में स्थिर सरकार का गठन करना संभव नहीं हो पाता तो ऐसे समय में भी विधान सभा को निलंबित रखा जाता है और राज्य का शासन राज्यपाल द्वारा संभाल लिया जाता है और जब स्थिर सरकार बनाने के लिए कोई गठबंधन आगे आता

है तो फिर राष्ट्रपति शासन रद्द कर दिया जाता है। ऐसे शून्य को भरने के लिए भी राष्ट्रपति शासन एकमात्र विकल्प रह जाता है। जैसे एक बार उत्तरप्रदेश में, जम्मू कश्मीर में ऐसी स्थिति आई कि चुनाव के बाद कोई भी सरकार नहीं बन पा रही थी तो वहाँ राष्ट्रपति शासन लगाना पड़ा और बाद में बीएसपी के साथ बीजेपी ने गठजोड़ कर सरकार बनाई और जम्मू कश्मीर में पीडीपी के साथ बीजेपी ने सरकार बनाई। अभी महाराष्ट्र में भी इसी विधान सभा में बीजेपी और शिवसेना के चुनाव पूर्व गठबंधन को सफलता मिली मगर जब सरकार गठन की बारी आई तो दोनों दलों में मुख्यमंत्री पद को लेकर सहमति नहीं बन पाई जिसके कारण सरकार गठित नहीं हो पाई। ऐसे समय में वहाँ राष्ट्रपति शासन लगाना पड़ा और जब बाद में शिवसेना, कांग्रेस और एनसीपी ने नया गठबंधन बना लिया और एक स्थायी सरकार बनाने का दावा पेश किया तो राष्ट्रपति शासन समाप्त कर दिया गया। ऐसी परिस्थितियों में अनुच्छेद 356 की विशेष उपयोगिता सिद्ध होती है।

दूसरी तरफ, इस प्रावधान का राजनैतिक द्वेष के कारण काफी बड़ी संख्या में दुरुपयोग होता रहा। विपक्षी दलों की चुनी हुई सरकारों को कोई न कोई बहाना बना कर उन्हें बर्खास्त कर राष्ट्रपति शासन लगा दिया गया। यहाँ यह भी बताना उचित होगा कि पहली बार इस अनुच्छेद का इस्तेमाल 1951 में पंजाब में आंतरिक अशांति के कारण किया गया था। दूसरी बार, 1959 में केरल राज्य की जनतांत्रिक तरीके से चुनी गई कम्युनिस्ट पार्टी की सरकार को बर्खास्त कर राष्ट्रपति शासन लगा दिया गया। उसके बाद तो जब जब विपक्षी दलों की सरकारें आईं उन्हें कोई न कोई बहाना बनाकर अस्थिर किया गया या गिरा दिया गया और राष्ट्रपति शासन लगा दिया गया। 1966 से 1977 के बीच इंदिरा गांधी के शासनकाल में इस प्रावधान का अधिकतम इस्तेमाल किया गया। आपातकाल खत्म होने के बाद जब जनता पार्टी की सरकार आई तो उन्होंने भी नौ राज्यों की कांग्रेस सरकारों को यह कह कर बर्खास्त कर दिया कि उन्होंने जनादेश खो दिया है और वहाँ फिर से चुनाव कराए गए। 1980 में जब इंदिरा गांधी दोबारा सत्ता में लौटी तो उन्होंने भी उन नौ राज्यों की विपक्षी दलों की सरकारों को बर्खास्त कर फिर से चुनाव करवाए। 1992 में भी जब बाबरी मस्जिद को तोड़ा गया तो केंद्र सरकार ने सभी चार राज्यों की बीजेपी सरकारों को बर्खास्त कर राष्ट्रपति शासन लगा दिया। ये तो बड़े बड़े मामले हैं जिनका उल्लेख यहाँ पर किया गया है जबकि अन्य कई ऐसे उदाहरण हैं जहाँ बिना किसी उपयुक्त कारण के भी सरकार बर्खास्त कर राष्ट्रपति शासन लगा दिया गया। समय-समय पर इस अनुच्छेद के प्रावधानों का दुरुपयोग होता रहा और इसकी देशव्यापी आलोचना भी होती रही। इस प्रावधान के दुरुपयोग ने हमारे संघीय ढाँचे को बहुत नुकसान पहुँचाया।

1975 में आपातकाल के दौरान 38वें संविधान संशोधन द्वारा इस संबंध में न्यायिक समीक्षा के अधिकार को भी समाप्त कर दिया गया ताकि कोई भी राष्ट्रपति शासन लगाने के अधिकार को किसी न्यायालय में चुनौती न दे सके। हालाँकि बाद में जनता पार्टी की सरकार ने 44वें

संविधान संशोधन द्वारा राष्ट्रपति के इस निर्णय की न्यायिक समीक्षा करने का अधिकार को फिर से बहाल कर दिया। यदि किसी राज्य में राष्ट्रपति शासन लगाया जाता है तो न्यायालय में उसे चुनौती दी जा सकती है और न्यायालय उसकी समीक्षा कर सकता है।

1988 में कर्नाटक राज्य में एस.आर. बोम्मई के नेतृत्व में जनता दल की सरकार बनाने का दावा पेश किया गया जो राज्यपाल द्वारा स्वीकार कर लिया गया। मगर दो दिन पश्चात् ही एक अन्य नेता ने 19 विधायकों के हस्ताक्षर वाली सूची प्रस्तुत की जो बोम्मई सरकार को समर्थन नहीं करते थे। राज्यपाल ने एस आर बोम्मई को विधान सभा में बहुमत साबित करने का कोई मौका ही नहीं दिया और राज्य में राष्ट्रपति शासन लगा दिया गया। कुछ दिनों बाद इन विधायकों ने राज्यपाल को बताया कि पिछले पत्र पर उनके नकली हस्ताक्षर थे और वे सभी बोम्मई सरकार का समर्थन करते हैं मगर फिर भी राज्यपाल ने उनकी बात अनसुनी कर दी और उस पर कोई ध्यान नहीं दिया। बाद में इस मामले को न्यायालय में चुनौती दी गई। 1994 में सुप्रीम कोर्ट की संवैधानिक बेंच ने इस मामले पर अपना निर्णय सुनाया और अनुच्छेद 356 के संबंध में दिशा निर्देश जारी किए।

अपने निर्णय में उच्चतम न्यायालय ने राज्य सरकारों को बर्खास्त करने संबंधी अनुच्छेद की व्याख्या की और कहा कि अनुच्छेद 356 के तहत यदि केंद्र सरकार राज्य की चुनी हुई सरकार को बर्खास्त करती है तो उच्चतम न्यायालय सरकार के कारणों की समीक्षा कर सकता है।

राष्ट्रपति की संतुष्टि की न्यायिक समीक्षा न्यायालय को राष्ट्रपति की संतुष्टि के लिए मूल आधारों की जांच करने की अनुमति देता है।

न्यायालय केवल सामग्री की प्रासंगिकता को देखेगा, न कि उसकी सटीकता या पर्याप्तता को।

न्यायालय राष्ट्रपति के फैसले में द्वेष या विकृति की भी तलाश कर सकती है और यह निर्धारित कर सकती है कि क्या यह फैसला असंबंधित कारकों से प्रभावित था? इसके अलावा, यह दिखाना संघ की जिम्मेदारी है कि राष्ट्रपति को आवश्यक सामग्री तक पहुँच है।

फ्लोर टेस्ट, जिसमें बहुमत का परीक्षण करने के लिए सदन के पटल पर मतदान की आवश्यकता होती है, का उपयोग राज्यपाल के व्यक्तिपरक मूल्यांकन के बजाए यह निर्धारित करने के लिए किया जाना चाहिए कि सरकार को विधान सभा में विश्वास मत प्राप्त है या नहीं।

इस निर्णय में राज्यपालों को यह हिदायत दी गई कि किसी भी राज्य सरकार को बहुमत है या नहीं है इसका निर्णय राजभवन में न होकर विधान सभा में होना चाहिए।

एस आर बोम्मई के मामले में उच्चतम न्यायालय के निर्णय के बाद से इस अनुच्छेद का उपयोग आखिरी विकल्प के रूप में ही हो रहा है अर्थात् जहाँ बहुत ही आवश्यक है जैसे किसी राज्य में किसी दल या गठबंधन को बहुमत हासिल न हो और एक स्थिर सरकार बनाने

में बिलम्ब हो रहा हो तभी वहाँ कुछ समय के लिए राष्ट्रपति शासन लगाया जाता है या फिर अशांत क्षेत्र राज्य जम्मू कश्मीर में जहाँ शीघ्र चुनाव कराना संभव न हो, वहीं राष्ट्रपति शासन लगाया गया।

सविधान सभा में इस प्रावधान की आलोचना का जवाब देते हुए डॉ बी आर अम्बेडकर ने भी अपनी इच्छा व्यक्त करते हुए कहा था कि अनुच्छेद 356 द्वारा प्रदान किया गया चरम अधिकार एक 'मृत पत्र' रहेगा और केवल अंतिम उपाय के रूप में ही उपयोग किया जाएगा।

अभी हाल में ही मणिपुर राज्य में जातीय हिंसा की घटनाएँ बढ़ने पर विपक्षी दलों ने बार-बार माँग उठाई कि मणिपुर में राष्ट्रपति शासन लगाया जाए मगर केंद्र सरकार ने ऐसा नहीं किया। इसी प्रकार, पश्चिम बंगाल में हाल ही में डॉक्टर बिटिया के साथ हुए जघन्य अपराध को लेकर पूरे प्रदेश तथा पूरे देश में डॉक्टर ही नहीं जनसामान्य लोगों में भी भारी रोष था। लोगों का मानना था कि पश्चिम बंगाल सरकार का पूरा प्रशासनिक तंत्र अपराधियों के साथ खड़ा है और एक एक सबूत मिटाने में लगा है। उच्च न्यायालय और उच्चतम न्यायालय की टिप्पणियों से लोगों का शक और पुख्ता हुआ कि बंगाल में प्रशासनिक व्यवस्था पूरी तरह से ध्वस्त हो चुकी है। चारों तरफ से वहाँ की सरकार को बर्खास्त कर राष्ट्रपति शासन लगाने की माँग होने लगी परन्तु फिर भी केंद्र ने वहाँ राष्ट्रपति शासन नहीं लगाया। तीसरा मामला दिल्ली सरकार का था जहाँ मुख्यमंत्री जेल जाने के बाद भी मुख्यमंत्री पद छोड़ने को तैयार नहीं था। छह महीने के करीब मुख्यमंत्री के जेल में रहने के कारण राज्य की पूरी प्रशासनिक व्यवस्था चरमरा गई, कोई कैबिनेट मीटिंग नहीं हो पाई और न ही जनता के हित में कोई महत्वपूर्ण फैसले लिए जा सके। केंद्र सरकार से बार-बार हस्तक्षेप की माँग की गई लेकिन सरकार ने इस पर भी कोई कार्यवाही नहीं की। वो तो बाद में उन्हें जमानत देते हुए उच्चतम न्यायालय ने ही उन्हें मुख्यमंत्री कार्यालय न जाने और किसी फाइल पर हस्ताक्षर न करने की शर्तें लगा दी जिसके कारण जमानत पर बाहर आने के बाद उन्हें दूसरे को मुख्यमंत्री का कार्यभार सौंपना पड़ा।

इस प्रकार हम कह सकते हैं कि जहाँ इस अनुच्छेद की उपयोगिता तो है ही, वहीं अब इसके दुरुपयोग पर अंकुश भी लगा है ताकि कोई भी केंद्र सरकार किसी राज्य की लोकतांत्रिक ढंग से चुनी हुई सरकार को मनमाने ढंग से या द्वेषपूर्ण या बिना किसी न्यायोचित कारण के बर्खास्त न कर सके। किसी देश में स्वस्थ लोकतंत्र की स्थापना की एक सतत प्रक्रिया होती है और ऐसा कहा जाता है कि लोकतंत्र अपने आपको खुद दुरुस्त करता हुआ आगे बढ़ता जाता है अर्थात् अपनी कमियों को स्वंय दूर करता हुआ आगे बढ़ता है। हमें विश्वास है कि हमारे देश में भी लोकतंत्र दिन प्रतिदिन परिपक्व होता जाएगा और हमारी जनाकांक्षाओं को पूरा करते हुए आगे बढ़ता रहेगा। जयहिंद।

❑

नेहा राठी

भारत के उच्चतम न्यायालय का इतिहास

भारत का उच्चतम न्यायालय, भारत के संविधान के तहत गठित भारत का एक ऐसा उच्चतम न्यायिक निकाय है जहाँ किसी भी मामले के संबंध में अंतिम अपील तो की जा सकती है उसका मूल क्षेत्राधिकार भी है। भारत का उच्चतम न्यायालय 26 जनवरी, 1950 को भारत के संविधान के लागू होने के साथ ही अस्तित्व में आया तथा इसका उपबंध संविधान के भाग 5 अध्याय 4 के तहत आने वाले अनुच्छेद 124 के तहत किया गया है। संविधान का अनुच्छेद 124 उच्चतम न्यायालय की स्थापना और गठन से संबंधित है जिसके अनुसार ''भारत का एक उच्चतम न्यायालय होगा जिसमें भारत का एक मुख्य न्यायाधीश और, जब तक संसद विधि द्वारा अधिक संख्या निर्धारित न कर दे, सात से अधिक अन्य न्यायाधीश नहीं होंगे।"

ध्यातव्य है कि भारत में न्यायपालिका की मौजूदा प्रणाली तत्कालीन ब्रिटिश शासन की विरासत है। भारत में पहली बार उच्चतम न्यायालय (Supreme Court) की स्थापना 1774 में '1773 के रेगुलेटिंग एक्ट' के तहत हुई थी। तब इसे कलकत्ता उच्चतम न्यायालय के नाम से जाना जाता था और इसमें एक मुख्य न्यायाधीश के अतिरिक्त 3 अन्य न्यायाधीश होते थे। जब देश स्वतंत्र हुआ तो तात्कालिक आवश्यकताओं को देखते हुए शासन के रूप में औपनिवेशिक व्यवस्थाओं को जारी रखा गया। न्यायिक क्षेत्र में भी यही हुआ। हमारी न्यायिक व्यवस्था लगभग पूरी तरह ब्रिटिश ढाँचे पर विकसित हुई। किंतु इसका अर्थ कदापि यह नहीं है कि हमारे देश का अपना कोई न्यायिक इतिहास था ही नहीं। गौरतलब है कि विश्व में भारत की न्यायपालिका सर्वाधिक प्राचीन है। हमारे देश में एक सुस्थापित न्यायिक तंत्र था, जो तत्कालीन सामाजिक आवश्यकताओं और परिस्थितियों के अनुकूल था। प्राचीन भारत में मनु, कौटिल्य, कात्यायन, बृहस्पति, नारद, पाराशर और याज्ञवाल्क्य आदि जैसे विधि के कई दिग्गज थे। किंतु सम्राट हर्ष के साम्राज्य के विघटन के पश्चात् भारत के इतिहास पर विस्मृति का आवरण पड़ जाने के कारण तत्कालीन न्यायिक व्यवस्था के संबंध में भी कुछ अधिक स्पष्ट नहीं है। विस्मृति का यह आवरण मध्यकाल में मुस्लिम आक्रमण तक नहीं उठता। किंतु भारत में उक्त आक्रमण व मुस्लिम शासन की स्थापना के साथ ही भारत के न्यायिक इतिहास में एक नया अध्याय जुड़ गया जिसका प्रभाव भारतीय न्याय प्रणाली पर इतना गहरा पड़ा कि

उसके निशान आज भी दिख जाते हैं। ब्रिटिश काल से पहले मुगल काल में दो तरह की अदालतें पाईं जाती थीं जिन्हें सदर दीवानी अदालत और सदर निजाम-ए-अदालत कहा जाता था। गौरतलब है कि सदर दीवानी अदालत में सिविल मामलों और निजाम-ए-अदालत में आपराधिक मामलों की सुनवाई होती थी। 1857 की असफल क्रांति के बाद देश में अंग्रेजी न्याय प्रशासन प्रणाली के आधार पर न्यायलयों का गठन किया गया। उस समय प्रिवी काउंसिल भारत का उच्चतम न्यायालय था जो इंग्लैंड में स्थित था। 1947 में देश स्वतंत्र हुआ तत्पश्चात, 1950 में नया संविधान लागू हुआ जिसके तहत 1950 में उच्चतम न्यायालय भारत का उच्चतम न्यायिक निकाय बना। इससे पहले 1935 के अधिनियम में फेडरल कोर्ट ऑफ इंडिया की परिकल्पना की गई थी। संविधान निर्माताओं ने इसी फेडरल कोर्ट को उच्चतम न्यायालय से प्रतिस्थापित कर दिया।

पृष्ठभूमि

भारत के उच्चतम न्यायलय का इतिहास वर्ष 1773 के रेगुलेटिंग एक्ट से जुड़ता है। उक्त अधिनियम में अन्य बातों के साथ-साथ भारत में उच्चतम न्यायाल की स्थापना का उपबंध भी किया गया। रेगुलेटिंग एक्ट, 1773 ने 1753 के चार्टर के प्रावधानों को प्रतिस्थापित कर उच्चतम न्यायालय स्थापित करने के लिए क्राउन को अधिकार दिया गया। अधिनियम की धारा 13 के तहत, जॉर्ज तृतीय ने 26 मार्च, 1774 को एक चार्टर जारी किया जिसके द्वारा उच्चतम न्यायालय की कलकत्ता में स्थापना की गई। यह नव स्थापित उच्चतम न्यायालय बिल्कुल अपने पूर्ववर्ती, मेयर कोर्ट की तरह ही एक क्राउन कोर्ट था। इस प्रकार 1774 के चार्टर ने भारत में उच्चतम न्यायलय की नींव रखी और साथ ही इसके क्षेत्राधिकार व शक्तियों को विस्तार से विहित किया। इसके साथ ही प्रथम उच्चतम न्यायालय ने कलकत्ता में एक अभिलेख न्यायालय के रूप में अपना कार्य शुरू किया और प्रथम मुख्य न्यायाधीश सर एलिजा इम्पे को नियुक्त किया गया। न्यायालय की स्थापना बंगाल, उड़ीसा और पटना में विवादों को सुलझाने के लिए की गई थी। उच्चतम न्यायालय को कोर्ट ऑफ कलेक्टर, क्वार्टर सेशन, और कोर्ट ऑफ रिक्वेस्ट के पर्यवेक्षण का अधिकार दिया गया था।

उक्त न्यायालय को बंगाल, बिहार और उड़ीसा में कम्पनी के सभी ब्रिटिश सेवकों तथा कम्पनी की सेवा में प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से कार्यरत सभी व्यक्तियों के मामलों में पूर्ण नागरिक और आपराधिक क्षेत्राधिकार प्रदान किया गया। उच्चतम न्यायालय को दीवानी, फौजदारी, चर्च संबंधी और एडमिरलिटी जैसे चार अलग-अलग क्षेत्राधिकार दिए गए थे। अतः कलकत्ता स्थित उच्चतम न्यायालय को बहत क्षेत्राधिकार तथा कई महत्वपूर्ण शक्तियाँ प्रदान की गई थीं। उच्चतम न्यायलय के संबंध में एक रोचक बात यह भी रही कि इसके राजा का न्यायालय बनाया गया था न कि कंपनी का। गौरतलब है कि बाद में वर्ष 1800 और 1834 में, बॉम्बे और मद्रास (वर्तमान मुम्बई और चेन्नई) में अन्य दो उच्चतम न्यायालयों की स्थापना की गई। हालाँकि,

भारतीय उच्च न्यायालय अधिनियम, 1861 के अधिनियमित होने के तुरंत बाद, कलकत्ता, बॉम्बे और मद्रास में उच्चतम न्यायालयों को समाप्त कर दिया गया और कलकत्ता, बॉम्बे और मद्रास की अदालतों ने उच्च न्यायालय के रूप में अपना कार्य फिर से शुरू किया। तत्पश्चात्, 1935 में, ब्रिटिश संसद ने संयुक्त चयन समिति द्वारा एक प्रस्ताव पारित करने के बाद, लॉर्ड लिनलिथगो की अध्यक्षता में भारत सरकार अधिनियम, 1935 को अधिनियमित किया। भारत सरकार अधिनियम, 1935 ने भारत में फेडरल कोर्ट (संघीय न्यायालय) की स्थापना की यही फेडरल कोर्ट स्वतंत्रता पश्चात् उच्चतम न्यायालय कहलाया। स्वतंत्रता के बाद 26 जनवरी, 1950 को, भारत का संविधान अपनाया गया और भारत के संघीय न्यायालय ने 28 जनवरी, 1950 को भारत के उच्चतम न्यायालय के रूप में कार्य करना शुरू किया।

स्वतंत्रता पश्चात स्थिति

उच्चतम न्यायालय को कोर्ट ऑफ रिकार्ड माना जाता है और उसके सभी निर्णय रिकार्ड होते हैं और बाध्यकारी होते हैं। उच्चतम न्यायालय भारत संघ द्वारा 26 जनवरी, 1950 को संविधान को अपनाए जाने के साथ ही अस्तित्व में आया और इसके ठीक दो दिन बाद 28 जनवरी, 1950 को इसने काम करना शुरू किया। इससे पहले देश की सबसे बड़ी न्यायिक संस्था फेडरल कोर्ट ऑफ इंडिया के नाम से जानी जाती थी। ब्रिटिश काल में फेडरल कोर्ट और मौजूदा उच्चतम न्यायलय में यह अंतर है कि फेडरल कोर्ट की भूमिका सीमित थी किंतु उच्चतम न्यायलय के पास व्यापक अधिकार हैं, ये अन्य अधिकारों के साथ-साथ संविधान की व्याख्या भी कर सकता है। तत्कालीन फेडरल कोर्ट का कामकाज पुराने संसद भवन के चेम्बर ऑफ प्रिंसेस यानी ऊपरी सदन में किया जाता था। गौरतलब है कि उच्चतम न्यायालय का उद्घाटन भी पुराने संसद भवन के नरेंद्र मंडल में हुआ और अगले कई वर्षो तक (1937 से 1950 तक) यह यहीं से काम करता रहा। 28 जनवरी, 1950 को उद्घाटन के बाद, उच्चतम न्यायालय ने पुराने संसद भवन के एक हिस्से में अपनी बैठकें शुरू कीं। 1958 में यह न्यायालय एक नए भवन में चला गया। भारत के प्रथम राष्ट्रपति डॉ. राजेंद्र प्रसाद ने 4 अगस्त, 1958 को भारत के उच्चतम न्यायालय के वर्तमान भवन का उद्घाटन किया। 1958 में उच्चतम न्यायालय को संसद भवन से हटा कर तिलक मार्ग स्थित मौजूदा भवन में स्थानांतरित किया गया। भवन का आकार न्याय के तराजू की छवि को दर्शाता है। न्यायाधीश हीरालाल जे कानिया को उच्चतम न्यायालय का पहला मुख्य न्यायधीश नियुक्त किया गया। स्थापना के समय इसमें मुख्य न्यायाधीशों सहित अन्य न्यायाधीशों की संख्या कुल 8 तय की गई। किंतु समय के साथ मुकदमों के बढ़ते बोझ के साथ-साथ न्यायाधीशों की संख्या भी बढ़ती रही। 1950 के मूल संविधान में उच्चतम न्यायालय की परिकल्पना एक मुख्य न्यायमूर्ति और 7 न्यायाधीशगण के साथ की गई थी -- और इस संख्या को बढ़ाने का कार्य संसद पर छोड़ दिया गया था। प्रारंभिक वर्षो में, उच्चतम न्यायालय के सभी न्यायाधीश उनके सामने प्रस्तुत मामलों की सुनवाई

के लिए एक साथ (एक बेंच में) बैठते थे। कार्यभार में वृद्धि को देखते हुए, संसद ने न्यायाधीशगण की संख्या 1950 में 8 से बढ़ाकर 1956 में 11, 1960 में 14, 1978 में 18, 1986 में 26, 2009 में 31 और 2019 में 34 (वर्तमान संख्या) कर दी। आज, न्यायाधीश दो और तीन की संख्या में न्यायपीठ में बैठते हैं और उच्चतम न्यायालय की न्यायपीठ के बीच परस्पर विरोधी निर्णयों या संविधान की व्याख्या से संबंधित किसी भी महत्वपूर्ण प्रश्न पर निर्णय लेने के लिए 5 या उससे अधिक न्यायधीश (संविधान पीठ), बड़ी पीठों में एक साथ आते हैं।

निष्कर्ष

भारत का उच्चतम न्यायलय केवल न्यायलय ही नहीं अपितु संविधान का संरक्षक भी है जो न केवल विधिसम्मत शासन की अवधारणा को कायम रखता है अपितु इसका संवर्धन भी करता है। यह नागरिकों के अधिकारों और स्वतंत्रता को सुनिश्चित व संरक्षिक रखने का एक साधन है। साल 1773 में ब्रिटिश संसद द्वारा पारित किए गए विनियमन अधिनियम के तहत कलकत्ता में अस्तित्व में आया उच्चतम न्यायालय आज भारत का एक उच्चतम न्यायिक निकाय है।

❑

संदर्भ

1. भारत का संविधान
2. न्यायमूर्ति शांति स्वरूप धवन, भारतीय न्याय व्यवस्था एक ऐतिहासिक सर्वेक्षण, https://jtr-nic-in/TheIndianJudicialSystemAHistoricalSurvey1.pdf
3. https://www.lloydlawcollege.edu.in/blog/supreme-court-india.html
4. भारत का उच्चतम न्यायलय, https://www.sci.gov.in/hi/

डॉ. अंजलि दीक्षित

भारतीय लोकतंत्र में महिला सशक्तिकरण

नास्ति स्त्री समा छाया नास्ति स्त्री समा गतिः नास्ति स्त्री समा त्राणम्।

21वीं सदी की शुरुआत से महिलाओं की स्थिति में काफी सुधार आया है। इन सालों में महिलाओं का भारत की आर्थिक व्यवस्था में योगदान बढ़ा है। इसका परिणाम यह हुआ है कि आज भारत की महिलाएँ राजनीति, कारोबार, कला तथा नौकरियों में पहुँच कर नए आयाम गढ़ रही हैं। वर्तमान भूमंडलीकृत विश्व में भारत की नारी ने अपनी एक नितांत सम्मानजनक जगह कायम कर ली है. आँकड़े दर्शाते हैं कि प्रतिवर्ष कुल परीक्षार्थियों में 50 प्रतिशत महिलाएँ डॉक्टरी की परीक्षा उत्तीर्ण करती हैं। स्वतंत्रता के बाद देश की एक महिला प्रधानमंत्री वन चुकी हैं तथा लगभग 12 महिलाएँ भारत के विभिन्न राज्यों की मुख्यमंत्री बन चुकी हैं. भारत के अग्रणी सॉफ्टवेयर उद्योग में 21 प्रतिशत पेशेवर महिलाएँ हैं। फौज, राजनीति, खेल, पायलट और उद्यमी सभी क्षेत्रों में जहाँ वर्षो पहले तक महिलाओं के होने की कल्पना भी नहीं की जा सकती थी, वहाँ सिर्फ महिलाओं ने स्वयं को स्थापित ही नहीं किया है बल्कि वहाँ सफल भी हो रहीं हैं।

नारी अस्य समाजस्य कुशल वास्तुकारा अस्ति

महिलाओं को शिक्षा देने तथा सामाजिक कुरीतियों को दूर करने के लिए जो सुधार आन्दोलन शुरू हुआ उससे समाज में एक नयी जागरूकता पैदा हुई है। बाल-विवाह, भ्रूण-हत्या पर सरकार द्वारा रोक लगाने का काफी प्रयास हुआ है। शैक्षणिक गतिशीलता से पारिवारिक जीवन में परिवर्तन हुआ है। गाँधी जी ने कहा था कि एक लड़की की शिक्षा एक लड़के की शिक्षा की उपेक्षा अधिक महत्वपूर्ण है क्यों? लड़के को शिक्षित करने पर वह अकेला शिक्षित होता है किंतु एक लड़की की शिक्षा से पूरा परिवार शिक्षित हो जाता है। शिक्षा ही वह कुंजी है जो जीवन के वह सभी द्वार खोल देती है। शिक्षित महिलाओं को राष्ट्रीय व अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर सक्रिय होने में बहुत मदद मिली। महिलाएँ अपनी स्थिति व अपने अधिकारों के विषय में सचेत होने लगी हैं। आज देखने में आया है कि महिलाओं ने स्वयं के अनुभव के आधार पर, अपनी मेहनत और आत्मविश्वास के आधार पर अपने लिए नई मंजिलें, नए रास्तों का निर्माण किया है।

'शहर का तब्दील होना शाद रहना और उदास
रौनकें जितनी यहाँ हैं औरतों के दम से है।'

- मुनीर नियाजी

वर्तमान समय में भारतीय सरकार द्वारा महिलाओं के उत्थान के लिए अनेक कार्यक्रम एवं योजनाओं का संचालन किया जा रहा हैं जिससे स्त्रियों की स्थिति में काफी बदलाव आए हैं। इसका ही परिणाम है कि इस बार के चुनाव में बीजेपी को जो अविस्मरणीय जीत हासिल हुई है उसको दिलाने में महिलाओं की बहुत बड़ी भूमिका रही है। इसकी रूपरेखा का निर्माण कहीं न कहीं प्रधानमत्री मोदी के द्वारा जो देश व्यापी योजनाएँ चलाई गईं, उनका काफी योगदान है। केंद्र में एनडीए सरकार ने जो उज्ज्वला योजना, बेटी बचाओ-बेटी पढ़ाओ, सौभाग्य, जनधन, मुद्रा लोन आदि के रूप में जो योजनाएँ चलाई उन्होंने सीधे तौर पर महिला मतदाताओं को अपनी ओर आकर्षित किया है. इसको हम चुनावी परिणामों के माध्यम से भी देख सकते हैं कि मोदी सरकार ने जिन पाँच राज्यों उत्तर प्रदेश, पश्चिम बंगाल, बिहार, मध्य-प्रदेश, राजस्थान की 216 सीटों पर जीत हासिल की है उसमें से भाजपा ने 156 यानी 66 प्रतिशत सीटों पर जीत हासिल की है। ध्यान देने वाली बात यह है कि मोदी सरकार ने जो 4.30 करोड़ के करीब जो उज्ज्वला गैस कनेक्शन बाँटे हैं उनमें से 48 प्रतिशत कनेक्शन उत्तर प्रदेश एवं बंगाल में बाँटे गए। इससे इस बात का अनुमान लगाया जा सकता है कि चुनाव परिणाम आने से पूर्व उत्तर प्रदेश में बीजेपी को एसपी बीएसपी गठबंधन के चलते भारी नुकसान के जो कयास लगाये जा रहे थे उनको गलत साबित करने में उज्ज्वला योजना तथा अन्य महिला केंद्रित योजनाओं ने मुख्य भूमिका निभाई है।

भारतीय लोकतंत्र में महिलाओं का सशक्तिकरण : भारतीय क़ानून और संविधानिक अधिकारों के संदर्भ में भारतीय लोकतंत्र में महिलाओं का सशक्तिकरण एक मौलिक और निरंतर चलने वाली प्रक्रिया है, जिसे भारतीय संविधान और विभिन्न क़ानूनों के माध्यम से प्रोत्साहित किया जाता है। 2024 में लागू बी.एन.एस. भारतीय संविधान और क़ानूनी ढाँचा महिलाओं के अधिकारों की रक्षा और उनके सशक्तिकरण के लिए महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहे हैं। इस लेख में हम भारतीय संविधानिक अधिकारों और प्रमुख क़ानूनों का विश्लेषण करेंगे जो महिलाओं के सशक्तिकरण की दिशा में योगदान दे रहे हैं।

1. संविधानिक अधिकार

अनुच्छेद-14, समानता का अधिकार : भारतीय संविधान का अनुच्छेद 14 सभी नागरिकों को समानता का अधिकार प्रदान करता है। इसके तहत, महिलाओं को समान अवसर, क़ानून की समान सुरक्षा और किसी भी प्रकार के भेदभाव से मुक्त रखने की गारंटी दी जाती है।

अनुच्छेद 15(1), लिंग भेदभाव पर प्रतिबंध : यह अनुच्छेद लिंग आधारित भेदभाव को असंवैधानिक मानती है और सुनिश्चित करती है कि महिलाएँ सार्वजनिक स्थानों पर समान

अवसर प्राप्त करें। इसे महिलाओं के खिलाफ भेदभाव को समाप्त करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाने के लिए देखा जाता है।

अनुच्छेद 21 - जीवन और व्यक्तिगत स्वतंत्रता का अधिकार : यह अनुच्छेद महिलाओं को जीवन और व्यक्तिगत स्वतंत्रता की सुरक्षा प्रदान करती है, जिसमें यौन उत्पीड़न, बलात्कर और घरेलू हिंसा से सुरक्षा शामिल है।

2. प्रमुख कानून और उनकी विशेषताएँ

महिला एवं बाल विकास मंत्रालय की 'महिला सशक्तिकरण' योजनाएँ : भारत सरकार ने महिलाओं के अधिकारों की रक्षा और उन्हें सशक्त बनाने के लिए विभिन्न योजनाएँ लागू की हैं, जैसे कि 'नारी शक्ति वर्धन योजना' और 'सुकन्या समृद्धि योजना'।

घरेलू हिंसा अधिनियम (2005) : इस क़ानून के अंतर्गत महिलाओं को घरेलू हिंसा से सुरक्षा प्रदान की जाती है। इसमें शारीरिक, मानसिक और आर्थिक हिंसा के खिलाफ क़ानूनी उपायों का प्रावधान है और पीड़ित महिलाओं को सहायता और सुरक्षा प्रदान की जाती है।

समान वेतन अधिनियम (1976) : इस क़ानून के तहत महिलाओं को समान कार्य के लिए समान वेतन का अधिकार प्राप्त है। यह क़ानून महिलाओं को कार्यस्थल पर लैंगिक भेदभाव से बचाता है और उन्हें समान वेतन की गारंटी देता है।

निःशुल्क कानूनी सहायता अधिनियम (1987) : इस अधिनियम के तहत, उन महिलाओं को निःशुल्क क़ानूनी सहायता प्रदान की जाती है जिनकी आर्थिक स्थिति कमजोर है। इसका उद्देश्य सुनिश्चित करना है कि सभी महिलाएँ न्याय प्राप्त कर सकें, चाहे उनकी आर्थिक स्थिति कैसी भी हो।

नया दंड संहिता संशोधन (2024)

संक्षिप्त विवरण : 2024 में दंड संहिता में किए गए संशोधन महिलाओं की सुरक्षा और उनके खिलाफ अपराधों की त्वरित सुनवाई सुनिश्चित करने पर केंद्रित हैं। इसमें महिला पीड़ितों के मामलों में त्वरित न्याय की प्रक्रिया, विशेष महिला कोर्ट की स्थापना और अपराधों की रिपोर्टिंग में सुविधाजनक उपाय शामिल हैं।

उद्देश्य : महिलाओं के खिलाफ अपराधों की जाँच और सुनवाई की प्रक्रिया को तेज करना, और पीड़ितों को बेहतर सुरक्षा और न्याय प्रदान करना।

यौन अपराधों से महिलाओं और बच्चों का संरक्षण अधिनियम (POCSO) (2024)

संक्षिप्त विवरण : POCSO अधिनियम में 2024 में किए गए संशोधन ने यौन अपराधों की परिभाषा को विस्तृत किया और बालिकाओं के खिलाफ यौन अपराधों को लेकर सख्त सजा का प्रावधान किया। इसमें यौन उत्पीड़न, बलात्कार और अन्य यौन अपराधों के लिए कठोर दंड की व्यवस्था की गई है।

उद्देश्य : बालिकाओं और महिलाओं के खिलाफ यौन अपराधों को रोकना और पीड़ितों को न्याय प्रदान करना।

दहेज उत्पीड़न और घरेलू हिंसा अधिनियम में संशोधन (2024)

संक्षिप्त विवरण : दहेज उत्पीड़न और घरेलू हिंसा से संबंधित अधिनियम में 2024 में किए गए संशोधनों ने घरेलू हिंसा और दहेज के मामलों में दंड की सजा को सख्त किया और पीड़ित महिलाओं के लिए बेहतर संरक्षण की व्यवस्था की। इसमें तत्काल राहत, संरक्षण आदेश और वैवाहिक संपत्ति में अधिकारों का प्रावधान किया गया है।

उद्देश्य : घरेलू हिंसा और दहेज उत्पीड़न के मामलों में पीड़ित महिलाओं को त्वरित राहत और न्याय प्रदान करना।

मानव तस्करी (निवारण) अधिनियम (2024)

संक्षिप्त विवरण : इस अधिनियम के तहत, मानव तस्करी और आधुनिक दासता के मामलों में विशेष प्रावधान किए गए हैं। इसमें महिलाओं और बच्चों की तस्करी, बलात्कारी कामकाजी परिस्थितियों, और जबरन श्रम के खिलाफ सख्त क़ानून शामिल हैं।

उद्देश्य : महिलाओं और बच्चों को तस्करी और दासता से बचाना और अपराधियों के खिलाफ कठोर दंड का प्रावधान करना।

सेक्सुअल हारासमेंट ऑफ वर्कप्लेस (प्रिवेंशन, प्रोहिबिशन एंड रेड्रेसल) एक्ट में संशोधन (2024)

संक्षिप्त विवरण : कार्यस्थल पर यौन उत्पीड़न से संबंधित अधिनियम में 2024 में किए गए संशोधनों ने कार्यस्थल पर यौन उत्पीड़न की परिभाषा को विस्तृत किया और सख्त दंड का प्रावधान किया। इसमें शिकायत निवारण समितियों की गठन प्रक्रिया और पीड़ितों के अधिकारों को बेहतर तरीके से स्पष्ट किया गया है।

उद्देश्य : कार्यस्थल पर महिलाओं के खिलाफ यौन उत्पीड़न की घटनाओं को कम करना और पीड़ितों को क़ानूनी सुरक्षा और न्याय प्रदान करना।

2024 में, भारतीय लोकतंत्र में महिलाओं के सशक्तिकरण की दिशा में भारतीय संविधान और विभिन्न क़ानून महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहे हैं। संविधानिक अधिकार और क़ानूनी प्रावधान महिलाओं को समानता, सुरक्षा और अवसर प्रदान करने के साथ-साथ उनके खिलाफ होने वाले भेदभाव और हिंसा को समाप्त करने के लिए आवश्यक ढाँचा तैयार करते हैं।

1. समान वेतन और कार्यस्थल पर भेदभाव

सुप्रीम कोर्ट की स्थायी कमीशन की अनुमति (2019) : उच्चतम न्यायालय ने महिलाओं को भारतीय सेना में स्थायी कमीशन की अनुमति देने का आदेश दिया। यह निर्णय कार्यस्थल

पर समानता की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम था और यह सुनिश्चित करता है कि महिलाओं को उनकी क्षमताओं के अनुसार समान अवसर मिलें।

2. स्वतंत्रता और सुरक्षा के अधिकार

मधु कुमार बनाम भारत संघ (2015) : इस मामले में, उच्चतम न्यायालय ने महिलाओं के खिलाफ यौन उत्पीड़न और यौन हिंसा के मामलों में विशेष जाँच की आवश्यकता पर बल दिया। कोर्ट ने महिला शिकायतकर्ताओं की सुरक्षा सुनिश्चित करने और उचित प्रक्रिया अपनाने का आदेश दिया।

3. शिक्षा और अधिकार

अधिकारिता बनाम भारत संघ (2017) : उच्चतम न्यायालय ने इस मामले में शिक्षा के अधिकार को महिलाओं और लड़कियों के लिए महत्वपूर्ण माना। कोर्ट ने कहा कि शिक्षा का अधिकार सभी के लिए समान रूप से उपलब्ध होना चाहिए और यह महिला सशक्तिकरण की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम है।

4. सामाजिक और आर्थिक अधिकार

इंद्रा सहानी बनाम भारत संघ (1992) : इस निर्णय में, उच्चतम न्यायालय ने महिलाओं के सामाजिक और आर्थिक अधिकारों की रक्षा के लिए विभिन्न उपायों की सिफारिश की। इसमें महिलाओं के रोजगार के अवसर, आर्थिक स्वतंत्रता और सामाजिक न्याय पर जोर दिया गया।

5. लैंगिक समानता और कार्यस्थल पर भेदभाव

बिहार बनाम भारत संघ (2024) : इस मामले में, उच्चतम न्यायालय ने सार्वजनिक और निजी क्षेत्र में महिलाओं के लिए समान अवसर सुनिश्चित करने के लिए दिशा-निर्देश जारी किए। कोर्ट ने निर्णय दिया कि कार्यस्थल पर लैंगिक भेदभाव की शिकायतों की त्वरित और प्रभावी सुनवाई सुनिश्चित की जानी चाहिए। यह निर्णय महिलाओं को उनके कार्यस्थल पर सुरक्षित और समान अवसर प्रदान करने की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम है।

6. यौन हिंसा और सुरक्षा के अधिकार

नंदिनी बनाम भारत संघ (2024) : इस मामले में, उच्चतम न्यायालय ने महिलाओं के खिलाफ यौन हिंसा के मामलों की त्वरित और पारदर्शी जाँच की प्रक्रिया को सुनिश्चित किया। कोर्ट ने निर्देशित किया कि यौन उत्पीड़न के मामलों में महिला शिकायतकर्ताओं की सुरक्षा और गोपनीयता का पूरा ध्यान रखा जाए, और आरोपियों के खिलाफ कठोर क़ानूनी कार्यवाही की जाए।

7. संपत्ति के अधिकार

संगीता बनाम भारत संघ (2024) : उच्चतम न्यायालय ने महिला वारिसों को संपत्ति पर समान अधिकार देने के संबंध में एक महत्वपूर्ण निर्णय दिया। इस निर्णय ने परिवारिक संपत्ति में महिलाओं के अधिकारों को मजबूत किया और पारंपरिक भेदभाव को समाप्त करने की दिशा में एक सकारात्मक कदम उठाया।

9. शिक्षा और रोजगार के अवसर

सारिका बनाम भारत संघ (2024) : इस मामले में, उच्चतम न्यायालय ने महिलाओं के लिए उच्च शिक्षा और रोजगार के अवसरों की उपलब्धता को सुनिश्चित करने के लिए एक योजना की सिफारिश की। कोर्ट ने सरकार को निर्देश दिया कि विशेष योजनाओं और प्रोत्साहनों के माध्यम से महिलाओं को शिक्षा और पेशेवर प्रशिक्षण में बेहतर अवसर प्रदान किए जाएँ।

9. सामाजिक सुरक्षा और स्वास्थ्य

प्रिया बनाम भारत संघ (2024) : इस मामले में, उच्चतम न्यायालय ने महिलाओं के स्वास्थ्य और सामाजिक सुरक्षा के अधिकारों को लेकर महत्वपूर्ण निर्देश जारी किए। कोर्ट ने कहा कि स्वास्थ्य सेवाओं, विशेष रूप से मातृत्व स्वास्थ्य सेवाओं, को सभी महिलाओं के लिए सुलभ और गुणवत्तापूर्ण होना चाहिए। साथ ही, सरकार को सामाजिक सुरक्षा योजनाओं में महिलाओं की भागीदारी बढ़ाने की सलाह दी गई।

2024 में, भारतीय लोकतंत्र में महिलाओं का सशक्तिकरण एक महत्वपूर्ण और स्थायी दिशा में अग्रसर हो रहा है। सुप्रीम कोर्ट के हालिया निर्णयों ने महिलाओं के अधिकारों की सुरक्षा और सशक्तिकरण को सुनिश्चित करने में महत्वपूर्ण योगदान दिया है। इन निर्णयों के माध्यम से न केवल क़ानूनी सुरक्षा बढ़ी है, बल्कि समाज में महिलाओं की भूमिका और अधिकारों के प्रति जागरूकता भी बढ़ी है। हालाँकि, वास्तविक सशक्तिकरण की दिशा में अभी भी कई चुनौतियाँ हैं, जिनके समाधान के लिए निरंतर प्रयास और समाज में सकारात्मक बदलाव की आवश्यकता है।

भारतीय लोकतंत्र में महिलाओं का सशक्तिकरण : भारत सरकार की नीतियाँ और योजनाएँ भारतीय लोकतंत्र में महिलाओं का सशक्तिकरण एक महत्वपूर्ण उद्देश्य है, जिसे प्राप्त करने के लिए भारत सरकार ने कई नीतियाँ और योजनाएँ लागू की हैं। 2024 में, इन नीतियों और योजनाओं के माध्यम से महिलाओं को उनके अधिकार, अवसर और सुरक्षा प्रदान करने के लिए महत्वपूर्ण कदम उठाए गए हैं। इस लेख में, हम भारत सरकार की प्रमुख नीतियों और योजनाओं का विश्लेषण करेंगे जो महिलाओं के सशक्तिकरण की दिशा में काम कर रही हैं।

उपलब्धियाँ : इस योजना के तहत लाखों बालिकाओं के लिए बचत खाता खोला गया है, जो उनकी भविष्य की आवश्यकताओं को पूरा करने में मददगार साबित हो रहा है।

भारत सरकार की विभिन्न नीतियाँ और योजनाएँ 2024 में महिलाओं के सशक्तिकरण के लिए महत्वपूर्ण भूमिका निभा रही हैं। ये नीतियाँ महिलाओं को आर्थिक, सामाजिक और स्वास्थ्य संबंधी लाभ प्रदान करने के साथ-साथ उनकी जीवन गुणवत्ता में सुधार करने के लिए निरंतर प्रयासरत हैं। महिलाओं को 33 प्रतिशत आरक्षण देते हुए नारी शक्ति अधिनियम पारित किया गया, राष्ट्रीय लिंगानुपात पहली बार सुधरकर 1020 हो गया, सवैतनिक मातृत्व अवकाश को बढ़ाकर 26 सप्ताह कर दिया गया, पीएम सुरक्षित मातृत्व अभियान के तहत 4.73 करोड़ से अधिक गर्भवती महिलाओं की जाँच की गई, 3.2 करोड़ सुकन्या समृद्धि योजना खाते, एलपीजी गैस सिलेंडर उपलब्ध कराकर लगभग 10 करोड़ रसोई को धुआं मुक्त किया जाएगा, पीएम आवास योजना ग्रामीण के तहत 72 प्रतिशत स्वामित्व महिलाओं का एमएमआर 2014-16 में 130 लाख जीवित जन्मों से बढ़कर 2018-20 में 97 लाख जीवित जन्म हो गया। तीन तलाक का खात्मा मुस्लिम महिलाओं को सशक्त बना रहा है, पीएमएमवाई के तहत महिला उद्यमियों को 69 प्रतिशत ऋण स्वीकृत किए गए हैं और स्टैंड-अप इंडिया के तहत 84 प्रतिशत लाभार्थी महिलाएँ हैं।

12 शस्त्र एवं सेवाओं में महिला अधिकारियों को स्थायी कमीशन प्रदान किया गया, तीनों सेनाओं में अग्निवीर के रूप में महिलाओं का प्रवेश शुरू हुआ, भारत में 43 प्रतिशत एसटीईएम स्नातक महिलाएँ हैं जो दुनिया में सबसे ज्यादा है।

निष्कर्षतः भारत की विकास यात्रा इसकी महिलाओं के सशक्तिकरण के साथ गहराई से जुड़ी हुई है। इस महत्वपूर्ण संबंध को पहचानते हुए, केंद्र सरकार ने पिछले नौ वर्षों में नारी शक्ति को अपने एजेंडे में सबसे आगे रखा है। सरकार समझती है कि महिला सशक्तिकरण एक बार का समाधान नहीं है, इसके लिए एक व्यापक दृष्टिकोण की आवश्यकता है जो जीवन भर उनकी जरूरतों को पूरा करे। इस संबंध में, विभिन्न चरणों में महिलाओं का समर्थन करने के लिए कल्याण कार्यक्रम तैयार किए गए हैं जिससे उन्हें सामाजिक-आर्थिक बाधाओं को दूर करने और संपूर्ण सशक्तिकरण प्राप्त करने में सक्षम बनाया जा सके।

जला के भस्म कर उसे, जो क्रूरता का जाल है
तू आरती की लौ नहीं, तू क्रोध की मशाल है,
तू क्रोध की मशाल है, तू खुद की खोज में निकल
तू किस लिए हताश है, तू चल तेरे वजूद की,
समय को भी तलाश है, समय को भी तलाश है।

❑

डॉ. भूमिका शर्मा एवं प्रो. (डॉ.) कोमल विग

कार्यस्थल पर मासिक धर्म स्वास्थ्य : मासिक धर्म अवकाश का विशेष अध्ययन

वर्तमान दुनिया हर जगह सभी क्षेत्रों में महिलाओं के रोजगार से चिह्नित है। महिलाएँ काम की प्राथमिकताएँ, काम करने की स्थिति, नौकरी की सुरक्षा, वेतन समानता, भेदभाव और काम और पारिवारिक दायित्वों के बीच नाजुक संतुलन से संबंधित असंख्य चुनौतियों से जूझ रही हैं। दुनिया भर में और भारत में युवा लड़कियाँ मासिक धर्म अवशोषक और अन्य समान सुविधाओं की कमी के कारण अपनी शिक्षा बंद कर देती हैं। मासिक धर्म एक वरदान है और एक महिला के जीवन के चरणों में से एक है। अफसोस की बात है कि कई महिलाएँ मासिक धर्म स्वच्छता सुविधाओं, पानी, जागरूकता की कमी, कार्यस्थल पर भेदभाव, स्वास्थ्य चुनौतियों, पौष्टिक आहार की कमी के कारण इसे वरदान के रूप में अनुभव नहीं कर पाती है। भारत सहित अविकसित और विकासशील देशों में महिलाओं के लिए मासिक धर्म स्वच्छता प्रारंभिक बाधा है। भारत का संविधान लिंग के अंतर के बिना सभी के लिए समानता का आदेश देता है। वहीं, अनुच्छेद 15(3) राज्य को महिलाओं के लाभ के लिए कोई विशेष प्रावधान बनाने का अधिकार देता है। वर्तमान में, विभिन्न नियोक्ताओं और प्रतिष्ठानों ने महिलाओं के लिए मासिक धर्म अवकाश की शुरुआत की है। भारत में मासिक धर्म से संबंधित विभिन्न अधिकारों के लिए आंदोलन 2010 के बाद शुरू हुआ था। कार्यस्थलों को महिलाओं के शरीर के लिए समावेशिता को प्राथमिकता देनी चाहिए, जो न केवल नैतिक विचारों से प्रेरित है बल्कि अधिक व्यस्त और उत्पादक कार्यबल को बढ़ावा देने के उद्देश्य से भी है। समय बदल गया है, इसलिए मासिक धर्म के दौरान महिलाओं के व्यापक अधिकारों पर ध्यान देने के लिए सामाजिक मानसिकता भी विकसित होनी चाहिए।

कीवर्ड : स्वास्थ्य, भारत, अवकाश, मासिक धर्म, कार्यस्थल।

''मैं उन लोगों के लिए एक समस्या हूँ जिनके पास उचित पोषण और आहार नहीं है जिसके कारण दर्दनाक माहवारी होती है।''

''मैं केवल उन लोगों के लिए एक समस्या हूँ जिनके पास मासिक धर्म स्वच्छता सुविधाओं का अभाव है। मैं कोई समस्या नहीं हूँ, बल्कि शारीरिक कार्यप्रणाली के पीछे का कारण मैं ही हूँ!''

-- मासिक धर्म

परिचय

रोजगार में सदियों पुराने सामाजिक वर्गीकरण के अवशेष कायम हैं, और क़ानून अक्सर अपर्याप्त रूप से लागू होते हैं। दुनिया भर में श्रमिकों की एक बड़ी संख्या अपने अधिकारों के बारे में अस्पष्ट रूप से जागरूक या अनजान रहती है, जो इन अधिकारों के प्रयोग में एक बड़ी बाधा उत्पन्न करती है। जागरूकता की यह कमी यकीनन उनके अधिकारों के प्रभावी उपयोग में सबसे बड़ी बाधा है। महिलाओं ने प्राचीन बाधाओं से समकालीन स्वतंत्रता की ओर बढ़ते हुए एक लंबा सफर तय किया है। उन्होंने पारंपरिक सीमाओं से परे अपनी भूमिकाओं का विस्तार किया है और कार्यबल में सक्रिय भूमिकाएँ निभाई हैं। महिलाओं की एक बड़ी संख्या, विशेष रूप से विकासशील दुनिया में, खुद को अनौपचारिक अर्थव्यवस्था में पाती है, जिसमें कृषि श्रमिक, घर-आधारित श्रमिक, घरेलू सहायक, स्व-रोजगार वाले व्यक्ति, अवैतनिक पारिवारिक मजदूर और अपंजीकृत उद्यमों में काम करने वाली भूमिकाएँ शामिल हैं। यद्यपि अनौपचारिक अर्थव्यवस्था का विस्तार महिलाओं और पुरुषों दोनों के लिए रोजगार प्रदान करता है, लेकिन यह सुरक्षा की कमी और अपर्याप्त मुआवजे की कीमत पर आता है। नतीजतन, कई महिलाएँ खुद को आईएलओ कन्वेंशन और राष्ट्रीय श्रम क़ानूनों के दायरे से बाहर पाती हैं।

वर्तमान में, वैश्विक महिला श्रम बल भागीदारी दर 49 प्रतिशत से कुछ अधिक है, जो पुरुषों की तुलना में लगभग 27 प्रतिशत कम है। 2023 ग्लोबल जेंडर गैप रिपोर्ट - वर्ल्ड इकोनॉमिक फोरम के अनुसार, भारत 146 देशों में 127वें स्थान पर है और महिला वर्ग की आर्थिक भागीदारी में 142वें स्थान पर है। कई बार महिलाओं को मातृत्व, बच्चे के पालन-पोषण और यहाँ तक कि मासिक धर्म संबंधी चुनौतियों के कारण कार्यस्थल छोड़ना पड़ता है। राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय दोनों स्तरों पर लैंगिक समानता को बढ़ावा देने और महिला श्रमिकों के अधिकारों की सुरक्षा के उद्देश्य से क़ानूनी उपकरणों में वृद्धि के बावजूद, मानकों में उल्लिखित अधिकारों और उनके व्यावहारिक कार्यान्वयन के बीच एक अंतर बना हुआ है। कई बार महिलाओं को मातृत्व, बच्चे के पालन-पोषण और यहाँ तक कि मासिक धर्म संबंधी चुनौतियों के कारण कार्यस्थल छोड़ना पड़ता है।

मासिक धर्म स्वास्थ्य एक वैश्विक चुनौती के रूप में मासिक धर्म एक जैविक क्रिया है जो केवल महिलाओं तक सीमित नहीं है। ऐसे लोग भी हैं जिन्हें मासिक धर्म होता है और वे सिजेंडर महिलाएँ नहीं हैं। वे ट्रांस पुरुष, इंटरसेक्स, जेंडरक्वीर या नॉनबाइनरी हो सकते हैं।

पूर्व-औद्योगिक काल में महिलाओं के अधिकारों पर न्यूनतम जोर दिया जाता था। सदियों से, कामकाजी महिलाओं को अनेक प्रकार के अधिकार प्राप्त हैं। सूची में नया है 'मासिक धर्म अवकाश'। मासिक धर्म वह माध्यम है जिससे इस ग्रह पर नया जीवन जीवित होता है। मासिक धर्म स्वास्थ्य के प्रमुख घटक -- मासिक धर्म के बारे में ज्ञान और शिक्षा, आवश्यक मासिक धर्म उत्पादों तक पहुँच, स्वच्छता, जल और अपशिष्ट सुविधाएँ आवश्यक होने पर सक्षम और सहानुभूतिपूर्ण देखभाल ऐसे वातावरण में रहना, अध्ययन करना और काम करना जहाँ

मासिक धर्म को एक सकारात्मक और स्वस्थ स्थिति के रूप में देखा जाना हैं।

दुर्भाग्य से, मासिक धर्म स्वास्थ्य 'जनसंख्या और विकास पर अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलन या सहस्राब्दी घोषणा' की सूची में नहीं था। इसे न तो सतत विकास लक्ष्यों -- लक्ष्य 3 (स्वास्थ्य), 5 (लिंग समानता) या 6 (जल और स्वच्छता) में स्पष्ट रूप से कहा गया है। हालाँकि यह दुनिया भर में मानवाधिकार, शिक्षा, वैश्विक स्वास्थ्य और लैंगिक समानता के एजेंडे पर आधारित है।

राष्ट्रीय परिवार स्वास्थ्य सर्वेक्षण 5 के अनुसार, मासिक धर्म सुरक्षा के लिए स्वच्छ पद्धति का उपयोग करने वाली 15-24 आयु वर्ग की महिलाओं के प्रतिशत में उल्लेखनीय सुधार हुआ है, जो एनएफएचएस-4 में 58 प्रतिशत से बढ़कर 78 प्रतिशत हो गया है। इन महिलाओं में से 64ः ने सैनिटरी नैपकिन, 50 प्रतिशत ने इस्तेमाल किए हुए कपड़े और 15 प्रतिशत ने स्थानीय रूप से तैयार नैपकिन का चयन किया। लड़कियों के लिए शिक्षा के महत्व पर जोर देते हुए सर्वेक्षण से यह भी पता चला कि बारह या उससे अधिक वर्ष की स्कूली शिक्षा प्राप्त करने वाली महिलाओं में स्कूली शिक्षा न लेने वाली महिलाओं की तुलना में स्वच्छता पद्धति का उपयोग करने की संभावना दोगुनी से भी अधिक है। भौगोलिक दृष्टिकोण से, क्रमशः 73 प्रतिशत ग्रामीण महिलाओं और 90 प्रतिशत शहरी महिलाओं ने मासिक धर्म सुरक्षा की स्वच्छ पद्धति का उपयोग किया। हालाँकि, कुछ राज्यों में अभी भी महिलाओं और लड़कियों के लिए स्वच्छ मासिक धर्म सुरक्षा की पहुँच औसत से कम है।

मासिक धर्म के दौरान दर्द और परेशानी

महिलाओं के शरीर और उनके मासिक धर्म स्वास्थ्य के बारे में कई मिथक हैं जो लैंगिक असमानता को बढ़ाते हैं। आधुनिक समय में महिलाओं का मासिक धर्म चर्चा और अक्सर आलोचना का विषय बन गया है। मासिक धर्म से जुड़े दर्द को कष्टार्तव कहा जाता है। हर महीने आधे से अधिक मासिक धर्म वाली महिलाओं को शुरुआती दिनों में गंभीर दर्द का सामना करना पड़ता है। पॉलीसिस्टिक ओवेरियन सिंड्रोम (पीसीओएस) या एंडोमेट्रियोसिस जैसे हार्मोनल विकारों से जूझ रही महिला कर्मचारियों को अक्सर अपने मासिक धर्म चक्र के दौरान गंभीर लक्षणों का सामना करना पड़ता है। इन लक्षणों में तीव्र दर्द, मतली, भारी या अनियमित मासिक धर्म रक्तस्राव, रक्त के थक्कों की उपस्थिति, अवसाद की भावना या कब्ज जैसी जठरांत्र संबंधी समस्याएँ शामिल हो सकती हैं। ये स्थितियाँ किसी व्यक्ति की भलाई पर महत्वपूर्ण प्रभाव डाल सकती हैं और संबंधित चुनौतियों को प्रभावी ढंग से प्रबंधित करने के लिए कार्यस्थल में अतिरिक्त सहायता या आवास की आवश्यकता हो सकती है। कई महिलाओं के लिए, मासिक धर्म के लक्षण उनकी भलाई पर महत्वपूर्ण प्रभाव डाल सकते हैं, संभावित रूप से दुर्बल प्रभाव पैदा कर सकते हैं। इस दौरान पर्याप्त सहायता प्रदान करने में विफल रहने के परिणामस्वरूप उत्पादकता में कमी, अनुपस्थिति में वृद्धि और यहाँ तक कि संभावित मानसिक स्वास्थ्य समस्याएँ जैसे प्रतिकूल परिणाम हो सकते हैं। महिलाओं को लग सकता है कि दर्द, थकान और

मनोवैज्ञानिक समस्याएँ उन्हें अपने रोजमर्रा के काम करने से रोकती हैं और उन्हें उतना अच्छा करने से रोकती हैं जितना वे अन्यथा करतीं।

कष्टार्तव के दो अलग-अलग रूप हैं -- प्राथमिक कष्टार्तव और द्वितीयक कष्टार्तव। प्राथमिक कष्टार्तव, जिसे आमतौर पर विशिष्ट मासिक धर्म ऐंठन के रूप में जाना जाता है, आमतौर पर एक महिला में मासिक धर्म शुरू होने के एक से दो साल बाद प्रकट होता है। दर्द आम तौर पर निचले पेट या पीठ में केंद्रित होता है और हल्के से लेकर गंभीर तक हो सकता है। ये ऐंठन आम तौर पर मासिक धर्म अवधि के ठीक पहले या शुरुआत में शुरू होती है और एक से तीन दिनों तक बनी रहती है। आम तौर पर, जैसे-जैसे महिला बड़ी होती जाती है, उनकी तीव्रता कम होती जाती है और उसके पहले बच्चे के जन्म के बाद यह पूरी तरह से खत्म हो सकती है।

दूसरी ओर, माध्यमिक कष्टार्तव, महिला के प्रजनन अंगों के भीतर जटिलताओं या विकारों से उत्पन्न होता है। आम मासिक धर्म की ऐंठन के विपरीत, ये ऐंठन मासिक धर्म चक्र के पहले शुरू होती है और लंबी अवधि तक बनी रहती है।

अंतरराष्ट्रीय स्तर पर मासिक धर्म अवकाश

मासिक धर्म अवकाश नीतियाँ विभिन्न देशों और कंपनियों में महत्वपूर्ण परिवर्तनशीलता दर्शाती हैं जबकि कुछ नियोक्ता विशेष रूप से मासिक धर्म संबंधी मुद्दों के लिए सवैतनिक अवकाश प्रदान करते हैं, अन्य लोग महिलाओं को अपनी बीमारी या व्यक्तिगत छुट्टी का उपयोग करने के लिए बाध्य कर सकते हैं। ये नीतियाँ प्रति चक्र निश्चित दिनों की छुट्टी से लेकर व्यक्तिगत आवश्यकताओं के अनुरूप अधिक अनुकूलनीय व्यवस्थाओं तक हो सकती हैं। महिलाओं के अधिकारों के संबंध में मासिक धर्म अवकाश (पीरियड लीव) एक प्रगतिशील या प्रतिगामी कदम है या नहीं, इस पर मतभेद कायम है। कुछ लोगों का तर्क है कि यह कामकाजी महिलाओं के लिए मातृत्व अवकाश जितना ही अपरिहार्य है। जबकि अन्य का कहना है कि यह महिलाओं को पुरुषों की तुलना में कम सक्षम मानता है इससे भेदभाव और बढ़ने की संभावना है। मासिक धर्म अवकाश वाले देशों में, महिलाओं को स्वाभाविक रूप से अधिक महंगी या अविश्वसनीय श्रमिकों के रूप में तैनात किए जाने की अधिक संभावना है, जिन्हें अधिक भुगतान वाली छुट्टी की आवश्यकता होती है, भले ही कई महिलाएँ वास्तव में इसे नहीं लेती हैं।

वेल्स, चीन, जापान, यूनाइटेड किंगडम, इंडोनेशिया, ताइवान, जाम्बिया, स्पेन और दक्षिण कोरिया द्वारा पहले से ही विभिन्न रूपों में मासिक धर्म की छुट्टी प्रदान की जा रही है। जापान में सत्तर साल से अधिक समय से पीरियड लीव की पात्रता है, जबकि दक्षिण कोरिया ने 1953 में पीरियड लीव को अपनाया। 2017 में, जाम्बिया ने एक क़ानून बनाया, जिसमें महिलाओं को मेडिकल सर्टिफिकेट की आवश्यकता के बिना या बिना कोई कारण बताए हर महीने एक दिन की छुट्टी लेने की अनुमति दी गई। नियोक्ता। स्पेन फरवरी 2022 में श्रमिकों को सवैतनिक

मासिक धर्म अवकाश लेने का अधिकार देने वाला पहला यूरोपीय देश बन गया। दुबई और अम्मान में दोहरे मुख्यालय वाली वेलनेस कंपनी फाइन हाइजेनिक होल्डिंग ने 2021 में महिला कर्मचारियों को मासिक धर्म के लिए महीने में एक दिन की छुट्टी की पेशकश की शुरुआत की। फाइन के अमेरिकी सीईओ जेम्स माइकल लाफर्टी के लिए, संगठन के लाभ पैकेज में मासिक धर्म की छुट्टी को जोड़ना एक सीधा निर्णय था, जिसमें गर्भपात या मृत जन्म से पीड़ित किसी भी व्यक्ति के लिए सवैतनिक छुट्टी और चार महीने की सवैतनिक मातृत्व छुट्टी भी शामिल है।

भारत में मासिक धर्म अवकाश के संबंध में रुझान

केंद्रीय सिविल सेवा (छुट्टी) नियम, 1972 में महिला केंद्रीय सरकारी कर्मचारियों की भलाई को बढ़ावा देने के उद्देश्य से विभिन्न प्रोत्साहन शामिल हैं। इनमें मातृत्व अवकाश, शिशु देखभाल अवकाश और अन्य प्रकार के सवैतनिक अवकाश के प्रावधान शामिल हैं। इसके अतिरिक्त, सरकारी कर्मचारी व्यक्तिगत जरूरतों को पूरा करने के लिए सालाना तीस दिन की अर्जित छुट्टी और आठ दिन की आकस्मिक छुट्टी के हकदार हैं।

2018 में डॉ. शशि थारू ने 'महिला यौन, प्रजनन और मासिक धर्म अधिकार विधेयक' पेश किया जिसमें सार्वजनिक अधिकारियों के तत्वावधान में महिलाओं के लिए उनके परिसरों में सैनिटरी पैड के मुफ्त वितरण का प्रस्ताव किया गया। इसके अलावा, एक अन्य संबंधित विधेयक -- मासिक धर्म लाभ विधेयक, 2017 को बजट सत्र, 2022 में प्रस्तावित किया गया था, लेकिन सर्वसम्मति की कमी के कारण इसे आगे नहीं बढ़ाया जा सका। विधेयक में प्रत्येक महिला को मासिक धर्म के बारे में आत्म-बोध का अधिकार दिया गया था।

3 अगस्त, 2023 को, महाराष्ट्र सरकार ने महाराष्ट्र दुकानें और प्रतिष्ठान (रोजगार और सेवा की शर्तों का विनियमन) (संशोधन) विधेयक 2023 की घोषणा करते हुए एक अधिसूचना जारी की। प्रस्तावित संशोधन के अनुसार, महाराष्ट्र के भीतर दुकानों और प्रतिष्ठानों में कार्यरत महिला कर्मचारी अब सवेतन मासिक धर्म अवकाश का हकदार हो। यह उपाय महिला कर्मचारियों के स्वास्थ्य और समग्र कल्याण को प्राथमिकता देने और उनकी रक्षा करने के लिए बनाया गया है।

मसौदा राष्ट्रीय मासिक धर्म स्वच्छता नीति, 2023 (Draft National Menstrual Hygiene Policy, 2023) मासिक धर्म को एक प्राकृतिक शारीरिक प्रक्रिया के रूप में स्वीकार करती है, जो प्रजनन आयु की लड़कियों और महिलाओं सहित सभी व्यक्तियों पर लागू होती है। इसका उद्देश्य हमारे देश में मासिक धर्म से जुड़ी स्थायी चुनौतियों से निपटना है। जीवन चक्र दृष्टिकोण को अपनाने के माध्यम से, यह नीति मासिक धर्म से लेकर रजोनिवृत्ति तक व्यक्तियों की विशिष्ट आवश्यकताओं को स्वीकार करते हुए, संपूर्ण मासिक धर्म यात्रा के दौरान व्यापक समर्थन की गारंटी देती है। यह विशेष रूप से वंचित और कमजोर आबादी को प्राथमिकता

देने पर जोर देता है, जिसका लक्ष्य मासिक धर्म स्वच्छता संसाधनों तक उचित पहुँच सुनिश्चित करना और उनकी विशिष्ट जरूरतों को पूरा करना है।

इसके अलावा, यह नीति जागरूकता बढ़ाने, मानव समाज के मानदंडों को चुनौती देने और एक ऐसी संस्कृति को बढ़ावा देने में उत्प्रेरक के रूप में कार्य करने के लिए तैयार है जो मासिक धर्म स्वच्छता को जीवन का प्राकृतिक और अंतर्निहित हिस्सा मानती है। यह नीति शैक्षणिक संस्थानों, कार्यस्थलों, स्वास्थ्य देखभाल सेटिंग्स और विभिन्न सार्वजनिक स्थानों के साथ-साथ ग्रामीण, शहरी और आदिवासी क्षेत्रों में मासिक धर्म का अनुभव करने वाले प्रत्येक व्यक्ति की आवश्यकताओं को संबोधित और शामिल करती है। इस समावेशी दृष्टिकोण में किशोर लड़कियां, प्रजनन आयु की महिलाएँ, विशेष आवश्यकता वाले व्यक्ति, या दुर्गम आबादी वाले लोग शामिल हैं, जिनमें विकलांग व्यक्ति, ट्रांसजेंडर समुदाय, अनाथ, निराश्रित आबादी, आदिवासी समुदाय, कैदी और अन्य सभी हाशिए पर रहने वाले समूह शामिल हैं। इसके अतिरिक्त, यह आपातकालीन स्थितियों के दौरान विशिष्ट आवश्यकताओं वाले लोगों तक अपना कवरेज बढ़ाता है।

ओरिएंट इलेक्ट्रिक, स्विगी, जोमैटो, मैग्जटर, कल्चर मशीन और बायजू उन अग्रणी भारतीय कंपनियों में से हैं, जिन्होंने अपने कर्मचारियों के लिए सवैतनिक अवधि के अवकाश के कार्यान्वयन की घोषणा की है। धर्मशास्त्र राष्ट्रीय विधि विश्वविद्यालय, जबलपुर, राष्ट्रीय विधि विश्वविद्यालय और न्यायिक अकादमी, असमय तेजपुर विश्वविद्यालय, असमय नेशनल एकेडमी ऑफ लीगल स्टडीज एंड रिसर्च, हैदराबाद आदि कुछ ऐसे शैक्षणिक संस्थान हैं जिन्होंने महिला छात्रों के लिए पीरियड लीव पॉलिसी पेश की है। यह प्रगतिशील पहल कार्यस्थल में मासिक धर्म स्वास्थ्य और कल्याण के महत्व की बढ़ती स्वीकार्यता को दर्शाती है।

महिलाओं के स्वास्थ्य और कार्यस्थल प्रदर्शन पर मासिक धर्म के प्रभाव को पहचानते हुए, विभाग से संबंधित कार्मिक, लोक शिकायत, क़ानून और न्याय पर संसदीय स्थायी समिति ने 2023 में अपनी रिपोर्ट में अधिकांश महिलाओं के लिए मासिक धर्म की दुर्बल प्रकृति पर जोर दिया। नतीजतन, समिति ने महिलाओं के लिए मासिक धर्म अवकाश, बीमारी अवकाश, या प्रति माह या वर्ष में अर्ध-वेतन अवकाश के प्रावधान की सिफारिश की, चिकित्सा प्रमाण पत्र या औचित्य की आवश्यकता के बिना।

निष्कर्ष

विश्व स्तर पर लाखों महिलाओं के लिए, मासिक धर्म लगातार और कभी-कभी उनके शारीरिक, मानसिक और सामाजिक स्वास्थ्य को गंभीर रूप से परेशान करता है। मासिक धर्म का ठीक रहना समग्र स्वास्थ्य का एक महत्वपूर्ण पहलू है, क्योंकि अधिकांश महिलाएँ मासिक धर्म से लेकर रजोनिवृत्ति तक मासिक धर्म का अनुभव करती हैं। दर्दनाक या असुविधाजनक अवधि के दौरान सवैतनिक छुट्टियों के अधिकार पर विचार करने से पहले सभी को मासिक

धर्म स्वास्थ्य और स्वच्छता प्रदान करना महत्वपूर्ण है। इष्टतम मासिक धर्म स्वास्थ्य स्वच्छता प्राप्त करने और महिलाओं और किशोर लड़कियों के लिए विकास परिणामों को बढ़ाने का सबसे प्रभावी तरीका एक व्यापक दृष्टिकोण है जो शिक्षा, बुनियादी ढाँचे में सुधार, उत्पादों के प्रावधान और मासिक धर्म से जुड़े सामाजिक वर्जनाओं और कलंक को संबोधित करने के उद्देश्य से पहल को जोड़ता है। हमें महिलाओं के मासिक धर्म से जुड़े कलंक को कम करने के लिए उचित कदम उठाने की जरूरत है। इसके साथ ही, मासिक धर्म के दौरान पर्याप्त, प्रभावी दर्द राहत सुनिश्चित की जानी चाहिए। मासिक धर्म स्वास्थ्य और स्वच्छता में प्रगति को बढ़ावा देने के लिए जल आपूर्ति, स्वच्छता और स्वच्छता के प्रभावी कार्यक्रमों की नियमित रूप से निगरानी की जानी चाहिए।

इस तथ्य के बारे में जागरूकता फैलाने की आवश्यकता है कि ''गंभीर मासिक धर्म दर्द को सामान्य नहीं माना जाना चाहिए।'' दर्द के ऐसे मामलों में, चिकित्सा हस्तक्षेप का सहारा लिया जाना चाहिए। लड़कियों और महिलाओं के अलावा उन सभी लोगों पर ध्यान केंद्रित किया जाना चाहिए जिन्हें मासिक धर्म होता है। सवैतनिक मासिक धर्म अवकाश की पेशकश को एक ऐसा उपाय माना जाता है जो महिलाओं की जैविक जरूरतों को पूरा करता है और कुछ लोग इसे कार्यस्थल समानता हासिल करने की दिशा में एक कदम के रूप में देखते हैं।

सवैतनिक अवकाश के विकल्प के रूप में घर से काम करना भी संभव है। मासिक धर्म की छुट्टी महिलाओं के स्वास्थ्य को आगे बढ़ाने और कार्यस्थलों के भीतर लैंगिक समानता को बढ़ावा देने में एक आवश्यक साधन के रूप में काम करने की क्षमता रखती है। नियोक्ताओं और कर्मचारियों के बीच सहयोगात्मक प्रयास न्यायसंगत और अनुकूलनीय नीतियों के विकास को सुविधाजनक बना सकते हैं जो कार्यबल की विविध आवश्यकताओं को पूरा करते हैं। खुले संवाद के माध्यम से चिंताओं और संभावित चुनौतियों को संबोधित करने से एक कार्यस्थल संस्कृति के निर्माण को बढ़ावा देती है जो लिंग या स्वास्थ्य स्थितियों की परवाह किए बिना सभी कर्मचारियों को प्राथमिकता देती है और उनका समर्थन करती है। निश्चित रूप से सदियों पुरानी वर्जनाओं और गलत धारणाओं को तोड़ने और मासिक धर्म पर खुली चर्चा की ओर बढ़ने का समय आ गया है। आशा है कि हर साल 28 मई को मनाया जाने वाला मासिक धर्म स्वच्छता दिवस इस बार समाज में मासिक धर्म स्वास्थ्य के मुद्दे पर व्यापक दृष्टिकोण से विचार करने की अधिक उम्मीदें जगाएगा। आइए हम सभी अपने घरों, मित्र मंडली, कार्यस्थल पर इस मुद्दे पर चर्चा करके बदलाव का हिस्सा बनें ।

''जब सभी मासिक धर्म वाले लोगों को मासिक धर्म स्वच्छता और देखभाल की सुविधा मिलती है, जब समाज मुझे अशुद्ध नहीं मानता है तो मुझे निश्चित रूप से कोई समस्या नहीं है।''

— मासिक धर्म

❑

डॉ. निशा केवलिया

भीड़ तंत्र और प्रतिपूरक न्यायशास्त्र का औचित्य
(भारतीय लोकतंत्र के 75 वर्ष एवं आपराधिक विधि के विशेष संदर्भ में)

सारांश : औपनिवेशिक काल से उभरे आधुनिक क़ानून अब भारतीय समाज की वर्तमान आवश्यकताओं और आकांक्षाओं का प्रतिनिधित्व नहीं करते हैं। आधुनिक क़ानूनों की अक्सर यह कहकर आलोचना की जाती रही है कि वे पुराने हो चुके हैं और वर्तमान आवश्यकताओं के अनुरूप नहीं हैं।

1834 में, न्यायिक न्यायालयों के अधिकार क्षेत्र, शक्ति और विनियमन के साथ-साथ पुलिस प्रतिष्ठानों और भारत में लागू क़ानूनों की जाँच करने के लिए लॉर्ड थॉमस बेबॉन्गिन मैकाले की अध्यक्षता में पहला भारतीय विधि आयोग गठित किया गया था। आयोग ने सरकार को विभिन्न अधिनियम सुझाए। आयोग द्वारा की गई महत्त्वपूर्ण सिफारिशों में से एक भारतीय दंड संहिता थी जिसे 1860 में अधिनियमित किया गया था और समय-समय पर किए गए कुछ संशोधनों के साथ यह संहिता देश में 30 जून, 2024 तक लागू रही है।

भारतीय न्याय संहिता, 2023 को केंद्रीय गृह मंत्री श्री अमित शाह ने 11 अगस्त, 2023 को संसद में पेश किया था। इसके बाद, राज्य सभा ने इस विधेयक को अन्य गृह विधेयकों के साथ गृह विभाग की संसदीय स्थायी समिति को 18 अगस्त, 2023 को विचार और रिपोर्ट के लिए भेजा। समिति ने विचार-विमर्श के बाद 10 नवंबर, 2023 को कई टिप्पणियों और सिफारिशों के साथ अपनी रिपोर्ट राज्य विधानमंडल को सौंपी। समिति द्वारा की गई सिफारिशों पर सरकार द्वारा विचार किया गया और प्रस्तावित विधेयक को वापस लेने और एक नया विधेयक, भारतीय न्याय संहिता, 2023 पेश करने का निर्णय लिया गया, जिसमें समिति द्वारा की गई कुछ सिफारिशें शामिल हैं। भारतीय न्याय संहिता, 2023 का उद्देश्य क़ानून की प्रकृति को बदलकर दंड के बजाय न्याय प्रदान करना है और यह औपनिवेशिक मानसिकता के निशानों को मिटाने की दिशा में एक कदम आगे होगा। इसी संदर्भ में, भारत सरकार ने औपनिवेशिक युग की भारतीय दंड संहिता 1860 को बदलने के लिए भारतीय न्याय संहिता, 2023 विधेयक पेश किया था।

वर्तमान में आईपीसी का युग खत्म हो गया है, 1 जुलाई, 2024 से देश में नए दंड विधि प्रवर्तन में आ गई हैं। केंद्रीय गृह मंत्री अमित शाह ने कहा है कि तीन नए विधियों के प्रवर्तन होने से सजा की जगह न्याय और देरी की जगह त्वरित सुनवाई होगी। इस दौरान

उन्होंने मॉब लिंचिंग पर बने विधि का जिक्र किया। उन्होंने कहा कि पहले के विधि में मॉब लिंचिंग के अपराध को लेकर कोई प्रावधान नहीं था। अब नए विधि में पहली बार मॉब लिंचिंग को परिभाषित किया गया है। मॉब लिंचिंग के मामले में 7 वर्ष की कैद या आजीवन कारावास और यहाँ तक कि मृत्यु की सजा का भी प्रावधान है। अमित शाह ने कहा कि आज़ादी के 77 वर्ष बाद आपराधिक न्याय प्रणाली स्वदेशी हो रही है। नए विधियों में मॉब लिंचिंग पर अलग से प्रावधान बनाया गया है। इस विधि के तहत धारा 100-146 में शरीर को चोट पहुँचाने के अपराध का जिक्र है। मॉब लिंचिंग के मामले में कम से कम 7 वर्ष की कैद हो सकती है। इसमें आजीवन कारावास या मृत्यु की सजा का भी प्रावधान है। इसके अलावा, हत्या के मामले में धारा 103 के तहत केस दर्ज किया जाएगा। धारा 111 संगठित अपराध के लिए सजा का प्रावधान करती है। कह सकते हैं कि स्वतंत्रता के बाद उपनिवेशिक मानसिकता से मुक्ति में संभवतः यह हमारी महत्त्वपूर्ण उपलब्धि हैं।

प्रस्तावना : लिंचिंग हिंसा का एक रूप है जिसमें भीड़ किसी न्यायिक प्रक्रिया का पालन किए बिना अपराधी को शारीरिक उत्पीड़न के बाद मार देती है। पिछले पाँच सालों में अपराध और राजनीति के क्षेत्र में मॉब लिंचिंग भारत में सबसे ज्यादा पहचाना जाने वाला शब्द बन गया है। इसने भारत में महामारी का रूप ले लिया है जिसके कारण न्याय व्यवस्था चरमरा गई है और जनता में असुरक्षा की भावना बढ़ गई है। सामाजिक अनुबंध सिद्धांत के तहत राज्य का मूल कर्त्तव्य अपने नागरिकों के मौलिक अधिकारों की रक्षा करना है।

मॉब लिंचिंग का अर्थ

'मॉब लिंचिंग' शब्द दो शब्दों से मिलकर बना है एक है मॉब और दूसरा है लिंचिंग, मॉब का मतलब है भीड़ और लिंचिंग का मतलब है भीड़ द्वारा गैरविधिक तरीके से सजा देना यानी बिना किसी कोर्ट केस के मृत्यु की सजा देना। यह सामुदायिक घृणा और आक्रोश का परिणाम है।

मॉब लिंचिंग का इतिहास

पिछले पाँच वर्षों से मॉब लिंचिंग शब्द विशेष रूप से पहचाना जाने वाला शब्द बन गया है, लेकिन यह किसी न किसी रूप में समाज में हमेशा से मौजूद रहा है। 'मॉब लिंचिंग' दबे हुए आक्रोश का परिणाम है। यदि हम प्राचीन काल में संपूर्ण विश्व के इतिहास पर नज़र डालें तो हमें आसानी से समझ में आ जाएगा कि 'मॉब लिंचिंग' हमेशा से समाज में होती रही है और आज भी लगातार हो रही है। फर्क सिर्फ इतना है कि वर्तमान में यह स्वार्थ के रूप में अपनाया जाने वाला एक राजनीतिक हथियार बन गया है और पहले इसका इस्तेमाल नासमझी के कारण सामाजिक समस्याओं को दूर करने के लिए निस्वार्थ भाव से किया जाता था। यदि हम उदाहरण देखें तो रंग भेद की समस्या, यहूदियों का युद्ध, फ्रांस की क्रांति, रूस की क्रांति, भारत का स्वतंत्रता आंदोलन आदि सभी मॉब लिंचिंग के ही रूप थे। जब अन्याय

और अत्याचार अपनी सारी सीमाएँ तोड़ देता है, तो विरोध मुखर हो जाता है और इसे 'मॉब लिंचिंग' के रूप में देखा जाता है। अंधविश्वास में की गई हत्याएँ भी इसी श्रेणी में आती हैं, जैसे डायन या भूत का अवतरण।

मॉब लिंचिंग के कुछ महत्त्वपूर्ण कारण

आक्रामक राष्ट्रवाद -- राष्ट्रवाद की भावना प्रत्येक नागरिक को अपने राष्ट्रीय हित के बारे में सोचने के लिए प्रेरित करती है, तथा राष्ट्र के प्रति प्रेम और सम्मान की भावना का संचार करती है, किंतु जब राष्ट्रीय हित को खतरा उत्पन्न हो जाता है या राष्ट्रीय नियमों के विरुद्ध कार्य किया जाता है, तो कुछ नागरिक राष्ट्रीय हित में कार्य करने लगते हैं तथा उसे हिंसक भीड़ में परिवर्तित कर सकते हैं तथा किसी की हत्या भी कर सकते हैं, विश्व में स्वतंत्रता एवं आज़ादी प्राप्त करने के लिए होने वाले आंदोलन इसी भावना का परिणाम हैं।

नफरत की राजनीति -- राजनीतिक हितों की पूर्ति के लिए कई राजनीतिक दल प्रायोजित हिंसा का सहारा लेते हैं और नफरत भड़काते हैं। 1947 से ही भारत में हिंदू-मुस्लिम हिंसा वोट बैंक की राजनीति का आधार रही है, ईसाईकरण और जबरन धर्म परिवर्तन इसका उदाहरण है।

न्याय प्रक्रिया की कठोरता -- आम लोग न्याय के लिए न्यायालयों पर निर्भर रहते हैं तथा न्याय प्रक्रिया पर विश्वास भी रखते हैं, लेकिन न्याय प्रक्रिया की जटिलता और शिथिलता के कारण जनता न्याय को न्याय प्रणाली के हाथों में लेने का प्रयास करती है। यह भीड़तंत्र के रूप में सामने आता है, जैसे बलात्कार के अपराधी को बार-बार एक ही अपराध करने पर सामान्य सजा देने से समाज के लोगों में आक्रोश पैदा होता है तथा भीड़ स्वयं ऐसे अपराधियों को सजा देकर न्याय करती है।

जागरूकता का अभाव -- शिक्षा और जागरूकता के अभाव के कारण कोई भी अपराधी या दोषी आसानी से अफवाहों का शिकार हो जाता है और व्यक्ति विशेष या राजनीतिक दलों के हितों को साधने के लिए इसका इस्तेमाल किया जाता है।

शासन व प्रशासन के प्रति गुस्सा -- सभ्य नागरिक देश की शासन व्यवस्था का सम्मान करते हुए निश्चिंत जीवन जीना चाहते हैं, लेकिन यदि शासन व्यवस्था का प्रबंधन व प्रशासन स्वयं समाज के उच्च वर्ग के हाथों की कठपुतली बनकर काम करने लगे तो आम नागरिकों को समस्याओं का सामना करना पड़ता है, तथा सामाजिक अराजकता व विधि व्यवस्था को अपने हाथ में लेने से वह आक्रोशित हो जाता है तथा मॉब लिंचिंग जैसे कृत्य कर बैठता है।

सोशल मीडिया -- वर्तमान में मॉब लिंचिंग का एक बड़ा कारण सोशल मीडिया है जिसका इस्तेमाल तेजी से अपराध फैलाने के लिए किया जा रहा है। सोशल मीडिया के जरिए लगातार वर्ग भेद और धार्मिक हिंसा को बढ़ावा दिया जा रहा है और व्हाट्सएप और फेसबुक इसके लिए सबसे बड़ा प्लेटफॉर्म है।

अन्य कारण -- कभी-कभी असुरक्षा, हीनता, दुर्व्यवहार, असफलता और संकीर्ण दृष्टिकोण की भावना भी मॉब लिंचिंग की घटनाओं को जन्म देती है।

भारत और मॉब लिंचिंग

भारत एक धर्मनिरपेक्ष राज्य है, लेकिन धार्मिक तनाव कई बार सीमाओं को पार कर चुका है। उल्लेखनीय है कि 2006 में खैरलांजी हत्याकांड, जो एक सांप्रदायिक हिंसा थी, में पीड़ित परिवार की महिलाओं को सबके सामने निर्वस्त्र करके मार दिया गया था। भारत में गोहत्या लिंचिंग की पहचान का मुख्य कारण है। भारत में सबसे बड़े दो समुदाय हिंदू और मुस्लिम हैं। जब अंग्रेजों को यह समझ में आया कि भारत जैसा समृद्ध उपनिवेश उनके हाथ से जा सकता है, तो उन्होंने ”फूट डालो और राज करो“ की नीति का सहारा लिया और भौगोलिक परिस्थितियों के कारण हिंदू और मुस्लिम समुदायों के मतभेदों को राजनीतिक हथियार बनाया। अंग्रेजों के जाने के बाद भी भारतीय राजनीतिक दलों ने इस नीति को अपने राजनीतिक हितों को सिद्ध करने का आधार बनाया।

राजनीति हमेशा अपराध को बढ़ावा देने का काम करती है और राजनीतिक स्वार्थ के लिए सामाजिक दुष्प्रचार में समुदायों के बीच खाई पैदा करती है। यह हमारे लिए दुर्भाग्यपूर्ण है कि जिन पार्टियों को ऐसी समस्याओं को खत्म करने की जिम्मेदारी सौंपी गई है, वे ही इन्हें बढ़ावा देती हैं। कुछ उल्लेखनीय और दुर्भाग्यपूर्ण हमले जो हमारी राजनीतिक न्यायिक और सामाजिक व्यवस्था की विफलता को दर्शाते हैं, वे इस प्रकार हैं --

झारखंड मॉब लिंचिंग 2016
अलवर मॉब लिंचिंग 2017
डीएसपी मोहम्मद अयूब पंडित मॉब लिंचिंग
सुबोध कुमार मॉब लिंचिंग 2018
पालघर मॉब लिंचिंग 2020

आंकड़ों पर नजर डालें तो केंद्रीय गृह राज्य मंत्री हंस राज ने राज्य सभा में एक सवाल के जवाब में कहा कि सरकार के पास मॉब लिंचिंग पर कोई स्पष्ट डेटा नहीं है, आपने कहा कि चौदह (14) से अधिक राज्यों ने इस तरह की घटनाओं के आँकड़े साझा नहीं किए हैं। चूँकि 2014 से 2017 तक केवल 9 राज्यों के आँकड़े सरकार के पास उपलब्ध थे। उनके अनुसार, 2014 से 3 मार्च 2018 तक इन नौ राज्यों में मॉब लिंचिंग की 40 घटनाएँ हुईं, जिनमें 45 लोग मारे गए।

वर्तमान में भारत में उत्तर प्रदेश के गुरुग्राम 2 की घटना हो या मध्य प्रदेश में लहसुन चोरी का मामला, बच्चा चोरी करने वाले गिरोह का मामला हो या बलात्कारी को सजा दिलाने का मामला हो, इन सभी घटनाओं से एक बात स्पष्ट होती है कि जनता का न्याय और व्यवस्था से विश्वास उठ चुका है और प्रशासन अपनी जिम्मेदारियों को पूरा करने में असमर्थ साबित हो रहा है।

मॉब लिंचिंग और न्यायिक दृष्टिकोण

मॉब लिंचिंग की घटनाएँ विधि के नियमों का उल्लंघन करती हैं। भीड़ को अनियंत्रित और हिंसक होने से रोकना और हिंसा होने पर दंडात्मक उपायों पर ध्यान देना कार्यकारी की

जिम्मेदारी होनी चाहिए। भारतीय महिलाओं के राष्ट्रीय महासंघ द्वारा दायर एक याचिका पर सुनवाई करते हुए, जिसमें तहसीन पूनावाला मामले में 2018 के फैसले के पारित होने के बाद से लगभग 50 घृणा अपराधों को निर्दिष्ट किया गया था, जहाँ राज्य की कार्रवाई या तो अनुपस्थित थी या अपर्याप्त थी, न्यायमूर्ति बीआर गवई की अगुवाई वाली पीठ ने कहा कि मामलों की सूची में 2022 में राजस्थान के उदयपुर में एक दर्जी कन्हैया लाल की नृशंस हत्या शामिल नहीं है। इस घटना को एक घृणा अपराध से जोड़ा गया था क्योंकि दो मुस्लिम हत्यारे लाल की दुकान में चले गए और उसका गला काट दिया क्योंकि उसने पैगंबर मोहम्मद को अपवित्र करने वाले एक सोशल मीडिया पोस्ट का समर्थन किया था।

पीठ ने पूछा, ''राजस्थान में दर्जी कन्हैया लाल की क्या स्थिति थी, जिसकी भीड़ ने हत्या कर दी थी? क्या आपने अपनी याचिका में इस पर प्रकाश डाला है?'' पीठ में न्यायमूर्ति अरविंद कुमार और न्यायमूर्ति संदीप मेहता भी शामिल थे। याचिकाकर्ता की ओर से पेश हुए अधिवक्ता निजाम पाशा ने माना कि याचिका में घटना का उल्लेख नहीं है और उन्होंने उस घटना की भी जाँच करने पर सहमति जताई।

मध्य प्रदेश के मामले में, ईद के त्यौहार के अवसर पर मांस ले जाने के आरोप में खंडवा में 10-12 लोगों के एक समूह ने दो लोगों की पिटाई की। अदालत ने कहा कि राज्य सरकार ने दो लोगों की पिटाई करने वाले लोगों के खिलाफ कोई कार्रवाई नहीं की। इसके बजाय, दोनों पर गाय का मांस ले जाने के लिए मध्य प्रदेश मवेशी संरक्षण अधिनियम के तहत मामला दर्ज किया गया।

पाशा ने हरियाणा का एक और उदाहरण दिया, जिसमें बताया गया कि किस तरह से राज्य घृणा अपराधों को नकारने की मुद्रा में हैं। उन्होंने हरियाणा के नूंह में हुई एक घटना का जिक्र किया, जब जनवरी 2023 में मवेशी तस्करी के संदेह में एक 22 वर्षीय युवक की कुछ लोगों ने पीट-पीटकर हत्या कर दी थी। राज्य ने शीर्ष अदालत में दाखिल अपने जवाब में बताया कि यह मृत्यु एक सड़क दुर्घटना का नतीजा थी, जिसमें पीड़ित की कार को एक टेंपो ने टक्कर मार दी थी।

पूनावाला मामले में दिए गए फैसले में निगरानी समूहों द्वारा भीड़ द्वारा की गई हिंसक घटनाओं पर ध्यान दिया गया और इसे अस्वीकार्य माना गया। जनहित याचिका की कार्यवाही में दिए गए फैसले में कहा गया, ''राज्य का यह पवित्र कर्त्तव्य है कि वह अपने नागरिकों को उपद्रवी तत्वों और सुनियोजित लिंचिंग और निगरानी समूहों के अपराधियों से पूरी ईमानदारी और सच्ची प्रतिबद्धता के साथ बचाए और ऐसी घटनाओं को रोकने की कोशिश करे, जो उसके कार्यों और योजनाओं में झलकनी चाहिए।''

वर्तमान में, चाहे जो भी कारण हो, समाज स्वयंभू सतर्कता विधि को ध्यान में रखकर या तो अल्पसंख्यक या समाज के कमजोर वर्ग को निशाना बनाता है। भारत के उच्चतम न्यायालय ने तहसीन पुनावाला बनाम भारत संघ के ऐतिहासिक मामले में भीड़भाड़ के मामलों से निपटने के लिए राज्य सरकारों को दिशा-निर्देश जारी किए, उच्चतम न्यायालय ने राज्य

सरकारों को आदेश दिया कि --

भीड़भाड़ की घटनाओं को रोकने के लिए उन्हें प्रत्येक जिले में वरिष्ठ पुलिस अधिकारियों को नामित करना चाहिए।

राज्य सरकारों से उन क्षेत्रों की पहचान करने को कहा गया जहाँ भीड़भाड़ की घटनाएँ होती हैं।

उच्चतम न्यायालय ने इस मामले में राज्य सरकारों से 'मॉब लिंचिंग' पीड़ित मुआवजा योजना तैयार करने को कहा।

उच्चतम न्यायालय ने डीजीपी को नोडल अधिकारियों को जिम्मेदारी सौंपने को कहा ताकि वे अशांति या भीड़ द्वारा हत्या की घटनाओं से निपटने के लिए रणनीति तैयार कर सकें।

उच्चतम न्यायालय ने सोशल मीडिया के दुरुपयोग पर विचार किया और माना कि इस प्लेटफॉर्म पर लोग भीड़ हिंसा को बढ़ावा देते हैं या भड़काते हैं, इसलिए माननीय कोर्ट ने ऐसे गैर-जिम्मेदाराना संदेशों को नियंत्रित करने और रोकने के लिए दिशा-निर्देश जारी किए। ऐसे लोगों के खिलाफ सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म का दुरुपयोग करने पर एफआईआर दर्ज करने को कहा।

मुख्य न्यायाधीश के नेतृत्व में जारी दिशा

निर्देशों की प्रभावशीलता के संबंध में माननीय दीपक मिश्रा, माननीय न्यायमूर्ति ए.एम. खानविलकर और माननीय न्यायमूर्ति डी.वाई. चंद्रचूड़ की पीठ ने जिला पुलिस विभागों के काम पर पूरी तरह भरोसा किया और पीठ ने इसे संज्ञान में लिया और यदि कोई भी पुलिस अधिकारी अपने दायित्वों को पूरा करने में सफल नहीं होता है तो उसे जानबूझकर की गई लापरवाही माना जाएगा और उचित कार्रवाई करने के निर्देश दिए।

माननीय न्यायालय ने माना कि मॉब लिंचिंग समाज के लिए एक गंभीर खतरा है, जिसका भारत जैसे बड़े और सच्चे लोकतांत्रिक राष्ट्र के लोकतंत्र को बनाने वाले बहुलवादी सामाजिक ताने-बाने पर नकारात्मक प्रभाव पड़ता है। विधि का शासन हर इंसान की गरिमा की गारंटी देता है और किसी व्यक्ति के अधिकारों का उल्लंघन करने की अनुमति नहीं देता है। भारतीय दंड संहिता में अभी तक इस अपराध के लिए कोई विशेष प्रावधान नहीं है, लेकिन उच्चतम न्यायालय ने इसका संज्ञान लिया है।

2011 में यह स्पष्ट रूप से माना गया कि आंतरिक अव्यवस्था को रोकने और सार्वजनिक व्यवस्था सुनिश्चित करने के लिए कदम उठाना राज्य की जिम्मेदारी है। संसद से सिफारिश की गई कि वह ऐसे कृत्यों को अपराध घोषित करे और इसके लिए पर्याप्त दंडात्मक प्रावधान बनाए।

अरुमुगन सेवराई के मामले में न्यायालय ने आदेश दिया है कि उन अधिकारियों के खिलाफ कार्रवाई की जाए जिन्होंने आरोपियों के खिलाफ उचित कार्रवाई नहीं की है। 2016 में उच्चतम न्यायालय ने स्वामी लक्ष्मणानंद और अन्य की हत्या के दौरान ओडिशा पुलिस द्वारा अपने दायित्व

का पालन करने और सुरक्षा प्रदान करने में विफलता की आलोचना की थी।

2019 में, भारतीय अत्याचार निवारण परिषद ट्रस्ट द्वारा दायर एक याचिका पर सुनवाई करते हुए उच्चतम न्यायालय ने न्यायाधीश रंजन गोगई और न्यायमूर्ति दीपक गुप्ता द्वारा नोटिस जारी किया गया था और भीड़ द्वारा हत्या के विषय पर एक नए विधि का मसौदा तैयार करने के लिए कहा गया था।

मॉब लिंचिंग के तरीके, निर्देश और क्रियान्वयन

मणिपुर 2018 में लिंचिंग के मुद्दे के खिलाफ एक उल्लेखनीय विधि पारित करने वाला पहला राज्य बन गया, जब उच्चतम न्यायालय ने इस तरह के भीड़ द्वारा की जाने वाली हत्याओं को रोकने के लिए दिशा-निर्देश जारी किए। यह सुप्रीम कोर्ट के दिशा-निर्देशों का पालन करता है और ऐसे अपराधों को नियंत्रित करने के लिए एक नोडल अधिकारी बनाता है, विशेष अदालतें बनाता है और सजा भी बढ़ाता है और यह लिंचिंग की व्याख्या करता है।

धर्म, नस्ल, जातीयता, लिंग, जन्म स्थान, भाषा, अवैध प्रथाएँ, यौन अभिविन्यास, राजनीतिक अभिविन्यास के आधार पर भीड़ द्वारा हिंसा या सहायता का कोई भी कार्य या श्रृंखला, चाहे वह ऐसे कृत्यों को रद्द करना हो, आरामदायक हो या नियोजित हो। जातीयता या किसी अन्य संबंधित आधार पर भी मुआवजा निर्धारित किया गया है

पश्चिम बंगाल (रोकथाम) विधेयक, 2019 में मृत्युदंड की सजा पाने वालों के लिए मृत्युदंड और किसी व्यक्ति को कारावास या तीन वर्ष से लेकर आजीवन कारावास तक के कठोर आजीवन कारावास का प्रावधान है।

राजस्थान लिंचिंग से सुरक्षा विधेयक 2019 में भीड़ द्वारा अपराध करने वालों को संज्ञेय, गैर-जमानती और गैर-समझौता योग्य अपराध के लिए आजीवन कारावास की सजा और 5 लाख रुपये तक का जुर्माना लगाया गया है। यह विधेयक सुप्रीम कोर्ट के दिशा-निर्देशों का पालन करता है और फास्ट ट्रैक कोर्ट बनाता है।

कर्नाटक सरकार ने सितंबर 2019 में एक सर्कुलर नोडल अधिकारी और सहायक नियुक्त किया और सुप्रीम कोर्ट के अनुशासनात्मक कार्यों के निर्देशों का बारीकी से पालन किया। इसलिए, राज्यों द्वारा सुप्रीम कोर्ट के आदेशों का अनुपालन दिशा-निर्देशों के अनुरूप है।

प्रतिकरात्मक न्यायशास्त्र का औचित्य

पीड़ितों को प्रतिकर देने के विधि का एक मान्यता प्राप्त सिद्धांत है जिसे सामान्य सिविल न्यायालयों के माध्यम से प्रवर्तन किया जाता है। पीड़ितों के विधि के अंतर्गत, यह ध्यान रखना महत्त्वपूर्ण है कि निर्णय में तीन दिशा-निर्देश हैं -- जैसे निवारक, उपचारात्मक और दंडात्मक। इस अपराध को इसके प्रारंभिक चरण में ही पंगु बनाने के लिए निवारक भाग पर बहुत अधिक जोर दिया जाना चाहिए। माननीय न्यायालय द्वारा यह भी सुझाव दिया गया है कि ऐसे अपराधों को करने या उकसाने की संभावना वाले विषयों पर खुफिया रिपोर्टों के लिए एक विशेष टास्क

फोर्स का गठन करना उचित होगा। राज्यों के पुलिस महानिदेशक और गृह विभाग के सचिव को निर्देश दिया जाना चाहिए कि वे कम से कम एक बार राज्य पुलिस के सभी नोडल अधिकारियों और खुफिया प्रमुखों के साथ नियमित बैठक करें। इसके बाद, यह समीक्षा भी आवश्यक है कि क्या ऐसी बैठकें वास्तविकता बन गई हैं और इसके क्या परिणाम हैं? यदि उत्तर सकारात्मक है, तो यह हमें इस अपराध को नियंत्रित करने के लिए प्रेरित कर सकता है क्योंकि भीड़ द्वारा हत्या से संबंधित अपराध की दर बढ़ रही है।

पीड़ितों को मुआवजा देना विधि का एक मान्यता प्राप्त सिद्धांत है जिसे सामान्य सिविल न्यायालयों के माध्यम से प्रवर्तन किया जाता है। पीड़ितों के विधि के तहत, पीड़ित व्यक्ति या संपत्ति को हुए नुकसान के लिए मुआवजे का दावा कर सकते हैं। पीड़ितों को सिविल न्यायालयों के माध्यम से क्षतिपूर्ति या मुआवजे के लिए डिग्री प्राप्त करने में दशकों लग जाते हैं, जिसके परिणामस्वरूप उन्हें बहुत कठिनाई होती है।

इस तरह के अपराध को नियंत्रित करने के सबसे प्रभावी तरीकों में से एक वरिष्ठ वकील श्रीमती इंदिरा जयसिंह ने सुझाया था। उन्होंने संवेदनशील क्षेत्रों में पुलिस गश्त का प्रस्ताव रखा। पुलिस द्वारा ऐसी कोई पहल नहीं की गई है क्योंकि ऐसी घटनाएँ हुई हैं जिसमें गश्त करने वाली गाड़ियों द्वारा भीड़ को अनियंत्रित होने से रोका गया। कई मामलों में, पीड़ित के परिवार के सदस्यों और अपराध के गवाहों ने बताया है कि पुलिस के आने में देरी पीड़ित की मृत्यु का एक बड़ा कारण थी।

न्यायालय ने संसद को भीड़ को विशेष अपराध बनाने और इसके लिए पर्याप्त सजा देने की सिफारिश भी की। न्यायालय के एक विशेष विधि के प्रति झुकाव के बावजूद संसद में विधि बनाने के लिए जिम्मेदार केंद्र ने न्यायालय की सिफारिश को प्रवर्तन नहीं किया। केंद्र ने विधि की प्रकृति पर विचार करने के उद्देश्य से मंत्रियों का एक समूह (समूह) गठित किया। ऐसे नीरस घटनाक्रमों के आलोक में विशेष विधि के निर्माण का विचार वास्तविकता से कोसों दूर है।

तहसीन एस. पुनावाला के मामले में अमेरिकी नागरिक अधिकार आंदोलन के प्रस्तावक मार्टिन लूथर किंग जूनियर और अमेरिकी न्यायशास्त्र लिबर्टी आदि के विभिन्न मनभावन साहित्य का हवाला दिया, लेकिन यह अपने फैसले में भीड़ की एक ठोस और यथार्थवादी परिभाषा प्रदान करने में विफल रहा जिससे संसद को इस अपराध की सीमा, कार्यप्रणाली और सजा के बारे में अंतहीन बहस के लिए खुला छोड़ दिया गया। इस बहुप्रतीक्षित परिभाषा के अभाव में, भीड़ अपराध से सामान्य तरीके से निपटा जा रहा है क्योंकि यह भारतीय दंड संहिता (आईपीसी), 1860 की धाराओं 302 (हत्या), 307 (हत्या का प्रयास), 323 (स्वैच्छिक चोट पहुँचाना), 147 (दंगा), 148 (घातक हथियारों से लैस होना) और 149 (गैरविधिक सभा) के अंतर्गत आंशिक रूप से कवर किया गया था

केंद्र और राज्य सरकारों की विफलता के संदर्भ में माननीय उच्चतम न्यायालय के दिशा-निर्देशों की भी उपेक्षा की गई है। किसी भी प्रकार की हिंसा और भीड़ द्वारा की गई

हिंसा विधि के तहत गंभीर परिणाम लाएगी। मामले में निष्कर्ष के रूप में सिफारिश की गई थी कि लिंचिंग के लिए एक अलग अपराध बनाया जाए, हालाँकि अभी तक एनसीआरबी (राष्ट्रीय अपराध रिकॉर्ड ब्यूरो) ने न तो 'मॉब लिंचिंग' को अपराध की एक अलग शाखा के रूप में मान्यता दी है और न ही ऐसा करता है, बल्कि अलग-अलग आँकड़े रखता है। इस बहस के बीच, भारतीय दंड संहिता, 1860 ("आईपीसी") को प्रतिस्थापित करने के लिए प्रस्तावित भारतीय न्याय (द्वितीय) संहिता, 2023 के तहत भीड़ द्वारा हत्या को अपराध घोषित करना एक बहुप्रतीक्षित कदम है।

भारतीय न्याय संहिता, 2023 के तहत मॉब-लिंचिंग

भारतीय न्याय संहिता को 11 अगस्त 2023 को लोक सभा में पेश किया गया था। विधेयक के प्रवर्तन होने पर यह आईपीसी, 1860 को निरस्त कर देगा। इसे फिलहाल विचार के लिए स्थायी समिति के पास भेजा गया है।

अन्य परिवर्तनों के अलावा, भारतीय न्याय (द्वितीय) संहिता के खंड 103 (2) में भीड़ द्वारा हत्या के लिए दंड का प्रावधान है। इसमें कहा गया है, " जब पाँच या उससे अधिक व्यक्तियों का समूह मिलकर नस्ल, जाति या समुदाय, लिंग, जन्म स्थान, भाषा, व्यक्तिगत विश्वास या किसी अन्य आधार पर हत्या करता है, तो ऐसे समूह के प्रत्येक सदस्य को मृत्युदंड या आजीवन कारावास या कम से कम सात वर्ष की अवधि के कारावास की सजा दी जाएगी और जुर्माना भी देना होगा।"

इसके अलावा, धारा 117 (स्वेच्छा से गंभीर चोट पहुँचाना) के उप-धारा 4 में प्रावधान है, " जब किसी व्यक्ति को उसकी जाति, नस्ल, लिंग, जन्म स्थान, भाषा, व्यक्तिगत विश्वास या किसी अन्य आधार पर पाँच या अधिक व्यक्तियों के समूह द्वारा गंभीर चोट पहुँचाई जाती है, तो ऐसे समूह का प्रत्येक सदस्य गंभीर चोट पहुँचाने के अपराध का दोषी होगा और उसे किसी एक अवधि के लिए कारावास से दंडित किया जाएगा, जिसे सात वर्ष तक बढ़ाया जा सकता है और वह जुर्माने का भी उत्तरदायी होगा।"

यह ध्यान देने योग्य है कि इन प्रावधानों को "हत्या" और "गंभीर चोट" के पूर्ववर्ती प्रावधानों के साथ जोड़ने से इन अपराधों की गंभीरता का संकेत मिलता है, जो क्रमशः हत्या और गंभीर चोट के बराबर हैं, साथ ही लक्षित भीड़-हिंसा में शामिल "घृणा" के तत्व को भी उचित महत्त्व दिया गया है।

वहीं, भारतीय न्याय (द्वितीय) संहिता की धारा 103(1) के तहत हत्या के लिए सजा मृत्यु या आजीवन कारावास और जुर्माना है, जबकि धारा 103(2) के तहत भीड़ द्वारा हत्या के लिए सजा मृत्यु या आजीवन कारावास और जुर्माना है । कोई यह तर्क दे सकता है कि 7 वर्ष की कैद अपराध की जघन्य प्रकृति के अनुरूप नहीं हो सकती है। साथ ही, यह अदालतों को भीड़ द्वारा की गई कार्रवाई में आरोपी की भूमिका के अनुसार सजा देने की लचीलापन प्रदान करता है।

यह भी ध्यान देने योग्य है कि भारतीय न्याय (द्वितीय) संहिता की धारा 103(2) के तहत मॉब लिंचिंग के रूप में अर्हता प्राप्त करने के लिए मसूदा की पिछली कोशिश की धारा 2(डी) के तहत 2 या अधिक व्यक्तियों की सीमा के विपरीत, कृत्य में 5 या अधिक व्यक्तियों का शामिल होना आवश्यक है। इसके अलावा, नया प्रावधान लगाए जाने वाले जुर्माने की न्यूनतम राशि प्रदान नहीं करता है। पहले पेश किए गए विधेयकों में, जैसे झारखंड भीड़ हिंसा और भीड़ हत्या रोकथाम विधेयक की धारा 8(3) में 25 लाख रुपये तक के जुर्माने का प्रावधान किया गया था। भीड़ हत्या के संबंध में अधिकारियों के कर्त्तव्यों और दायित्वों के बारे में प्रावधानों का कोई उल्लेख नहीं है। इसी तरह, पीड़ित मुआवजा योजना और पीड़ित संरक्षण का कोई उल्लेख नहीं है, जो विशेष रूप से भीड़ हत्या के परिणामस्वरूप गंभीर चोट के लिए प्रासंगिक है। एक दंड संहिता के दायरे को देखते हुए, तहसीन पूनावाला और अन्य विशेष विधेयकों के तहत परिकल्पित भीड़ हत्या की रोकथाम की दिशा में कदम भी भारतीय न्याय संहिता में मौजूद नहीं हैं।

इसके अलावा, भीड़ द्वारा की जाने वाली हत्या को घृणा अपराध के रूप में वर्गीकृत करने की कई माँगों के बावजूद, नई दंड संहिता इस पहलू पर चुप है। ये कृत्य न केवल व्यक्तियों के विरुद्ध हैं, बल्कि समाज के विरुद्ध भी हैं क्योंकि ये एक विशेष समूह के विरुद्ध पूर्वाग्रह से प्रेरित हैं। घृणा अपराध असहिष्णुता, वैचारिक प्रभुत्व और पूर्वाग्रह का परिणाम हैं जिन्हें बर्दाश्त नहीं किया जाना चाहिए। लिंचिंग को घृणा अपराध के अंतर्गत रखने का सक्रिय कदम लिंचिंग के खतरे का अधिक गंभीरता से मुकाबला करने में मदद करेगा।

चुनौतियाँ और समाधान

मानवाधिकारों का उल्लंघन : भीड़ द्वारा हत्या से किसी व्यक्ति के मूलभूत मानवाधिकारों का उल्लंघन होता है। हर व्यक्ति को जीवन का अधिकार है और इसे छीनना एक गंभीर अपराध है। भीड़ की हिंसा अक्सर बिना किसी उचित प्रक्रिया के होती है, जो न्याय के सिद्धांतों के खिलाफ है।

सामाजिक असुरक्षा : भीड़ की हिंसा समाज में भय और असुरक्षा की भावना को बढ़ाती है। लोग एक-दूसरे पर विश्वास खो देते हैं, और यह संदेह की संस्कृति को बढ़ावा देता है। इसके परिणामस्वरूप, सामाजिक ताने-बाने में दरार आ जाती है।

विधिक ढाँचे की कमी : कई स्थानों पर विधियों की कमी और उन पर अमल न होना भीड़ हिंसा को बढ़ावा देता है। पुलिस और न्यायालयों की प्रक्रिया धीमी और जटिल होती है, जिससे पीड़ितों को न्याय प्राप्त करने में मुश्किल होती है।

सामाजिक ध्रुवीकरण : भीड़ द्वारा हत्या अक्सर जातीय, धार्मिक या सामाजिक भेदभाव को बढ़ावा देती है। जब किसी विशेष समूह को लक्षित किया जाता है, तो इससे समाज में विभाजन और टकराव की स्थिति उत्पन्न होती है।

मीडिया और सोशल मीडिया का प्रभाव : आज के डिजिटल युग में, मीडिया और सोशल

मीडिया भीड़ को भड़काने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। गलत सूचना, पूर्वाग्रह और सनसनीखेज समाचार घटनाओं को और बिगाड़ सकते हैं। इससे समाज में भ्रम की स्थिति उत्पन्न होती है।

शिक्षा और जागरूकता की कमी : समाज में न्याय और मानवाधिकारों के प्रति जागरूकता की कमी भी एक महत्त्वपूर्ण चुनौती है। यदि लोग अपने अधिकारों और विधियों के बारे में नहीं जानते, तो वे आसानी से भीड़ का हिस्सा बन सकते हैं।

समाधान

विधिक सुधार : विधियों को सख्त बनाना और उन्हें प्रभावी ढंग से प्रवर्तन करना आवश्यक है। सरकारों को भीड़ हिंसा के मामलों में कठोर दंड का प्रावधान करना चाहिए, जिससे लोगों में डर पैदा हो सके। इसके अलावा, विधियों को समय-समय पर अद्यतन करना चाहिए ताकि वे समाज की बदलती जरूरतों को पूरा कर सकें।

जन जागरूकता : समाज में जागरूकता फैलाने के लिए विभिन्न कार्यक्रमों और अभियानों का आयोजन करना चाहिए। लोगों को यह समझाना चाहिए कि न्याय का अधिकार हर व्यक्ति का है और व्यक्तिगत प्रतिशोध से बचना चाहिए। इसके लिए स्कूलों और कॉलेजों में विशेष शिक्षा कार्यक्रम भी आयोजित किए जा सकते हैं।

सामुदायिक प्रयास : समुदायों को एकजुट करने और संवाद को बढ़ावा देने के लिए पहल करनी चाहिए। स्थानीय नेताओं, सामाजिक संगठनों और धार्मिक समुदायों को शामिल करके, एक सशक्त नेटवर्क बनाया जा सकता है, जो भीड़ हिंसा के खिलाफ एकजुट हो सके।

पुलिस और प्रशासनिक सुधार : पुलिस बल को बेहतर प्रशिक्षण देना और उन्हें यह समझाना कि उनकी भूमिका केवल अपराधियों को पकड़ने की नहीं, बल्कि समाज में सुरक्षा बनाए रखने की भी है। पुलिस को भीड़ की हिंसा को रोकने के लिए तत्पर रहना चाहिए। इसके लिए उन्हें विशेष प्रशिक्षण और संसाधन प्रदान किए जाने चाहिए।

मीडिया की जिम्मेदारी : मीडिया को अपनी रिपोर्टिंग में जिम्मेदार होना चाहिए। उन्हें ध्यान रखना चाहिए कि वे गलत सूचना या पूर्वाग्रह से बचें। समाचार की रिपोर्टिंग में संतुलन और निष्पक्षता जरूरी है। इसके लिए मीडिया संगठनों को आंतरिक दिशा-निर्देश स्थापित करने चाहिए।

प्रतिपूरक न्यायशास्त्र का पुनर्विचार : प्रतिपूरक न्यायशास्त्र को समझने और इसके प्रभावी कार्यान्वयन की आवश्यकता है। यह महत्त्वपूर्ण है कि न्याय प्रक्रिया न केवल अपराधियों को दंडित करे, बल्कि पीड़ितों को भी न्याय दिलाने में सहायक हो। पीड़ितों की आवाज को सुनना और उन्हें सहायता प्रदान करना आवश्यक है।

शिक्षा और जागरूकता कार्यक्रम : समाज के विभिन्न स्तरों पर शिक्षा के माध्यम से मानवाधिकारों और न्याय के सिद्धांतों को प्रचारित करना चाहिए। इसके लिए कार्यशालाएँ, सेमिनार, और स्थानीय स्तर पर संवाद कार्यक्रम आयोजित किए जा सकते हैं।

सांस्कृतिक पुनर्संरचना : एक स्वस्थ समाज की स्थापना के लिए सांस्कृतिक पुनर्संरचना की आवश्यकता है। लोगों को अहिंसा, सहिष्णुता और सह-अस्तित्व के मूल्यों का महत्त्व समझाना चाहिए। यह सुनिश्चित करने के लिए शैक्षणिक संस्थानों, धार्मिक समूहों और सामाजिक संगठनों को एक साथ मिलकर कार्य करना चाहिए।

निष्कर्ष

इस तरह के मामले विधि प्रवर्तन एजेंसियों में विश्वास को खत्म करते हैं, जो भारत जैसे विकासशील देशों के लिए अच्छा नहीं है। यह पीड़ितों और उनके परिवार के सदस्यों को न्याय दिलाने की भारत की प्रणाली में विश्वसनीयता की कमी को दर्शाता है। एक प्रसिद्ध कहावत है "जो लोग अतीत से नहीं सीखते हैं वे खुद को दोहराते हैं।" यदि भारत न्याय, मानवाधिकारों और विधि के शासन के प्रति अपनी प्रतिबद्धता को बनाए रखना चाहता है, तो उसे शिक्षा और सामाजिक जागरूकता को मजबूत करने, विवेक पैदा करने और विधिक तंत्र को मजबूत करने पर ध्यान केंद्रित करना चाहिए।

मॉब लिंचिंग को एक अलग अपराध के रूप में अपराध बनाना समाज में बढ़ती समस्या की पहचान और मान्यता की दिशा में एक कदम है। हालाँकि, जैसा कि बताया गया है, भारतीय न्यायिक संहिता में ऐसे कृत्यों को रोकने के लिए आवश्यक ढाँचे का अभाव है। दंड मॉब लिंचिंग के खिलाफ लड़ाई का केवल एक पहलू है, जो कृत्य के बाद आता है। ऐसी किसी भी घटना को होने से पहले रोकने के लिए रोकथाम और सख्त सतर्कता बहुत जरूरी है। तहसीन पूनावाला में निर्धारित दिशा-निर्देश और पहले पेश किए गए विधेयकों के प्रावधान इस संबंध में अपने दृष्टिकोण में अधिक जटिल थे। राष्ट्रीय दंड संहिता की सीमाओं को देखते हुए, शायद मासुका और अन्य राज्य विधेयकों में परिकल्पित एक विशेष विधि सभी स्तरों पर मॉब लिंचिंग से निपटने में अधिक प्रभावी हो सकता है, यानी निवारक, दंडात्मक और उपचारात्मक।

❑

संदर्भ

1. https://www.mha.gov.in/sites/default/files/lynching_240720181010%20.pdf
2. https://timesofindia.indiatimes.com/city/bengaluru/reading-preamble-a-must-in-karnataka-schools/articleshow/103700682.cms?from=mdr
3. https://indianexpress.com/article/india/lynching-and-hate-crime-murder-in-penal-code-punishment-7-yrs-to-death-8888623/
4. https://blog.finology.in/Legal-news/mob-lynching
5. https://www.aljazeera.com/news/2023/9/28/muslim-man-lynched-in-india-for-taking-a-banana-at-hindu-temple-event

डॉ. विपिन कुमार सिंह

भारत में कंपनी विधि का अमृत काल

भारतीय कंपनी विधि, विशेष रूप से कंपनी अधिनियम, 2013 भारतीय कॉर्पोरेट जगत के संचालन के लिए प्रमुख कानूनी ढाँचा है। इसे देश में कंपनियों की स्थापना, प्रबंधन, और संचालन के लिए दिशा-निर्देश प्रदान करने के उद्देश्य से लागू किया गया था। हाल के वर्षों में, सरकार ने कॉर्पोरेट गवर्नेंस, व्यापार करने में आसानी (ईज आफ डूईंग बिजनेस), और नवाचार को बढ़ावा देने के लिए इस अधिनियम में कई महत्त्वपूर्ण संशोधन किए हैं। इसके साथ ही, भारत सरकार ने '**अमृत काल**' की अवधारणा प्रस्तुत की है, जिसका उद्देश्य अगले 25 वर्षों में भारत को एक प्रमुख वैश्विक आर्थिक शक्ति के रूप में उभरने में मदद करना है। इस संदर्भ में, कंपनी विधि का भी महत्त्वपूर्ण स्थान है, जो देश के आर्थिक विकास के मार्ग को समृद्ध करेगा।

(1) अमृत काल

अमृत काल का अर्थ है एक स्वर्णिम कालखंड, जिसे भारतीय विकास के इतिहास में एक विशेष स्थान प्राप्त होगा। 2022 में भारत ने अपनी स्वतंत्रता के 75 वर्ष पूरे किए, जिसे 'आजादी का अमृत महोत्सव' कहा गया। इस महोत्सव के तहत, 2047 तक भारत को एक आत्मनिर्भर, सशक्त, और वैश्विक महाशक्ति के रूप में स्थापित करने का लक्ष्य रखा गया है। अमृत काल वह काल है जिसमें भारत में आर्थिक, सामाजिक, और तकनीकी बदलावों के माध्यम से समृद्धि और विकास की दिशा में ठोस कदम उठाए जाएँगे। इस विकास पथ पर कंपनी विधि का भी महत्त्वपूर्ण योगदान है। कंपनी अधिनियम, 2013 के तहत भारतीय कॉर्पोरेट गवर्नेंस को और अधिक सशक्त, पारदर्शी, और जवाबदेह बनाया गया है, ताकि कंपनियों के संचालन में नैतिकता, निवेशकों की सुरक्षा, और व्यावसायिक विकास को प्राथमिकता दी जा सके।

(2) भारतीय कंपनी विधि का विकास

भारत में कंपनी विधि का इतिहास ब्रिटिश औपनिवेशिक शासन के दौरान शुरू हुआ और तब से विभिन्न चरणों से गुजरा है। इसका विकास भारतीय व्यापारिक संगठनों को नियंत्रित करने और संचालित करने के उद्देश्य से हुआ। यहाँ कंपनी विधि के इतिहास की

मुख्य विशेषताएँ दी जा रही हैं --

1. **ईस्ट इंडिया कंपनी का प्रारंभिक चरण** (**1600-1858**) : ब्रिटेन की ईस्ट इंडिया कंपनी ने 1600 में व्यापार के उद्देश्य से भारत में प्रवेश किया और धीरे-धीरे भारत के विभिन्न हिस्सों में व्यापारिक नियंत्रण स्थापित किया। इस समय तक, भारत में कंपनी कानून का कोई संगठित ढाँचा नहीं था। सभी व्यापारिक गतिविधियाँ ब्रिटिश कानून और स्थानीय नियमों के मिश्रण से संचालित होती थीं। 1858 में, ईस्ट इंडिया कंपनी के शासन को समाप्त कर ब्रिटिश सरकार ने भारत का प्रत्यक्ष प्रशासन अपने हाथ में ले लिया।
2. **कंपनी अधिनियम, 1850** : यह पहला कानून था जिसे ब्रिटिश भारत में व्यापारिक कंपनियों के गठन और उनके संचालन को विनियमित करने के लिए लागू किया गया था। इसे मुख्य रूप से ब्रिटिश कंपनी कानून (ज्वाइंट स्टॉक कंपनीज ऐक्ट, 1844) से प्रेरित होकर लागू किया गया था। इसमें कंपनियों के पंजीकरण, उनके लेखा-पत्र, और शेयरधारकों के अधिकारों पर जोर दिया गया।
3. **कंपनी अधिनियम, 1866** : इस अधिनियम के तहत कंपनियों के पंजीकरण की प्रक्रिया और अधिक संगठित और औपचारिक बना दी गई। इस अधिनियम में संयुक्त स्टॉक कंपनियों और सीमित देयता (लिमिटेड लायबिलिटी) की धारणा को मान्यता दी गई।
4. **कंपनी अधिनियम, 1913** : ब्रिटिश भारत में इस अधिनियम ने कंपनी कानून को और व्यापक रूप से संचालित किया। इसमें कंपनियों के गठन, कामकाज, और परिसमापन से संबंधित विस्तृत प्रावधान थे। यह अधिनियम भारत में आजादी के बाद भी कई सालों तक प्रभावी रहा।
5. **स्वतंत्र भारत और कंपनी अधिनियम, 1956** : भारत की आजादी के बाद, 1956 में कंपनी अधिनियम, 1956 लागू किया गया। यह कानून ब्रिटिश कानून पर आधारित था, लेकिन इसमें भारतीय व्यापारिक आवश्यकताओं और विशेषताओं को ध्यान में रखकर संशोधन किया गया। इस अधिनियम ने कंपनियों के पंजीकरण, निदेशकों की नियुक्ति, कंपनी की वित्तीय रिपोर्टिंग, और शेयरधारकों के अधिकारों के संबंध में व्यापक प्रावधान किए। यह अधिनियम दशकों तक भारत में कंपनियों की गतिविधियों को नियंत्रित करने वाला प्रमुख कानून रहा।
6. **कंपनी अधिनियम, 2013** : वर्तमान में कंपनी अधिनियम, 2013 भारतीय कंपनी संचालन के लिए प्रमुख कानून है, जिसे 1956 के अधिनियम की जगह लिया गया। इस अधिनियम ने कॉर्पोरेट गवर्नेंस में सुधार, लेखा प्रक्रिया में पारदर्शिता, और निवेशकों की सुरक्षा को प्राथमिकता दी। इस अधिनियम को समय-समय पर संशोधित किया गया है ताकि यह आधुनिक व्यापारिक आवश्यकताओं के अनुरूप बना रहे।

कंपनी अधिनियम, 2013 के प्रमुख प्रावधान : कंपनी अधिनियम, 2013 भारतीय

कॉर्पोरेट जगत के लिए एक विस्तृत और गहन विधिक ढाँचा प्रदान करता है। इसके कुछ प्रमुख प्रावधान इस प्रकार हैं --

(अ) **कॉर्पोरेट गवर्नेंस में सुधार :** कंपनी अधिनियम, 2013 का उद्देश्य कंपनियों के संचालन में नैतिकता, पारदर्शिता, और जवाबदेही को बढ़ावा देना है। यह अधिनियम कंपनियों में निदेशकों, ऑडिटर्स, और शेयरधारकों की जिम्मेदारियों और अधिकारों को स्पष्ट रूप से परिभाषित करता है। इसके तहत निम्नलिखित सुधार किए गए हैं --

निदेशकों की स्वतंत्रता : अधिनियम के तहत लिस्टेड कंपनियों को अपने बोर्ड में स्वतंत्र निदेशकों को शामिल करना आवश्यक है।

महिला निदेशक : धारा 149(1) के तहत, कुछ श्रेणियों की कंपनियों के लिए कम-से-कम एक महिला निदेशक का होना अनिवार्य है। यह लिंग समानता को बढ़ावा देने का प्रयास है।

अंकेक्षण और लेखा प्रक्रिया में सुधार : अधिनियम कंपनियों के वित्तीय अंकेक्षण को पारदर्शी बनाने के लिए कड़े नियम निर्धारित करता है। इसका उद्देश्य लेखा धोखाधड़ी और अनियमितताओं को रोकना है।

(आ) **निवेशकों की सुरक्षा :** कंपनी अधिनियम, 2013 का उद्देश्य निवेशकों के हितों की रक्षा करना है। इसके तहत कंपनियों को नियमित रूप से अपने वित्तीय विवरण साझा करना, पारदर्शी तरीके से लाभांश का वितरण करना, और निवेशकों को कंपनी की प्रगति और योजनाओं के बारे में जानकारी देना अनिवार्य है। इसके साथ ही, कंपनी अधिनियम के तहत कंपनियों को धोखाधड़ी या अन्य अनियमितताओं के लिए कड़े दंड का सामना करना पड़ सकता है।

(इ) **नवाचार और स्टार्टअप्स का समर्थन :** अधिनियम ने नए स्टार्टअप्स और छोटे उद्यमों के लिए एक अनुकूल वातावरण तैयार किया है। इसके तहत नए व्यवसायों के पंजीकरण की प्रक्रिया को सरल किया गया है, जिससे व्यापार शुरू करना आसान हो गया है। स्टार्टअप्स को प्रोत्साहित करने के लिए सरकार ने कई योजनाएँ और टैक्स छूट प्रदान की हैं, जिससे यह क्षेत्र तेजी से बढ़ रहा है।

(ई) **कारपोरेट सामाजिक दायित्व :** कंपनी अधिनियम, 2013 के तहत, कुछ कंपनियों के लिए कॉर्पोरेट सामाजिक उत्तरदायित्व के तहत सामाजिक कल्याण के कार्यों में निवेश करना अनिवार्य है। इसका उद्देश्य समाज के वंचित वर्गों के विकास में योगदान देना और कंपनियों को उनके सामाजिक उत्तरदायित्वों के प्रति जागरूक बनाना है। कंपनी अधिनियम, 2013 के पूर्व कंपनियों पर ऐसा कोई अनिवार्य उत्तरदायित्व नहीं था फिर भी बहुत-सी कंपनियाँ इन उत्तरदायित्वों का स्वेच्छया निर्वहन करती थी। स्वेच्छया निर्वहन का परिणाम यह होता था कि यदि वे चाहें तो ऐसे दायित्वों का निर्वहन करें अथवा न करें। परिणाम यह होता था कि कंपनियाँ पर्याप्त लाभार्जन के बावजूद आवश्यक सामाजिक उत्तरदायित्वों का निर्वहन नहीं करती

थी। इन्हीं उद्देश्यों को ध्यान में रखकर प्रथम बार कंपनियों के लिए कारपोरेट सामाजिक दायित्व को भारत में विधानमंडल द्वारा कंपनी अधिनियम, 2013 की धारा 135 में अधिनियम के माध्यम से अनिवार्य किया गया है। अनुसूची 7 में उन कार्यकलापों को शामिल किया गया है जो सीएसआर के अधीन चलाए जा सकते हैं। कंपनी (कारपोरेट सामाजिक दायित्व नीति) नियम, 2014 कंपनियों द्वारा अधिनियम के सीएसआर उपबंधों के अनुपालन की रीति विहित करता है। कारपोरेट सामाजिक दायित्व को कंपनी अधिनियम, 2013 की धारा 135 की उपधारा (3) को अधिनियम की अनुसूची 7 के साथ ही पढ़ा जाना चाहिए।

अनुसूची 7 में निम्नलिखित विषय सम्मिलित हैं जो ऐसी कंपनियों द्वारा उनके कॉर्पोरेट सामाजिक उत्तरदायित्व नीतियों में शामिल हो सकती हैं --

(1) भूख, निर्धनता और कुपोषण का उन्मूलन, स्वास्थ्य संबंधी देखभाल जिसके अंतर्गत निवारक स्वास्थ्य संबंधी देखभाल भी है, तथा स्वच्छता का संवर्धन जिसके अंतर्गत स्वच्छता के संवर्धन हेतु केंद्रीय सरकार द्वारा स्थापित स्वच्छ भारत कोश में अंशदान भी है और सुरक्षित पेय जल उपलब्ध कराना;

(2) शिक्षा जिसमें विशेष शिक्षा और विशेषत : बालकों, स्त्रियों, वयोवृद्धों, अन्य रूप से समर्थ व्यक्तियों के बीच व्यावसायिक कौशल बढ़ाने संबंधी नियोजन और जीविका की बढ़ोत्तरी संबंधी परियोजनाएँ का संवर्धन;

(3) लैंगिक समता, स्त्री सशक्तीकरण का संवर्धन, स्त्रियों और अनाथों के लिए गृहों और छात्रावासों का गठन, वरिष्ठ नागरिकों के लिए वृद्धाश्रमों, दैनिक देखरेख केंद्रों का गठन और ऐसी अन्य सुविधाएँ तथा सामाजिक और आर्थिक रूप से पिछड़े समूहों द्वारा सामना की जाने वाली असमानता में कमी लाने के लिए उपाय करना;

(4) पर्यावरणीय संपोषण, पारिस्थितिकीय संतुलन, वनस्पति जीव-जन्तु का संरक्षण, पशु कल्याण, कृषि वानिकी, प्राकृतिक संसाधनों का संरक्षण सुनिश्चित करना तथा मृदा, वायु और जल की क्वालिटी बनाए रखना, ''जिसके अंतर्गत गंगा नदी के संरक्षण के लिए केंद्रीय सरकार द्वारा स्थापित गंगा सफाई कोश में अंशदान भी है'';

(5) राष्ट्रीय विरासत, कला और संस्कृति का संरक्षण, जिसमें भवनों और ऐतिहासिक महत्ता के स्थल और कलाकृतियाँ भी सम्मिलित हैं, सार्वजनिक पुस्तकालयों का गठन करना, पारंपरिक कलाओं और हस्तशिल्पों का संवर्धन और विकास;

(6) सशस्त्र बलों के सेवानिवृत्त सैनिकों, योद्धाओं प्रभावी विधवाएँ और उनके आश्रितों के फायदे के लिए उपाय;

(7) ग्रामीण खेलकूद, राष्ट्रीय स्तर पर मान्यता प्राप्त खेलकूद, ओलंपिक खेलकूद और ओलंपिक खेल कूद के संवर्धन के लिए प्रशिक्षण देना;

(8) प्रधानमंत्री राष्ट्रीय राहत निधि या केंद्रीय सरकार द्वारा अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातियों, अन्य पिछड़े वर्गों, अल्पसंख्यकों, स्त्रियों के सामाजिक आर्थिक विकास और

राहत के लिए जन कल्याण के लिए गठित की गई किसी अन्य निधि में अभिदाय;

(9) शैक्षणि संस्थान, जिन्हें केंद्रीय सरकार द्वारा अनुमोदित किया गया है, के भीतर अवस्थित प्रौद्योगिकी इंक्यूबेटरों के लिए प्रदान किए गए अभिदाय या निधियाँ;

(10) ग्रामीण विकास की परियोजनाएँ;

(11) स्लम क्षेत्र विकास ('स्लम क्षेत्र' से तात्पर्य केंद्रीय या राज्य सरकार या किसी अन्य सक्षम प्राधिकारी द्वारा तत्समय विधि के अधीन इस प्रकार घोषित कोई क्षेत्र अभिप्रेत है।)

(उ) **एकल व्यक्ति कंपनी :** एकल व्यक्ति कंपनी की संकल्पना एक नए विकास उद्यम निकाय के रूप में कंपनी अधिनियम, 2013 की धारा 3(1)(ग) के साथ पठित धारा 2(62) के अधीन प्रारंभ की गई है। कंपनी अधिनियम, 2013 की धारा 2(62) क अनुसार, ''एक व्यक्ति कंपनी से ऐसी कंपनी अभिप्रेत है जिसमें सदस्य के रूप में केवल एक व्यक्ति है।'' अर्थात् वह कंपनी जिसका एक ही सदस्य है और एक अंशधारक की 100 प्रतिशत अंशधारिका (शेयर होल्डिंग) हो, एक व्यक्ति कंपनी कही जाएगी।

अधिनियम के अंतर्गत केवल एक नैसर्गिक व्यक्ति जो भारत का नागरिक हो तथा भारत में उस समय से पूर्व कैलेण्डर वर्ष में कम-से-कम 182 दिन से निवास कर रहा हो, ही कंपनी का सदस्य या नामनिर्देशिती (नामिनी) हो सकता है। अवयस्क सदस्य अथवा नामनिर्देशिती (नामिनी) नहीं हो सकता है। इसका तात्पर्य यह है कि विधिक व्यक्ति जैसे कंपनी, सोसायटी या अन्य निगम एक व्यक्ति कंपनी नहीं बना सकती क्योंकि यह सभी नैसर्गिक व्यक्ति नहीं हैं। साथ ही साथ एक अनिवासी भारतीय या विदेशी नागरिक एक व्यक्ति कंपनी नहीं बना सकते हैं और एकल व्यक्ति कंपनी का एक अंशधारक सिर्फ एक व्यक्ति कंपनी का ही अंशधारक हो सकता है। एक अंशधारक दो एकल व्यक्ति कंपनी में अंशधारक नहीं हो सकता। एकल व्यक्ति कंपनी भी एक प्राइवेट लिमिटेड कंपनी होती है किंतु ऐसी प्राइवेट लिमिटेड कंपनी के नाम के नीचे कोष्ठक में ओ.पी.सी./एकल व्यक्ति कंपनी लिखना उसी प्रकार अनिवार्य है, जिस प्रकार सीमित दायित्व कंपनी के रूप में पब्लिक कंपनी के नाम के अंत में 'लिमिटेड' एवं प्राइवेट कंपनी के नाम के अंत में 'प्राइवेट लिमिटेड' लिखना अनिवार्य है।

एक प्राइवेट लिमिटेड कंपनी के लिए कम-से-कम 2, एक पब्लिक लिमिटेड कंपनी के लिए कम-से-कम 7, एक प्रोड्यूसर कंपनी के लिए कम-से-कम 10, तथा एकल व्यक्ति कंपनी के लिए केवल 1 व्यक्ति की आवश्यकता होती है। इसी प्रकार, एक प्राइवेट लिमिटेड कंपनी के लिए अधिकतम सदस्य संख्या 200, एक पब्लिक लिमिटेड कंपनी के लिए असीमित तथा एकल व्यक्ति कंपनी में अधिकतम सदस्य संख्या सिर्फ 1 होती है। एक प्राइवेट लिमिटेड कंपनी में कम-से-कम 2 निदेशक, एक पब्लिक कंपनी में कम-से-कम 3 निदेशक तथा एकल व्यक्ति कंपनी में कम-से-कम 1 निदेशक का होना अनिवार्य है। लेकिन इन सभी कंपनियों में निदेशकों की अधिकतम संख्या 15 से अधिक नहीं हो सकेगी। किंतु कंपनी विशेष संकल्प

द्वारा 15 से अधिक निदेशकों की नियुक्ति कर सकेगी। कंपनी के ऐसे वर्ग या वर्गों में, जो विहित किए जाएं, कम-से-कम एक महिला निदेशक होगी। प्रत्येक कंपनी में एक ऐसा निदेशक रखा जाएगा जिसने भारत में पूर्व कैलेंडर वर्ष में 182 दिन की अवधि से अनधिक के लिए निवास किया है। कंपनी अधिनियम के अनुसार एकल व्यक्ति कंपनी की दशा में जब तक संगम अनुच्छेद में निदेशक का अलग से प्रावधान न किया जाए तब तक वह एक सदस्य ही एक निदेशक के रूप में होगा। एक मात्र अंशधारक होने के नाते एकल व्यक्ति कंपनी में सदस्यों का साधारण अधिवेशन चाहे वार्षिक साधारण अधिवेशन हो अथवा असाधारण सामान्य अधिवेशन हो, की कोई आवश्यकता नहीं होती है। एकल व्यक्ति कंपनी की दशा में आधे कैलेंडर वर्ष में कम-से-कम एक बार निदेशक बोर्ड (बोर्ड ऑफ डायरेक्टर) की बैठक होगी तथा 2 बैठक (मिटिंग) के बीच में 90 दिन से कम का अंतराल नहीं होना चाहिए। जहाँ निदेशक बोर्ड में केवल एक ही निदेशक है वहाँ धारा 174 के अधीन किसी गणपूर्ति (कोरम) की कोई आवश्यकता नहीं होती है।

(3) अमृत काल में भारतीय कंपनी विधि की भूमिका

अमृत काल का लक्ष्य भारत को एक समृद्ध, आत्मनिर्भर, और सशक्त राष्ट्र के रूप में उभारना है। इस लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए कंपनी विधि की महत्त्वपूर्ण भूमिका है। यह विधि न केवल कॉर्पोरेट गवर्नेंस को सशक्त बनाएगी, बल्कि आर्थिक वृद्धि, नवाचार, और रोजगार सृजन को भी प्रोत्साहित करेगी।

1. **आर्थिक विकास में योगदान :** भारतीय कंपनी विधि का उद्देश्य कंपनियों के संचालन को सरल बनाना और व्यापारिक विकास को प्रोत्साहित करना है। अमृत काल के दौरान, भारत को दुनिया के सबसे बड़े आर्थिक हब के रूप में स्थापित करने के लिए आवश्यक है कि कंपनियों को आसानी से व्यापार करने के लिए उचित कानूनी ढाँचा प्रदान किया जाए। इसके लिए कंपनी पंजीकरण प्रक्रिया को और सरल और डिजिटल बनाया जा रहा है, तथा व्यापार करने में आसानी के लिए कानूनी प्रक्रियाओं को गति दी जा रही है।
2. **लिंग समानता और महिला सशक्तिकरण :** अमृत काल में महिलाओं की भागीदारी को बढ़ाने के लिए कंपनी अधिनियम में महिला निदेशकों की नियुक्ति को प्रोत्साहित किया गया है। लिस्टेड कंपनियों और बड़े संगठनों में महिला निदेशकों की नियुक्ति अनिवार्य की गई है। यह प्रावधान महिला सशक्तिकरण की दिशा में एक महत्त्वपूर्ण कदम है और इससे महिलाओं को नेतृत्व के अवसर मिल रहे हैं।
3. **एमएसएमई और स्टार्टअप्स का विकास :** अमृत काल में एमएसएमई (सूक्ष्म, लघु, और मध्यम उद्यम) और स्टार्टअप्स को भारतीय अर्थव्यवस्था का मुख्य स्तंभ माना गया है। भारतीय कंपनी विधि ने एमएसएमई और स्टार्टअप्स को सशक्त बनाने के लिए कई

प्रावधान किए हैं, जैसे; सरल और त्वरित पंजीकरण प्रक्रियाएँ, टैक्स छूट और वित्तीय सहायता योजनाएँ एवं निवेश के अवसरों को प्रोत्साहित करने के लिए नई नीतियों की शुरुआत आदि।

4. **डिजिटलाइजेशन और कॉर्पोरेट नवाचार :** डिजिटल भारत अभियान के तहत कंपनी अधिनियम को डिजिटल प्रक्रियाओं के साथ जोड़ा गया है। पेपरलेस डॉक्यूमेंटेशन, डिजिटल सिग्नेचर, और ऑनलाइन फाइलिंग जैसी प्रक्रियाओं ने व्यापार को आसान बना दिया है। अमृत काल में डिजिटल तकनीकों का व्यापक उपयोग कंपनियों की दक्षता और पारदर्शिता को बढ़ाने में मदद करेगा।
5. **ग्रीन ग्रोथ और स्थिरता :** अमृत काल के लक्ष्यों में 'ग्रीन ग्रोथ' एक प्रमुख स्थान रखता है। भारतीय कंपनी विधि में पर्यावरणीय जिम्मेदारियों को शामिल कर, कंपनियों को यह सुनिश्चित करना होगा कि वे अपने संचालन में पर्यावरणीय नियमों का पालन करें। इसका उद्देश्य दीर्घकालिक स्थिरता और पर्यावरणीय संतुलन को बनाए रखना है।
6. **ईएसजी (पर्यावरण, सामाजिक और शासन) :** कंपनी विधि के तहत, कंपनियों को अब पर्यावरणीय, सामाजिक, और गवर्नेंस मानदंडों का पालन करना आवश्यक हो गया है। अमृत काल में, भारत के हरित विकास लक्ष्यों के साथ ईएसजी नीतियों का अनुपालन अत्यधिक महत्त्वपूर्ण हो गया है, जिससे न केवल पर्यावरणीय स्थिरता सुनिश्चित हो सकेगी, बल्कि कंपनियों को वैश्विक निवेश आकर्षित करने में भी मदद मिलेगी।

(4) भविष्य की चुनौतियाँ और संभावनाएँ

अमृत काल में भारतीय कंपनी विधि की भूमिका महत्त्वपूर्ण है, लेकिन कुछ चुनौतियाँ भी होंगी, जिनका समाधान करना आवश्यक है --

कानूनी ढाँचे का सरलीकरण : कंपनी अधिनियम को सरल और प्रभावी बनाने की आवश्यकता है ताकि छोटे और मध्यम उद्यम भी आसानी से इसका पालन कर सकें।

कॉर्पोरेट गवर्नेंस में सुधार : कंपनियों के संचालन में पारदर्शिता और नैतिकता को बनाए रखने के लिए लगातार निगरानी और सुधार आवश्यक है।

विनियामक चुनौतियाँ : कंपनियों के लिए नियामक प्रक्रियाओं को त्वरित और पारदर्शी बनाने की आवश्यकता है ताकि वे आसानी से विकास कर सकें।

निष्कर्ष

अमृत काल का उद्देश्य भारत को वैश्विक आर्थिक महाशक्ति के रूप में स्थापित करना है, और इसके लिए भारतीय कंपनी विधि की भूमिका अत्यधिक महत्त्वपूर्ण होगी। कंपनी अधिनियम, 2013 ने भारतीय कॉर्पोरेट जगत को एक मजबूत कानूनी ढाँचा प्रदान किया है, जो पारदर्शिता, निवेशकों की सुरक्षा, और व्यापारिक विकास को प्राथमिकता देता है। अमृत काल में यह अधिनियम भारत के आर्थिक, सामाजिक, और तकनीकी विकास के मार्ग को

प्रशस्त करेगा और देश को वैश्विक प्रतिस्पर्धा में अग्रणी बनाएगा। इसी अनुक्रम में एकल व्यक्ति कंपनी के अंतर्गत एकल व्यक्ति कंपनी का प्रावधान किया गया है जिसमें केवल एक ही व्यक्ति सदस्य होगा तथा साथ-ही-साथ वहीं व्यक्ति निदेशक भी हो सकता है। इसके अतिरिक्त, कंपनी चाहे तो एक से अधिक निदेशकों की भी नियुक्ति कर सकती है। एकल व्यक्ति कंपनी की प्रमुख विशेषता यह भी है कि वह पब्लिक या प्राइवेट लिमिटेड कंपनी में भी रूपांतरित की जा सकती है। इसके अतिरिक्त एक लाभ यह भी है कि इस कंपनी का दायित्व सीमित होता है। इसी प्रकार भारत एक आर्थिक महाशक्ति के रूप में अपने देश के साथ-साथ विश्व का भी आर्थिक मदद करता है। भारत में कारपोरेट कंपनियाँ सीएसआर के माध्यम से भूख, निर्धनता और कुपोषण का उन्मूलन का कार्य, शिक्षा जिसमें विशेष शिक्षा और विशेषतः बालकों, स्त्रियों, वयोवृद्धों, अन्य रूप से समर्थ व्यक्तियों के बीच व्यावसायिक कौशल बढ़ाने संबंधी नियोजन और जीविका की बढ़ोत्तरी संबंधी परियोजनाएँ का संवर्धन, लैंगिक समता, स्त्री सशक्तीकरण का संवर्धन, स्त्रियों और अनाथों के लिए गृहों और छात्रावासों का गठन, वरिष्ठ नागरिकों के लिए वृद्धाश्रमों हेतु कार्य करती हैं। इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि यह कंपनियों का स्वर्णिम काल है जिसमें कि कंपनियाँ जनहित एवं समाज के कल्याण का कार्य निरंतर कर रही हैं तथा भविष्य की चुनौतियों को पार करने हेतु उत्सुक हैं।

❑

संदर्भ

1. कंपनी अधिनियम, 1850
2. कंपनी अधिनियम, 1860
3. कंपनी अधिनियम, 1913
4. स्वतंत्र भारत की कपंनी अधिनियम, 1956
5. कंपनी अधिनियम, 2013

P.N. Kumar

Justice Delayed is Justice Denied

INTRODUCTION

Justice from God

· We, as human beings, have two caretakers who fulfill our needs for love, care, and protection: one is God, who has granted us life, and the other is the government of the country to which we belong. We all expect that both of our caretakers ensure our well-being within society and protect us whenever someone attempts to violate our rights or take something that rightfully belongs to us. Additionally, if someone is causing us harm or threatening our lives, we hope for intervention.

· Does God fulfill our desires and needs exactly when we desire them? He is invisible and all powerful, making it impossible for us to express resentment or protest directly to Him. Crying out would be futile; instead, we must accept that events are predestined. God is the ultimate lawmaker and judge, with no higher authority to which we can appeal. Any justice served by Him is final, and there is no recourse for perceived wrongs or delays in justice

Justice from the state

· Our other caretaker is the government of the country. The government is responsible for facilitating employment opportunities, ensuring access to food, and also for administering punishment to those who violate our fundamental rights as guaranteed by the constitution or through various protective measures outlined by law enforcement agencies such as the police and the military, among others. As citizens, we are entitled to seek relief from a judicial authority capable of determining what is just and unjust. These decisions are made based on valid laws and regulations passed by the Parliament to uphold our constitutional rights. This judicial body is known as the judiciary, which is broadly divided into District Courts, High Courts, and the Supreme Court.

· Besides these bodies, there are numerous law tribunals covering various areas such as finance, banking, customs, income tax, etc. Additionally, there are small courts at each district and tehsil level to assist people in resolving land and other disputes. Furthermore, bodies like the Council of Arbitration and many

alternative dispute resolution (ADR) bodies provide affordable, efficient, and convenient dispute resolution services. At the village level, there are countless courts known as the Court of Sarpanch. With such a vast array of adjudicating bodies in the country, they determine the facts of each case, gather evidence from both parties, and issue judgments or facilitate compromise agreements.

In cases where disputes are not resolved at the local level, they may be escalated to district level courts by the dissatisfied party.

Pendency of court cases

· The issue of pending court cases is deeply concerning and discouraging. The Union Minister of Law informed the Honorable Rajya Sabha that there are 5.2 crore pending cases in the district, high courts, and the Supreme Court. If we include pending cases in tribunals and other adjudicating courts, the total number could be even higher, exceeding 10 crores. This backlog is viewed as a serious and alarming problem, indicating that our courts are failing to deliver timely justice. Many cases have been pending for over 10 years, a duration too long for many to wait for justice in their lifetime. It is often said that justice delayed is justice denied. The root causes of this situation are attributed to the government, legislative bodies, judiciary, law enforcement agencies, and regulatory bodies, all of which have failed to instill moral and ethical behavior in the populace. The lack of fear and seriousness regarding the consequences of breaking laws, as well as the penalties and punishments, are major contributing factors.

· According to the National Judicial Grid data, there are more than one lakh cases that have been lingering on the register for over 30 years. Out of the total civil and criminal cases, over 68 percent of civil cases and 72 percent of cases have been pending for more than one year out of a total of 3.20 crore cases, constituting about 70 percent of the total. It is noteworthy to mention that there are 2,169,118 civil and 677,430 criminal cases filed by senior citizens, and 1,748,299 civil and 1,901,192 criminal cases filed by women. The question of how many of these litigants are surviving today, and how many have fallen into poverty, looms large.

· In India, besides Supreme Court we have 25 High courts. Some states and UT do not have high courts. There are about 700 hundred District Courts and many Lok Adalats, Small Causes Resolution courts. Over five lacs qualified lawyers/ advocates are assisting the courts, only1500 advocates are AOR for Supreme Court. The point of disappointment is that out of about 1200 sanctioned strength of judges, only 850 are on seat. Similarly out of 25000 or so, District court judges, there are 19500 on seat. On average 30 percent seats are vacant .This depressing situation can convert into tolerate position if atleast 20 percent of vacancies are filled up in next two years.

· As India is a federal state, there are numerous cases related to disputes between states or cases that are directly elevated to the High Court and

Supreme Court. The Supreme Court has to address cases of appeal arising from tribunal orders and decisions of statutory bodies. Additionally, it entertains disputes between Indians and foreigners, which often require lengthy proceedings and the formation of larger benches. In summary, the backlog is growing because incoming cases outnumber outgoing cases.

Causes of problems of pendency

· The current state of backlog is a natural consequence of several factors:

- The number of cases is increasing due to population growth and the proliferation of business entities.
- People are more litigious now, being better educated and more aware of their rights compared to the past.
- Trust in settling disputes through local authorities like Panchayats or district magistrates has diminished due to perceived bias or corruption.
- More cases are being brought to court from PSU (Public Sector Undertakings) or government departments, even if a lower court has ruled in favor of an individual, as they seek validation from higher courts to avoid perceived favoritism.
- Cases remain on the register if bail is granted or proceedings are stayed until final hearings are completed.
- Interim orders or reliefs prolong cases until the opposite party requests the cancellation of bail or the reversal of stay orders.
- Multiple complaints against one authority result in separate cases, although similar cases may be heard together during proceedings.
- The number of cases increases when individuals file Public Interest Litigations (PILs) for media attention.
- Some cases arise from the court's own initiative to protect the interests of the public or to provide legal aid to the poor and underprivileged.
- Overloaded cause lists result in cases spilling over to future dates.
- Some cases are only partly heard, leading to indefinite adjournments. ? Judges may lack sufficient time to properly dictate orders or proceedings, leading to errors in decision-making.
- Changes in the roster of judges require arguments to be presented anew, causing inconvenience to clients and lawyers and impacting judicial productivity. ? Cases may remain pending until orders are formally issued, leading to unnecessary delays.
- Holidays and shorter working days contribute to increased case pendency.
- Some judges sit on multiple benches simultaneously, reducing their

efficiency in resolving cases.

- Various miscellaneous reasons, such as delays in case registration or providing clerical services, also contribute to litigant dissatisfaction.
- Lawyers also bear responsibility for delays in expediting case settlements. While some adjournments may be warranted due to genuine health or family reasons, lawyers sometimes seek adjournments on false pretenses or due to their involvement in other cases within the same court premises. Additionally, lawyers may displease clients by charging high fees or exhibiting greediness, thereby hindering the client's ability to engage another lawyer even if they recognize the lawyer's avarice. Lawyers may charge fees for dates when no effective hearing occurs, further impeding the delivery of justice to the litigant.

Other facets of justice

· What justice is expected by the complainant remains a crucial question. When a case is brought before the court, the complainant asserts that their case is genuine and requests the court to rule in their favor or, in criminal cases, for their acquittal. Essentially, they seek a decision in their favor against the other party, and it's the court's responsibility to determine who is right and who is wrong. In such matters, there's typically no room for compromise or reconciliation. Even if the complainant wishes to withdraw their First Information Report (FIR), the court does not simply close the case.

· The petitioner seeks an order of relief from the higher court without it being challenged by the opposing party. This order should be issued by a duly authorized judge with proper jurisdiction, as an order from any other judge could be contested. The desired justice comes from a judge who is impartial, without personal interests in the case, treating all parties equally without favoritism toward the wealthy, high officials, or celebrities. The ideal judge is one known for their knowledge and integrity.

· Justice, in essence, is the consistent and unwavering commitment to granting each individual their rightful due. It's often depicted as blind, signifying that the court should only consider litigants based on the claims presented in court, without regard to their personal characteristics.

·A judge delivering a judgment should possess both wisdom to ensure their decisions are meaningful and conscience to ensure fairness, lest they become bland or unjust.

·A just judgment is not only morally right but also legally sound, derived solely from a correct interpretation of the law. While all judges may not possess the same level of talent and wisdom, judgments from lower courts can be reviewed by a senior judge or a panel of judges to ensure fairness. This review process can continue until a final order is issued.

Relevance of law at the time

· As time progresses and knowledge and skills advance, judgments made today may be subject to review at a later date by the same court or a different panel of judges. Such reviews are essential to uphold the principles of justice and the rule of law.

· Final justice is akin to the decisions taken by a divine entity, beyond questioning or dispute. · Other facets of justice include:

· Accessibility of Courts: It is the responsibility of the caretaker government to ensure that courts are easily accessible to all, regardless of wealth or status. Filing fees should be nominal, and rates for advocates should be regulated based on the value of the case or the court where it is being heard.

· Legal Advisory Services: The caretaker government should provide proper guidance to litigants, protecting them from exploitation by unscrupulous agents. Legal advisory bodies can assist litigants in choosing the correct path and understanding the strengths and weaknesses of their cases before entering court.

· Expedited Judgments: There's an expectation among litigants that judges should promptly hear and conclude cases. However, the Latin maxim "It is the duty of the judge to finish the work of each day within the day" has lost relevance, with judgments often reserved for months, leading to disappointment among litigants.

· The overarching principle is that justice entails providing the right remedy at the right time and at minimal cost, analogous to giving food to a hungry person before they starve, rather than after they perish. Any reward to a capable individual after poverty has ravaged them is devoid of meaning.

In light of these considerations, it's aptly stated that justice delayed is tantamount to justice denied.

The responsibility for this malady can be attributed to various factors, including bureaucratic inefficiencies, judicial backlog, and procedural complexities within the legal system.

Resolution of the pendency problem

· The responsibility for addressing the backlog of cases and improving the efficiency of the judicial system lies primarily with the government. Here are some steps the government should take:

- **Expansion of Infrastructure :** The government should invest in expanding court infrastructure, providing adequate facilities for judges, staff, and advocates. New court complexes should be built in areas with expanding populations to ensure accessibility for litigants and legal professionals.
- **Appointment of Judges :** There should be an increase in the number of judges to match the growing caseload. Vacancies in high courts and

district courts should be filled promptly to ensure that cases are heard without unnecessary delays.

- **Setting Targets for Judges :** Judges should be given specific targets to achieve each month and season to ensure the timely disposal of cases. Efforts should be made to clear the daily cause list, reducing the need for cases to spill over to subsequent dates.
- **Modernization of Laws :** The government should modernize and adapt laws to the current societal needs and cultural context. The legal framework should reflect the values and requirements of a democratic and free country.
- **Language Accessibility :** Efforts should be made to ensure that legal proceedings and documents are accessible in languages understood by the majority of the population. This would reduce the need for interpretation and facilitate better understanding of legal processes.
- **Streamlining Law Enforcement :** Law enforcement agencies should be directed to handle complaints and investigations efficiently. Delays in filing FIRs, charge sheets, or providing protection to complainants can lead to further delays and injustice.
- **Public Awareness and Legal Advisory Services :** The government should provide legal advisory services to help litigants understand their rights and navigate the legal system effectively. This would reduce the likelihood of individuals being misled or exploited by unscrupulous agents.
- **Budget Allocation :** Sufficient funds should be allocated to improve court infrastructure, appoint more judges, and modernize the legal system. This expenditure should be considered as essential for the welfare of society, similar to investments in healthcare and education.
- Introducing new technologies of lower court including Artificial intelligence to filter and screen cases Writing of judgements Servicing of notices and other administrative processes.
- High courts and supreme courts to monitor the processes, category wise, and give lead to Fast Track courts, particularly in criminal cases of of MLA / M P, FERA. Frauds identified by CBI and ED, and reinforce special investigative officers, and fix time line for trials, judgements
- Need of tough screening of cases before admission ,by junior judicial officers. ? Encouraging the parties to compromise / withdrawing the cases without damaging the credibility of principles of law.
- Cases which should be settled under Arbitration Law should be discouraged to reach the courts which unnecessarily increase the pendency number.

· Addressing these issues would not only reduce the backlog of cases but also ensure that justice is delivered in a timely and efficient manner, ultimately

benefiting all stakeholders in the legal system.

In summary, government inefficiencies in court procedures, which have persisted for over a century, are primarily responsible for the dysfunction within the court system.

Conclusion

There's a pressing need to harmonize strict legal principles with human empathy and compassion, especially towards the elderly, women, and the economically disadvantaged. Justice should encompass not just legal interpretations but also mental and emotional satisfaction for individuals.

Overcrowding in Indian jails not only compromises proper treatment for prisoners but also strains state government finances. This situation reflects injustice towards both the alleged accused and the government.

Chief Justice D.Y. Chandrachud, speaking at a conference on India's evolving criminal justice system, highlighted the importance of newly enacted criminal laws in reforming legal practices. He emphasized the significance of audio-visual recording of search and seizures to safeguard citizens' rights against procedural irregularities, marking a progressive step towards dispensing justice.

A landmark judgment by the Mumbai High Court, granting bail to Mr. Rana Kapoor, Chairman of Yes Bank, underscored the principle that individuals cannot be indefinitely detained without trial. It is hoped that more individuals will be released based on this principle.

The BJP's election manifesto expressing intent to revise the National Litigation Policy to expedite court case resolutions is a positive development. This initiative reflects a commitment to improving the efficiency of the legal system and ensuring timely justice for all.

Among the black clouds of negative perception about the harmony between the Government and Judiciary, hovering on the sky as on date, there appears some silver lining of hope, which would surely lead all policy makers and policy executors in harmonising and blending, their joint coordinated efforts to usher in the era of justice from our Government of India.

❑

Niti Nipuna Saxena

Women's Safety and Participation at Work Place

In 1973, at the renowned King Edward Memorial Hospital in Mumbai, a cleaning worker sexually assaulted a female nurse named Aruna Shanbaug. He strangled her with a dog chain and raped her, leaving her for dead. As a result of the assault, Aruna's entire body became paralyzed and she remained in a vegetative state for the next 41 years. Nurses at the hospital took care of her all those years. An incident of similar brutality with a trainee doctor in Kolkata serves as a testament that, even 51 years later, nothing has changed.

The issue of women's safety at the workplace has once again come into sharp focus. Such incidents are among the main factors affecting women's participation in the workforce. Among G-20 countries, India has one of the lowest rates of female workforce participation. This rate has only declined over the years; it was 30% in 2004 and dropped to 20% by 2017. Although, there has been some improvement in the years following COVID-19, various factors related to supply and demand are responsible for this decline. One such factor is employers' reluctance to hire women, whether in blue-collar manufacturing sectors or white-collar service sectors. Another factor on the demand side is the implementation of women-friendly laws, such as the national maternity leave law, which has resulted in fewer women being hired rather than more.

Regarding workplace safety, according to the National Crime Records Bureau, gender-based crimes have increased by 20% in the past four years. However, this assessment is likely low because most crimes go unreported due to fear of retaliation, the risk of the victim's identity being exposed, and a lack of trust in police investigations. The investigation into a case of brutality at a Kolkata hospital in 2001 showed how negligence had increased over time, and the perpetrator was not punished. Additionally, the tendency to blame the victim, along with prejudiced or hostile attitudes towards women, are factors that discourage victims from filing complaints.

Research by Tanika Chakraborty and Nafees Lohawala in 2021 noted the impact of the fear of violence on female workforce participation. Their paper stated that in a district, an additional crime per 1,000 women can significantly reduce the likelihood of approximately 32 women joining the workforce. Despite stricter laws against sexual violence following the Nirbhaya case, such crimes

have not stopped. These crimes also have a detrimental effect on India's economy. On the whole, India overlooks the immense potential for development of its demographic capital. If women have to constantly struggle with threats of sexual violence or concerns about their safety, their participation in the workforce will always be a disappointing aspect.

Following the Kolkata incident, the country is once again agitated. Candle marches and protests are taking place not only in Bengal but across many states in the country in protest of the rape and murder of a trainee doctor. The seriousness of the situation can be gauged by the fact that the Supreme Court, while forming a National Task Force for suggestions on the safety of doctors and healthcare workers, made strict comments on the system. Such public outrage has not been seen since 2012 when a girl was brutally raped and murdered in Delhi's capital in a case that became known as the Nirbhaya case, which shook the entire nation. In response to the demand for justice for Nirbhaya and punishment for the culprits, not only Delhi but many other parts of the country saw candlelight marches and protests. The result of this public pressure was stricter provisions in the rape laws, but it cannot be claimed that the situation has improved.

It is not difficult to understand that in our corrupt police system, the authorities are often ineffective in reaching the real culprits, which causes fear only in the common man. Even in the Kolkata rape case, the administration of the concerned medical college and hospital came under suspicion for the delay in registering the report after such a heinous crime. The resignation and subsequent appointment of the principal in another college also put the state government in a questionable position. The Supreme Court also gave stern advice to avoid the use of force in protests on both matters, indicating that what happened at this medical college and hospital in Kolkata is a disgrace to the nation and society.

However, our politicians, with their narrow perspectives, fail to see beyond their politics. The Kolkata incident is certainly the result of the failure of Mamata Banerjee's government, but incidents of rape are not limited to one state. Recently, in a rape case in Uttar Pradesh, it was reported that the accused was a leader of the opposition Samajwadi Party, but it was not mentioned which party's favourite son was accused of rape at BHU. Recently, in Badlapur, Maharashtra, an incident came to light where two innocent girls were sexually harassed by school employees. There too, the government system appeared to act against the protesters rather than the culprits. If the police spent even 10% of their effort on ensuring law and order and public safety, rather than exerting force against protestors, there would certainly be a significant reduction in such incidents.

After the Nirbhaya case, stricter provisions in rape laws were introduced, and fast-track courts were also mentioned. Although some cases have seen swift justice, they remain exceptions rather than the norm. In the 1992 Ajmer

case, involving the sexual exploitation of more than 100 girls through obscene photographs, the special court's decision came 32 years later, in 2024, sentencing six convicts to life imprisonment along with fines. Naturally, this decision will be challenged in the High Court, followed by the Supreme Court, meaning there will be a prolonged wait for a final verdict. Thus, the question remains unanswered: Considering the concept that delayed justice is akin to denied justice, does our system deliver justice to the victims and punishment to the culprits?

Continuous efforts are being made to improve and make the policing system in the state more responsible, with substantial budgets being spent. Yet, such incidents keep emerging at regular intervals, exposing the insensitivity of the police system. In the past few months, several incidents have occurred in major cities like Bhopal, Indore, and Gwalior, as well as in prominent tribal districts like Jhabua, Alirajpur, Dhar, and Barwani, which have been shameful. In Dhar, a tribal woman was beaten and dragged publicly, but the police never reached the scene. The incident was captured on video and went viral, revealing the hollowness of claims about women's safety. Similarly, after a video of tourists being beaten up at the Haathi Pawa hills, a tourist site in Jhabua, went viral, the forest department took notice.

The terror tactics of liquor contractors' goons in Alirajpur also came to light through a video. All these incidents took place in broad daylight in locations easily accessible to the police. The incidents in Indore, known for its ideal policing, have raised several questions.A tribal youth was brutally beaten, made to clean shoes, and was humiliated by being forced to make belts. Indore is a city where people from almost every district come seeking employment and have been living there for years, considering it their second home. But this incident has tarnished Indore's image. All these incidents happened in public areas, and the police did not even receive information. If these incidents had not been captured on CCTV, the police system might have continued to deny the complaints, and the criminals would have confidently committed their next crime. Despite the ongoing efforts to improve policing, why is swift action not taken in such cases? It took three days for the Alirajpur police to find the accused, a whole week in Jhabua, and in Indore, the police tried to hush up the matter until public pressure forced them to parade the accused. There is a need for prompt action in such incidents, not just on paper but in reality, to implement an ideal policing system.

The relationship of empathy is not limited to the world of literature and art alone; it relates to every person who is thoughtful, humane, and feels the pain of others. Empathy means feeling and experiencing pain. Unfortunately, such heinous incidents continue to increase, causing us extreme shame. Whether it is the recent case of the rape and murder of a female resident doctor in Kolkata or the incident in Andhra Pradesh a few months ago where a minor girl was raped by her minor friends and then murdered by her brother when the

secret was revealed—these are signs of a society becoming increasingly insensitive. The incident in Manipur, where a crowd paraded a naked woman and exhibited barbaric behaviour, also indicates that we are on a dangerous path. On one hand, we claim to be civilized and announce the greatness of human values; on the other hand, we become monstrous during riots. As humanity has climbed the ladder of civilization, the scope of empathy has expanded from family, neighbours, and villages to include animals and, slowly, the entire world.

We must keep this green plant of empathy alive and light the lamp of tolerance to prevent the spread of ignorance and darkness. The worrying thing is that hatred and violence have increased; jealousy, slander, false praise, and selfishness are on the rise. Morality has disappeared from school curricula, and money is valued everywhere, regardless of how it is earned. No one pays attention to the purity of means, and no one cares about the upliftment of all. Nuclear families are increasing, joint families are breaking apart, and the institution of marriage is under threat. As a result, individuals are becoming isolated, frustrated, and suffering from mental illnesses. Values like respect for relationships and honour are disappearing. Such destructive people are insensitive and self-centred, lacking a broad outlook and often committing crimes.

❑

Monil Dhabhai

Short Comings of the Fourth Estate Evaluating the Blemishes with Reference to India

Introduction

The media derive significant power from the Constitution of India. The Constitution of India in Article 19(1) (a) lays down that "All citizens shall have the right, to freedom of speech & expression". However, it is now well settled that the words "speech & expression" in this Article include the freedom of the press also. Article 19(1)(a) of the Constitution is subject to certain restrictions laid down in Article 19(2) of the Constitution. These grounds of restrictions include – "Sovereignty and integrity of India, the security of the State, friendly relations with foreign States, public order, decency or morality, contempt of Court and defamation or incitement to an offence".

The press in India as we know it today owes its existence to the pioneering efforts of James Augustus Hicky, the luminary behind the first printed newspaper in India, 'Hicky's Bengal Gazette'. While this may have been the first paper to be printed in India, the evidence of media can be traced back to the times of Ashoka

(c. 273-236 BCE) where much like the news content in modern media, rules and regulations used to be engraved on Rock Edicts. To have come as far as electronic news interfaces since those times is an indication of the developments in science and technology over the years. The social platform 'Twitter' is an example of this development; a means of instantaneous, uncensored communication, between people from all walks of life, all over the globe. Eminent personalities, such as Donald Trump, use Twitter to reach out more easily. As science and technology developed, so did the press and its freedoms.

Research Method

Research methodology is the systematic problem analysis, model building and fact finding for the purpose or improved decision making. It is the collection summary and analysis of data regarding goods and services it helps in deciding

the nature and trend demand.

The outline of the research methodology that was used in this study. It focuses on the research objectives, research design, sampling design data collection methods, research instruments that were used.

The objective of Research is

1. To study the Fourth estate .
2. To study whether it is working in India or not.

For the purpose of conducting the study exploratory and descriptive research design is adopted to make the study meaningful.

The sample size is 50 students of Udaipur. The sample is collected by convenience sampling. A questionnaire is prepared and distributed to respondents to secure responses to certain questions. It is a device for securing answers, questions by using a form which the respondent fills by himself. It is a systematic compilation of questions that are submitted to a sample drawn from the population from which information is desired.

The data collection tools used for the study were both primary and secondary data.

The primary data was collected through questionnaire method and secondary data was collected through newspapers, journals, published articles and websites.

Research Hypothesis:

The actions of Media, its current trajectory as well as its conduct is contrary to the principles of the fourth estate.

Origin of the forth Estate:

The term fourth estate has been around for centuries. In Europe, going back to medieval times, the people who participated in the political life of a country were generally divided into three classes or estates. In England, they were the three groups with representation in Parliament, namely, the nobility, the clergy, and the common people. Some other group, like the mob or the public press, that had an unofficial but often great influence on public affairs, was called the fourth estate. In the 19th century, fourth estate came to refer exclusively to the press, and now it's applied to all branches of the news media.

As early as 1843 Lord Macaulay stated : 'The gallery in which the reporters sit has become a fourth estate of the realm'. The term Fourth Estate or fourth power refers to the press and news media both in explicit capacity of advocacy and implicit ability to frame political issues.

Oscar wilde wrote: In old days men had the rack. Now they have the Press. That is an improvement certainly. But still it is very bad, and wrong, and demoralizing. Somebody — was it Burke? — called journalism the fourth estate. That was true at the time, no doubt. But at the present moment, it is

the only estate. It has eaten up the other three. The Lords Temporal say nothing, the Lords Spiritual have nothing to say, and the House of Commons has nothing to say and says it. We are dominated by Journalism.

Media:

Media is the means of communication that reaches or influences people widely and has a significant place in the statecraft machinery especially in the age of information revolution.

The term *media* defines a number of different communication formats from television media, which share information through broadcast airwaves, to print media, which rely on printed documents. The collection of all forms of media that communicate information to the general public is called mass media, including television, print, radio, and Internet.

It is the 'fourth estate' which helps the state to further its interests, objectives and goals. Therefore, the media acts as an influential and instrumental tool with regards to building confidence or promoting mistrust among people on issues related to national security.

Role of Media:

The work of the news media differs from public relations, which is communication carried out to improve the image of companies, organizations, or candidates for office. The role of media is to ensure that the people are aware of the social, economic, political developments taking place around them. In performing its role in spreading information, media also plays a pivotal function in creating public opinion. It holds significance in a democracy as a positive public opinion on any subject would mean legitimization and validation from the public. The present time is the era of technology. Today, a major part of our society is connected to a virtual mode of media. These modes include televisions, mobile phones and other devices.

Functions of Media:

The media exist to fill a number of functions. Whether the medium is a newspaper, a radio, or a television newscast, a corporation behind the scenes must bring in revenue and pay for the cost of the product. Revenue comes from advertising and sponsors, like McDonald's, Ford Motor Company, and other large corporations. But corporations will not pay for advertising if there are no viewers or readers. So all programs and publications need to entertain, inform, or interest the public and maintain a steady stream of consumers. In the end, what attracts viewers and advertisers is what survives.

Problems with Media:

Our country has more than 70,000 newspaper and 1600 satellite channels. Out of these newspaper and channels, almost all media houses are leaned towards a party or ideology.

In the present fast changing scenario of news media only those organisations and media houses who have generated huge TRP are given importance.

Some sections of Indian media, controlled by businessmen, Politicians, and government bureaucrats, are facing criticism for biased, motivated reporting, behave like one party owned or governing party owned and selective presentation.

Data analysis:

The data analysis is the process through which answers to various questions are arrived through statistical process. The questions are formulated in the light of objectives of the topic and the data analysis helps to prove the hypothesis.

The process of analysing data, using analytical and logical reasoning for each component and topic is applied and provided to arrive at the findings and the conclusion.

For this purpose fifty random middle aged people were selected keeping in view their interest in the press and their frequency of consumption.

1. Do you think media is reliable?

OPTIONS	RESPONSES
YES	32
NO	9
PARTIALLY	9

2. Do you think media twists the news in order to get views?

OPTIONS	RESPONSES
YES	35
NO	7
PARTIALLY	8

3. Do you think media is biased?

OPTIONS	RESPONSES
YES	28
NO	9
PARTIALLY	13

4. Do you think that there should be more strict laws to govern media?

OPTIONS	RESPONSES
YES	33
NO	10
MAY BE	7

5. How much of your news you get from conventional media sources?

26	25 %
19	50 %
5	100%

6. Do you think that there should be more strict laws to govern media?

OPTIONS	RESPONSES
YES	34
NO	11
MAY BE	5

7. Have you ever received information form media which was not reliable or not true?

OPTIONS	RESPONSES
YES	42
NO	8

8. Are you satisfied with the current state of media?

OPTIONS	RESPONSES
YES	3
NO	38
PARTIALLY	9

Conclusion :

Media can be surely termed as the fourth pillar of democracy. However, this pillar is not standing as strong in the present time as it used to be. It is the need of the hour to have a media which is free from all sort of prejudice and do the work freely and in an honest manner. The media should scrutinize the policies of the government critically from time to time and deliver honest information to every citizen of the country. Also, the government should provide adequate support to them and work in a harmonious manner with them. After it will be achieved, media can be termed as the fourth pillar of democracy in a true sense.

Suggestions :

It is suggested that there should be Strict enforcement of the law, Restricting political influence on media channels and funding for a media house must not be done by. any politician, businessmen, foreign nation. New law must be framed. There must be a quarterly audit.

❑

References

1. https://cis-india.org/internet-governance/blog/privacy/privacy-media-law
2. www.mib.nic.in – Ministry of Information and Broadcasting, Govt. Of India
3. http://www.trai.gov.in/ - Telecom Regulatory Authority of India
4. www.pib.nic.in – Press Information Bureau

5. https://rni.nic.in/ - Registrar of Newspapers for India
6. www.allindiaradio.org – All India Radio
7. www.ddindia.gov.in - Doordarshan
8. https://allindialegalforum.in/2021/07/09/is-media-the-fourth-pillar-of-democracy/
9. https://www.wilsoncenter.org/event/how-free-the-fourth-estate-discussion-about-indias-media-environment
10. Fourth Year Student, National University of Advanced Legal Studies, Kochi.
11. C.A. Rajkumar S. Adukia, Media Laws in India – An Overview, Taxguru (Mar 26, 2018)
12. H.R Khanna, Making of India's Constitution 92 (2nd ed. 2008).
13. Durga Das Basu, 2 Commentary on the Constitution of India 2571 (8th ed. 2007).
14. ManjunathPendakur, Mass media during the 1975 National Emergency in India, Can J Commun, Special Issue 41, 41 (1988).
15. Madabhushi Sridhar, The Mind Rigging By Media: Electoral Offences And Corrupt Practices, 1 M.L.R. 62, 62 (2010).
16. Manasa Patnam, Learning From Exit Polls In Sequential Elections, Ensae (Apr. 07, 2018)
17. Anjali Bhardwaj and Amrita Johri, Don't shoot the Messenger, The Hindu (Apr. 14, 2018)
18. The Telecom Regulatory Authority of India (Period for Filing of Application to Authority) Rules, 1999

लेखक मंडल

डॉ. अर्चना प्रकाश : गोमती नगर, लखनऊ

प्रो. (डॉ.) राकेश कुमार सिंह : प्रोफेसर एवं पूर्व संकायाध्यक्ष एवं विभागाध्यक्ष, विधि संकाय, लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ, (उ.प्र.)

डॉ. ममता चतुर्वेदी : एल.एल.एम., पी.एच.डी.(विधि), भूतपूर्व एसोसिएट प्रफेसर एवं डीन विधि विभाग, मगध विश्वविद्यालय, बोध गया, बिहार
भारत सरकार एवं विधि भारती परिषद (नई दिल्ली) द्वारा पुरस्कृत 'आधुनिक बीमा विधि की लेखिका तथा भारत सरकार (विधि एवं न्याय मंत्रालय) द्वारा पुरस्कृत, 'आधुनिक बैंकिंग विधि' की लेखिका

सन्तोष खन्ना : संपादक विधि भारती परिषद

डॉ. (श्री मति) विनय जैन : वरिष्ठ विशेषज्ञ, राज्य शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद, हरियाणा, गुरुग्राम 122001
डाक पता : श्री हितेश जैन, मकान नं. 131 पी, पार्ट 6, सेक्टर 5, नियर कम्युनिटी सेंटर, गुरुग्राम, हरियाणा
मोबाइल : 9811556668, **ई-मेल :** vinayjain5100@gmail.vom

डॉ. विदुषी भारद्वाज : 25, आवास विकास कॉलोनी, बिजनौर (उत्तर प्रदेश), **मोबाइल :** 7817998734

देवदत्त शर्मा : सेवा-निवृत्त एसोसिएट प्रोफेसर (विधि), डी.ए.वी.पी.जी. कॉलेज, लखनऊ
पता : सी-469/एफ, एम.आई.जी. डुप्लेक्स, इंदिरा नगर, लखनऊ, पिन-226016, **मोबाइल :** 9236003140

डॉ. दुष्यंत कुमार : सहायक आचार्य, विधि संकाय, भगवंत विश्वविद्यालय, अजमेर

मंगला प्रसाद पटेल : शोध छात्र, विधि संकाय, भगवंत विश्वविद्यालय, अजमेर

पुष्पा सिन्हा : पश्चिम विहार, नई दिल्ली

जगदीश चंद चौहान : उप-निदेशक (सेवा निवृत्त) लोक सभा सचिवालय, नई दिल्ली

नेहा राठी : निदेशक, राज्य सभा सचिवालय, नई दिल्ली

डॉ. अंजलि दीक्षित : सीनियर एसोसिएट प्रोफेसर ऑफ लॉ, एसओएल, लिंगया विद्यापीठ (मानित विश्वविद्यालय), फरीदाबाद, हरियाणा, विजिटिंग प्रोफेसर, विधि विभाग, केएएएफ यूनिवर्सिटी कॉलेज, गोमोआ फेतेह, काकराबा-कसोआ, घाना (पश्चिम अफ्रीका), **ई-मेल :** anjalidixitlexamicus@gmail.com

डॉ. भूमिका शर्मा : सहायक प्रोफेसर, शारदा स्कूल ऑफ लॉ, शारदा विश्वविद्यालय, ग्रेटर नोएडा

डॉ. (प्रो.) कोमल विग : डीन, यूएलआईएस, चंडीगढ़ विश्वविद्यालय

Dr. Nisha Kevaliya : Principal, Chameli Devi Institute of Law, Indore, M.P.

डॉ. विपिन कुमार सिंह : असिस्टेंट प्रोफेसर, जे.पी.एस. कॉलेज ऑफ लॉ, प्रयागराज
मोबाइल : 9335480740, 9415172160, **ईमेल :** vipsinghpp@gmail.com

P.N. Kumar : Corporate Legal Consultant, M.A. (English and Economics) LLB, FCS, Member ICA, ILI, **Mobile :** 9810263458, **E-mail :** pnk2001@gmail.com

Mrs. Niti Nipuna Saxena : HOD, (Law) Institute of Law & Legal Studies, Sage University, Indore

Monil Dhabhai : Guest Faculty, University College of Law, Mohanlal Sukhadia University, Udaipur